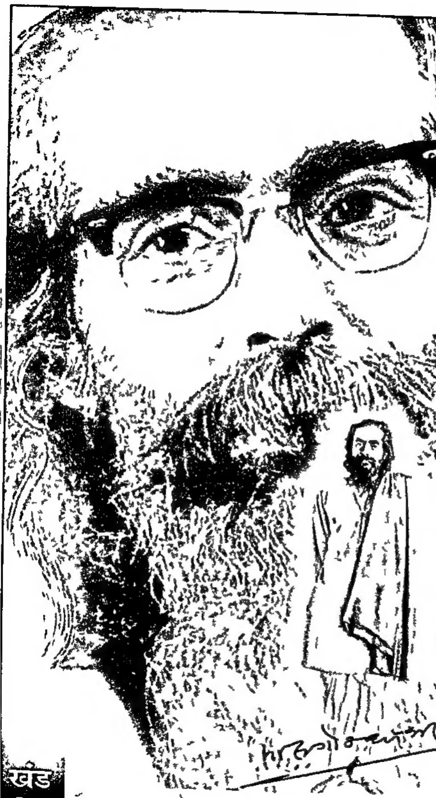

चन्द्रशेखर
खंड
१०
संघर्ष के प्रवाह में

स्वत्वाधिकार
डा हेडगेवार स्मारक समिति
डा हेडगेवार भवन
महाल नागपुर-४४००३२

प्रकाशक
सुरुचि प्रकाशन
देशबंधु गुप्ता मार्ग
नई दिल्ली-११००५५

प्रथम संस्करण
माघ कृष्ण एकादशी युगाब्द ५१०६

मुद्रक
गोपसन्स पेपर्स लि
नोएडा-२०१३०१

मूल्य प्रति सच
दो हजार रुपए



पारिभाषिक शब्द

सरसघचालक	–	सघ के मार्गदर्शक।
सरकार्यवाह	–	सघ के निर्वाचित सर्वोच्च पदाधिकारी।
सघचालक	–	स्थानीय कार्य व कार्यकर्ताओं के पालक।
मुख्यशिक्षक	–	नित्य चलनेवाली शाखा के कार्यक्रमों को सचालित करनेवाला।
कार्यवाह	–	शाखा क्षेत्र का प्रमुख।
गटनायक	–	शाखा क्षेत्र के एक छोटे भौगोलिक भाग का प्रमुख।
प्रचारक	–	सघकार्य हेतु पूर्णत समर्पित अवैतनिक कार्यकर्ता।
शाखा	–	सस्कार निर्माण हेतु नित्यप्रति का एकत्रीकरण।
उपशाखा	–	एक स्थान पर चलने वाली विभिन्न शाखाएँ।
बैठक	–	विचार-मथन व सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया हेतु एकत्र बैठने की प्रक्रिया।
बौद्धिक	–	वैचारिक प्रबोधन का कार्यक्रम भाषण।
समता	–	अनुशासन के प्रशिक्षण हेतु शारीरिक कार्यक्रम।
सपत्	–	कार्यक्रम प्रारभ करने हेतु स्वयसेवकों को निश्चित रचना में खडा करने की आज्ञा।
विकिर	–	शाखा–कार्यक्रम की समाप्ति की अतिम आज्ञा।
दड	–	लाठी।
चदन	–	एक साथ मिल-बैठकर जलपान करना।
सहभोज	–	अपने-अपने घर से लाए भोजन को एक साथ मिल-बैठकर करना।
शिविर	–	कैंप।
सघ शिक्षा वर्ग	–	सघ की कार्यपद्धति सिखाने हेतु क्रमबद्ध त्रिवर्षीय प्रशिक्षण योजना।
सार्वजनिक समारोप	–	शिविर तथा वर्ग का अतिम सार्वजनिक कार्यक्रम।
खासगी समारोप	–	वर्ग का केवल शिक्षार्थियों के लिए दीक्षात कार्यक्रम।

वक्तव्य

खड - १०

सघर्ष के प्रवाह मे

(सत्कार्य दुष्ट शक्तियो के लिए ईर्ष्या व भय का कारण बनते हैं। व्यक्तिगत सस्कार के माध्यम से समाज व राष्ट्र की उन्नति का सघ का निरपेक्ष कार्य भी इस प्रवृत्ति से अछूता न रह सका। इसलिए उसे नष्ट करने के हर सभव प्रयत्न हुए। इनका सामना तो करना ही पडा। वैसे राष्ट्र पर आई विपत्तियाँ भी सगठन नेतृत्व की परीक्षा होती है। इसी की तथाकथा इस खड मे प्रस्तुत है।

प्रतिबध-पर्व

सन् १९४८-४९ मे सघ को भीषण अग्निपरीक्षा से गुजरना पडा। सरकार ने प्रतिबध लगाकर सघ को जबरन समाप्त करने का कुत्सित प्रयत्न किया। इतना ही नही, इसके लिए तरह-तरह के राजनीतिक दाँव-पेच खेले। दमन के सारे तौर-तरीके अपनाए। ऐसे कठिन समय मे स्वयसेवको को साहस व धैर्य बँधाने, प्रतिबध हटाने के लिए यथासभव सभी प्रयत्न करने का भार जेल मे रहते हुए भी जिस स्थितप्रज्ञता व स्वाभिमान के साथ श्री गुरुजी ने किया, उसकी कल्पना उस समय सरकार से हुए पत्र-व्यवहार से की जा सकती है। वही पत्र-व्यवहार यहाँ प्रस्तुत है।

---

३० जनवरी १९४८ से १३ जुलाई १९४९ तक का कालखड श्री गुरुजी तथा राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के जीवन में कई दृष्टियों से 'अभूतपूर्व' कहा जा सकता है। सपूर्ण जगत् में श्रद्धास्पद माने गए महात्मा गाँधी जी की निर्घृण हत्या का आरोप लगाकर दिल्ली के शासनाधिष्ठित नेताओं ने १ फरवरी को श्री गुरुजी को कारागृह में बद कर दिया। ४ फरवरी १९४८ को केंद्रीय शासन ने राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर हिंसाचार का आरोप लगाते हुए उसे अवैध घोषित किया। उसके बाद देशभर में २० हजार से अधिक स्वयसेवकों को बदी बनाया गया। उनके साथ जेलों में अमानुषिक व्यवहार किया गया। यह असत्य प्रचार कर कि गाँधी जी का हत्यारा सघ का स्वयसेवक है, जनक्षोभ भडकाने का भी प्रयास किया गया। न्यायालयीन जाँच में यह सिद्ध हो जाने के बाद भी कि श्रद्धेय महात्मा जी की हत्या से श्री गुरुजी तथा सघ का बिल्कुल सबध नहीं है, सघ के विरुद्ध दमन-नीति जारी रखी गई। शासन से यह तर्कसगत माँग करने पर कि सघ पर लगाए

गए आरोपों की निष्पक्ष न्यायालयीन जाँच करवाकर उसपर लगाए आरोपों को सिद्ध किया जाए, अन्यथा प्रतिबंध उठाया जाए। इसके स्थान पर यह अनुचित परामर्श दिया गया कि संघ को कांग्रेस में विलीन हो जाना चाहिए। बड़े-बड़े कांग्रेसी नेताओं द्वारा सार्वजनिक रूप से यह धमकी दी गई कि यदि संघ ने सत्याग्रह किया तो उसे कुचल डालेंगे। अंत में साठ हजार से अधिक स्वयंसेवकों ने शांतिपूर्ण रीति से सत्याग्रह किया। फिर भी न्यायपूर्ण एवं तर्कसंगत रीति से कोई भी मार्ग निकालने का प्रयास शासन ने नहीं किया, बल्कि उसने ऐसी व्यवस्था की कि संघ की ओर से प्रकाशित साहित्य या श्री गुरुजी के वक्तव्य आदि समाचार-पत्रों में प्रकाशित न हों। शासन द्वारा संघ के विषय में समाचार-पत्र, रेडियो आदि प्रचार-तंत्र का दुरुपयोग कर विपरीत एवं झूठी बातें लोगों के सामने प्रस्तुत की गईं और ऐसा प्रयत्न किया गया कि जनता नकारात्मक रूप में ही संघ के बारे में सोचे।

पुणे के सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री ग वि केतकर और दक्षिण भारत के भीष्मपितामह चेन्नै के भूतपूर्व एडवोकेट जनरल तथा उदारमतवादी गणमान्य नेता श्री टी आर वेंकटराम शास्त्री जैसे महानुभावों की मध्यस्थता अंशत ही स्वीकार कर उनकी न्यायसंगत एवं सद्भावपूर्ण बातों की अवमानना की गई। बाद में दिल्ली निवासी पंडित मौलिचंद्र शर्मा को श्री गुरुजी द्वारा लिखे एक निजी पत्र, (जिसमें संघ के बारे में वही बातें, जो श्री गुरुजी ने पहले कई बार स्पष्ट की थीं), को आधार मानकर प्रतिबंध हटाया।

प्रतिबंध हटने के पश्चात् देश की राजधानी दिल्ली में लाखों की संख्या में जनता ने भावपूर्ण तथा अनुशासनपूर्ण रीति से श्री गुरुजी का स्वागत किया। तत्पश्चात् वहाँ हुई सार्वजनिक स्वागत सभा, जिसमें लगभग ५ लाख लोग उपस्थित हुए थे, में श्री गुरुजी ने लोगों को संबोधित करते हुए कहा– 'दमनचक्र को भूल जाओ। जिन्होंने हम पर आघात किया, वे अपने ही हैं। असावधानी से अपने ही दाँतों ने अपनी ही जिव्हा को काट भी लिया तो हम अपने दाँतों को उखाड़ कर फेंक नहीं देते।'

वह कालखंड अत्यंत ही रोमहर्षक घटनाओं से परिपूर्ण है। पृष्ठ-संख्या की मर्यादा को ध्यान में रखकर कतिपय प्रमुख घटनाओं तथा श्री गुरुजी द्वारा समय-समय पर किए गए मार्गदर्शन का यहाँ उल्लेख किया गया है। अंत में श्री गुरुजी द्वारा लिखे आभार प्रदर्शन पत्रों का भी समावेश है।

सन् १९४८ के जनवरी मास के अंत में श्री गुरुजी आंध्र तथा तमिलनाडु के दौरे पर थे। इस क्रम में वे २९ जनवरी को चेन्नै पहुँचे थे।

३० जनवरी की सायकाल 'रामकृष्ण लच होम' के श्री अय्यर ने श्री गुरुजी के सम्मान में जलपान का आयोजन किया था। उसमें नगर के गणमान्य व्यक्तियों को निमन्त्रित किया गया था। कार्यक्रम अभी चल ही रहा था कि समाचार प्राप्त हुआ— 'आज सायकाल दिल्ली के बिरला भवन में जब महात्मा गाँधी प्रार्थना के लिए जा रहे थे, तब किसी ने गोली मारकर उनकी हत्या कर दी।' चाय की प्याली वैसी ही रखकर कुछ देर तक श्री गुरुजी चुप बैठे रहे। फिर तुरत कार्यक्रम स्थगित कर एग्मोर स्टेशन के पास सघचालक श्री राजगोपालाचारी के घर को चले गए। रात्रि में उन्हें विजयवाडा के लिए प्रस्थान करना था, अपना प्रवास निरस्त कर, अगली प्रात विमान से नागपुर लौट आए।

तार-सदेश

३० जनवरी को महात्मा गाँधी के निधन के सदर्भ मे श्री गुरुजी ने प नेहरू, सरदार पटेल तथा श्री देवदास गाँधी को सात्वनापरक सदेश तार से भेजे। (मूल अग्रेजी)

३० जनवरी १६४८

प्राणघातक क्रूर हमले के फलस्वरूप एक महान विभूति की दु खद हत्या का समाचार सुनकर मुझे बडा आघात लगा। वर्तमान कठिन परिस्थिति में इससे देश की अपरिमित हानि हुई है। अतुलनीय सगठक के तिरोधान से जो रिक्तता पैदा हुई है, उसे पूर्ण करने और जो गुरुतर भार कधों पर आ पडा है, उसे पूर्ण करने की सामर्थ्य भगवान हमें प्रदान करे।

मा स गोलवलकर

श्री गुरुजी ने भारत की सभी सघ-शाखाओ को महात्मा जी की स्मृति मे शाखा के दैनिक कार्यक्रम बद रखकर तेरह दिन शोक मनाने का आदेश ३० जनवरी को अग्रेजी मे भेजे अपने इस तार द्वारा दिया था—

३० जनवरी १६४८

'आदरणीय महात्मा जी की दु खद मृत्यु के निमित्त शोक प्रकट करने के लिए तेरह दिनों तक शोक-पालन किया जाए तथा दैनिक कार्यक्रम स्थगित रखे जाएँ।'

मा स गोलवलकर

श्री गुरुजी ने प नेहरू तथा सरदार पटेल को ३१ जनवरी को निम्नलिखित पत्र लिखकर अपने अत करण का दु ख प्रकट किया—

नागपुर, ३१ जनवरी १९४८

मान्यवर पडित जी,

कल चेन्नै में वह भयकर वार्ता सुनी कि किसी अविचारी भ्रष्ट-हृदय व्यक्ति ने पूज्य महात्मा जी पर गोली चलाकर उस महापुरुष के आकस्मिक असामयिक निधन का निर्घृण कृत्य किया। यह निद्य कृत्य ससार के सम्मुख अपने समाज पर कलक लगानेवाला हुआ है। यदि किसी शत्रु राष्ट्र के व्यक्ति द्वारा यह कृष्ण-कृत्य होता, तो भी असमर्थनीय होता, क्योंकि पूज्य महात्मा जी का जीवन किसी समुदाय विशेष की सीमा के ऊपर उठकर मानव समाज के हितार्थ समर्पित था। फिर इसी देश के निवासी से यह अनपेक्षित दुराचार हुआ देख प्रत्येक राष्ट्रीय का हृदय असहनीय वेदनाओं से व्यथित हो उठे, तो कोई आश्चर्य नहीं। जब से मैंने यह समाचार पाया, अत करण शून्य सा हो रहा है। निकट भविष्य की भीषणता देख इस श्रेष्ठ सयोजक के तिरोधान से हृदय चिता से भर गया है। विविध प्रवृत्तियों को एक सूत्र में पिरोकर उन्हें सन्मार्गगामी बनानेवाले कुशल कर्णधार पर यह आघात एक व्यक्ति से नहीं, किंतु सपूण देश से द्रोहपूण प्रतीत होता है। इस विद्रोही व्यक्ति के विषय में उचित व्यवहार आप आज के राज्य के सूत्रचालक करेंगे ही। यह व्यवहार कितना भी कठोर हो, तो भी घटित हानि की तुलना में वह सौम्य ही दिखेगा। इस बारे में कुछ कहना मेरा विषय नहीं है।

परतु अब अपनी सबकी परीक्षा है। युक्त भाव, रुचिर वाणी और राष्ट्रहितैक दृष्टि रखकर सब प्रवृत्तियों को एकत्रित कर इस कठिन समय में से राष्ट्र-नौका सुरक्षित आगे बढाने की जिम्मेदारी हम सब लोगों पर है। इसी वृत्ति से चलनेवाले सगठन की ओर से इस भीषण आपत्ति के काल में मैं राष्ट्र के दु ख का अनुभव तीव्रता से करते हुए, उस दिवगत पुण्यात्मा का स्मरण कर परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें सच्ची चिरंजीवी एकात्मता निर्माण करने की प्रेरणा तथा बुद्धि दे।

मातृभूमि की सेवा में सहयोगी

मा स गोलवलकर

नागपुर, ३१ जनवरी १९४८

मान्यवर सरदार जी,

कल चेन्नै में था, तब अखिल मानव समाज को हिलानेवाली दुर्घटना सुनी। इतनी दुष्ट, निंदनीय घटना संभवत कभी नहीं हुई होगी। हृदय अतीव पीडा से व्यथित हो उठा है।

जिसने यह दुष्कृत्य किया, उसकी भर्त्सना के लिए योग्य शब्द मिलना कठिन है। इतनी अकारण दुष्टता की कल्पना भी नहीं हो सकती। पूर्ण जगत् को दु ख से नि शब्द करनेवाले को क्या कहें?

परंतु विविध प्रवृत्तियों को अपने सूत्र में पिरोकर एक मार्ग पर चलानेवाले उस पुण्यात्मा का स्मरण करते हुए हम सभी उस महान कर्णधार के असामयिक स्वर्गवास से उत्पन्न जिम्मेदारी को सँभालें और इस भीषण संकटकाल में सुचारु भावना, संयमित वाणी, स्नेहपूर्ण व्यवहार से शक्ति संपन्न हो उठें और स्थायी एकता से राष्ट्रजीवन भर दें।

उस महापुरुष का यही सच्चा पुण्यस्मरण होगा। इस श्रद्धा से एकता के पथ पर चलनेवाले संगठन की ओर से मैं परमकृपालु परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह इस राष्ट्र के सब व्यक्तियों का पथ-प्रदर्शन कर विशुद्ध राष्ट्रभक्ति निर्माण की सबको प्रेरणा दे।

भवदीय
मातृसेवा में सहयोगी
मा स गोलवलकर

१ फरवरी को महात्मा जी की दुर्भाग्यपूर्ण हत्या के संबंध में श्री गुरुजी ने प्रकाशित करने हेतु एसोसिएटेड प्रेस को एक वक्तव्य दिया। अत्यंत सात्विक विचार तथा भावना व्यक्त करनेवाले श्री गुरुजी के इस वक्तव्य को अनेक समाचार-पत्रों ने दूषित पूर्वाग्रह के कारण उचित ढंग से प्रकाशित नहीं किया या अधूरा प्रकाशित किया। पूरा वक्तव्य इस प्रकार था—

नागपुर, १ फरवरी १९४८

वर्तमान युग के परम आदरणीय तथा लोकप्रिय विभूति की हत्या पराकोटि का पाशविक कृत्य है। ऐसे समय सार्वजनिक भाषण तथा वक्तव्य

न देने की हमारी परपरा से हटकर, यह समाचार सुनते ही मेरे मन में जो घृणातिरेक तथा दु ख का उद्रेक हुआ, उसे प्रकट करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। यह एक अतुलनीय भीषण त्रासदी है, क्योंकि इसका खलनायक इस देश का नागरिक तो है ही, वह हिंदू भी है। देश के प्रत्येक सद्प्रवृत नागरिक को महात्मा जी की मृत्यु से अवर्णनीय दु ख तो होगा ही, इससे भी बढकर यह देखकर लज्जा का भी अनुभव होगा कि विकृत मनोवृत्ति का हत्यारा अपने ही देश का नागरिक है।

आज अपने देश की परिस्थिति अत्यत विकट है। इस समय उस एकता-निर्माता तथा शाति-प्रस्थापक महात्मा की नितात आवश्यकता थी। ऐसे महापुरुष की हत्या कर डालना एक अक्षम्य राष्ट्रविरोधी कार्य है। देश की इस हानि से हमें दु ख होता है, हमारा हृदय क्षुब्ध होता है और भविष्य के बारे में चिता होती है। मुझे आशा है कि इस प्रकार की भीषण दु खपूर्ण परिस्थिति में लोग कुछ पाठ सीखेंगे तथा प्रेम और सेवा का मार्ग अपनाएँगे। प्रेम और सेवा के सिद्धातों पर श्रद्धा होने से ही मैं अपने सभी स्वयसेवक बधुओं को सबसे प्रेम से बर्ताव करने का आदेश देता हूँ। गैरसमझदारी से कोई खीझकर उत्तेजना से बोले या कोई अनावश्यक उन्माद दिखाए तो भी वह सब विश्व में अपने देश का गौरव बढानेवाले महात्मा के प्रति देशवासियों के मन में प्रेम और आदर रहने से हो रहा है। इसे सभी स्वयसेवक बधु ध्यान रखें। उस पूजनीय दिवगत आत्मा को हमारे कोटि-कोटि प्रणाम।

मा स गोलवलकर

(मूल अग्रेजी)

२ फरवरी १९४८ को सहकार्यवाह श्री मल्हारराव काले ने तार भेजकर सब शाखाओं को किसी भी कीमत पर शात रहने का आदेश दिया—

'गुरुजी को गिरफ्तार किया गया है।
किसी भी स्थिति में शात रहो'
(Guruji interned Be calm at all costs)।

ि ि ि

४ फरवरी को केंद्रीय सरकार ने एक विज्ञप्ति द्वारा भारत के सभी प्रांतो मे संघ पर प्रतिबंध लगाने की घोषणा की। प्रतिबंध की घोषणा करनेवाली विज्ञप्ति—

'भारत सरकार ने २ फरवरी को अपनी घोषणा में कहा है कि उसने उन सभी विद्वेषकारी तथा हिंसक शक्तियों को जड़मूल से नष्ट कर देने का निश्चय कर लिया है, जो राष्ट्र की स्वतंत्रता को खतरे में डालकर उसके उज्ज्वल नाम पर कलंक लगा रही हैं। उसी नीति के अनुसार चीफ कमिश्नरों के अधीनस्थ सब प्रदेशों में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को अवैध घोषित करने का निश्चय भारत सरकार ने कर लिया है। गवर्नरों के अधीन राज्यों में भी इसी ढंग की सूचना जारी की जा रही है।'

अन्य जनतांत्रिक सरकारों की ही भाँति भारत सरकार तथा प्रांतीय सरकारें सभी दलों तथा संगठनों और सच्चे राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक कार्यों को योग्य अवसर प्रदान करने को सदा उत्सुक रहती हैं। औचित्य तथा कानून की सर्वसम्मत सीमाओं के भीतर रहकर काम करनेवाली संस्थाओं को, चाहे वे सत्तारूढ दल की समर्थक हों अथवा विरोधी, सहन किया जा सकता है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का घोषित ध्येय है 'हिंदुओं का शारीरिक, बौद्धिक तथा मानसिक विकास करते हुए उनमें बंधुता तथा सेवाभाव निर्माण करना।' जनता के सभी वर्गों का शारीरिक तथा बौद्धिक विकास करने की ओर सरकार का अत्यधिक ध्यान रहता है तथा इस उद्देश्य के निमित्त, विशेषकर देश के नवयुवकों को शारीरिक तथा सैनिक शिक्षा देने के लिए आवश्यक योजनाएँ उसने आरंभ की हैं, किंतु खेद का विषय है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सदस्य घोषित ध्येय के अनुसार व्यवहार नहीं करते।

संघ के स्वयंसेवक अनुचित कार्य भी करते रहे हैं। देश के विभिन्न भागों में उसके सदस्य व्यक्तिगत रूप से आगजनी, लूटमार, डाके, हत्याएँ तथा लुक-छिपकर शस्त्र, गोला और बारूद का संग्रह करने जैसी हिंसक कार्रवाइयाँ कर रहे हैं। यह भी देखा गया है कि ये लोग पर्चे भी बाँटते हैं, जिनसे जनता को आतंकवादी मार्गों का अवलंबन करने, बंदूकें एकत्र करने तथा सरकार के बारे में असंतोष निर्माण कर सेना और पुलिस से उपद्रव कराने की प्रेरणा दी जाती है। वे इस भाँति के कार्य गुप्त रूप से किया करते हैं। सरकार ने समय-समय पर इस संबंध में चर्चा की है कि इन सभी स्वयंसेवकों का विचार एक संस्था के रूप में किया जाए अथवा नहीं।

नववर के अत में प्रातों के मुख्यमत्रियों तथा गृहमत्रियों का एक सम्मेलन दिल्ली में हुआ था, जिसमें निश्चय किया गया था कि अभी वह समय नहीं आया है, जव सघ का एक सस्था के रूप में विचार किया जाए। अत व्यक्तियों के लिए स्वतत्र रूप से जो उपाय काम में लाए जा सकते हों, लाए जाने चाहिए, किंतु उसके वाद भी सघ की आक्षेपजनक तथा घातक कार्रवाइयाँ जारी रहीं और सघ द्वारा समर्थित हिंसा-वृत्ति के अनेक व्यक्ति शिकार हुए, जिसमें से स्वत गाँधी जी नवीनतम वलि हैं।

ऐसी दशा में हिंसा की इस उग्र अभिव्यक्ति का दमन करने के लिए कडे उपाय काम में लाना सरकार अपना कर्तव्य समझती है। जिसकी पूर्ति की दिशा में उठाए गए पहले कदम के रूप में सघ को अवैध घोषित किया जाता है। सरकार को इस वात का तिलमात्र भी संदेह नहीं है कि सभी नीतिनिपुण तथा देशहितैषी नागरिक इस कदम का समर्थन करेंगे।'

कारागृह में श्री गुरुजी को यह समाचार ज्ञात हो चुका था कि सघ पर प्रतिवध लग गया है। इसपर श्री गुरुजी ने अपने मित्र एडवोकेट श्री दत्तोपत देशपाडे को, जब वे ५ फरवरी को उनसे मिलने जेल गए थे, सघ के विसर्जन का एक वक्तव्य लिखकर दिया तथा कहा कि वे उसे प्रकाशित कर दें। इस वक्तव्य में श्री गुरुजी ने लिखा—

'राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ की आरभ से यह नीति रही है कि सरकारी प्रतिबंधों का पालन करते हुए ही अपने कार्यक्रम किए जाएँ। इस समय सरकार ने उसे अवैध घोषित कर दिया है, अत मैं यही उचित समझता हूँ कि प्रतिवध हटाए जाने तक सघ को विसर्जित कर दूँ, तथापि सरकार ने सघ पर जो आरोप लगाए हैं, उन्हें मैं पूर्णतया अस्वीकार करता हूँ।'

श्री गुरुजी पर लगाई गई प्रतिबधात्मक शर्तों मे पत्र-व्यवहार न करने की शर्त नहीं थी। इसलिए श्री गुरुजी ने ११ अगस्त १९४८ को प्रधानमत्री प नेहरू तथा सरदार पटेल को निम्नलिखित पत्र लिखे—

प्रतिबध आवश्यक कर्तव्य मे बाधक

नागपुर, ११ अगस्त १९४८

प्रिय माननीय प नेहरू,

१ फरवरी १९४८ को मेरी गिरफ्तारी होने के पहले तथा पूज्य महात्मा जी की हत्या के कारण उत्पन्न असाधारण वातावरण में मैंने

आपको एक पत्र लिखा था। ६ अगस्त १९४८ को कारावास से मुक्त होने पर फिर मैं उसी प्रेम, आदर तथा सम्मानपूर्ण सहयोग की भावना से आपको लिख रहा हूँ।

यह सत्य है कि मैं उस समय यह नहीं समझ पाया कि मैं तथा मेरे असख्य मित्र गिरफ्तार तथा नजरबद क्यों किए गए? बाद में की गई उस कार्रवाई को भी मैं नहीं समझ पाया, जो उस सगठन के सबध में की गई, जिसका मैं प्रतिनिधित्व करता हूँ। मैं कई बार प्रकट किए गए इस तर्क से अपने को समझाने का प्रयत्न करता हूँ कि अत्यत असाधारण परिस्थिति के फलस्वरूप यह असयमित कार्रवाई की गई। मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि उच्च तथा उत्तरदायी पदों पर बैठे व्यक्ति उत्तेजित हो सकते हैं, जल्दबाजी कर सकते हैं अथवा मानसिक सतुलन खो सकते हैं। उनके सबध में ऐसा सदेह भी नहीं होना चाहिए, किंतु बाध्य होकर मुझे यही निष्कर्ष स्वीकार करना पडा। छ महीने की नजरबदी की अवधि के बाद जब मुझे व मेरे कार्य पर लगाए गए सभी गभीर अभियोगों से निर्दोष सिद्ध करने योग्य पर्याप्त प्रकाश पड चुका है, तब भी आज्ञा जारी कर मुझे नागपुर में ही रहने के लिए बाध्य कर दिया गया और मेरी गतिविधि पर इस प्रकार प्रतिबध लगाए गए हैं कि मेरी मुक्तता अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत कारावास के रूप में परिणत हो गई।

सर्वसाधारण अधिकारियों की, विशेषकर आपकी मन स्थिति उस समय चाहे जो हो और आज भी जो कुछ भी हो, मैं सर्व-शक्तिमान् परमात्मा का कृतज्ञ हूँ कि उसने मेरे मन को कलुषित नहीं होने दिया और मैं अपने स्नेह, सौहार्द तथा आत्मीयता की भावना से परिपूर्ण हूँ। मुझे आशा और विश्वास है कि मेरे पुराने सहयोगी कार्यकर्ताओं की यही भावनाएँ होंगी। मैं स्नेह के इस सदेश को सभी तक पहुँचा देता और सभी से यह कहता कि वे कष्ट और व्यथा की भावना से हृदय को मलिन न होने दें। किंतु, मुझ पर लगाए गए इन प्रतिबधों ने मुझे इस आवश्यक कर्तव्य से रोक दिया। इन अन्यायपूर्ण प्रतिबधों के स्थान पर मुझे अपनी स्थिति स्पष्ट करने और इस सकट के समय सरकार के साथ वास्तविक सहयोग और प्रेमभावना का आपको विश्वास दिलाने का अवसर दिया गया होता, तो मैं उसे उचित समझता। अब भी मुझे आशा है कि फिर से निकट आने का अवसर अभी भी बीता नहीं है।

समय बदलता ही है और प्रत्येक वस्तु अपना योग्य स्थान प्राप्त

करती है। मुझे इसमें संदेह नहीं कि परमात्मा, जो पिछली सभी शताब्दियों में हमारा सहायक था, हमें आवश्यक शक्ति, साहस तथा विशाल हृदय देगा, जिससे महानता के मार्ग पर हम चल सकेंगे। अपने-अपने रास्ते पर चलते हुए भी हम सब भारतमाता की सेवा में एकरूप हो सकते हैं।

इस अवधि में हम सदा के लिए हार्दिक मैत्रीपूर्ण संबधों की आशा करें। इसके बीच में पिछले कुछ महीनों के वे बीभत्स दु स्वप्न न आने दें, जो हमारे पारस्परिक प्रेम में कटुता उत्पन्न कर सकें।

भवदीय

मातृसेवा में सहयोगी

(मूल अंग्रेजी) मा स गोलवलकर

प्रतिबंध लगाना अनावश्यक

नागपुर, ११ अगस्त १९४८

मान्यवर सरदार वल्लभभाई पटेल जी,

सादर प्रणाम। ६ अगस्त १९४८ को बंदीगृह से मेरी मुक्ति हुई, परंतु तुरंत ही मुझ पर कुछ निर्बंध डाले गए। इस कारण मैं नागपुर में ही हूँ। जिस समय मुझे बंदीगृह में डाला गया था, उस समय की परिस्थिति में अधिकारी-वर्ग की मन स्थिति विचलित होने से ही यह अकल्पित कदम उठाया गया, ऐसा मैंने स्वत को समझाने का प्रयत्न किया। अर्थात् महत्त्वपूर्ण पदों को अलकृत करनेवालों के मन विचलित हों और वे विपरीत कृत्य करें, यह बात मान लेना अतीव कठिन रहा और अब भी कठिन ही है। अब पर्याप्त समय बीत जाने के बाद और वायुमंडल स्वच्छ होने के लिए आवश्यक पर्याप्त प्रमाण प्रकाश में आने के पश्चात् भी मन की अवस्था वैसे ही विचलित हो सकती है, यह मानना असंभव है। परंतु मुझपर लगाए गए अनावश्यक प्रतिबंधों से मन की स्थिरता का अब भी परिचय नहीं मिलता। इसलिए असंभव को संभव मानना पडता है।

आप लोगों के संबंध में जिस आत्मीय भाव को लेकर चलना मैंने अपना स्वभाव बनाया है, उस आत्मीयता तथा स्नेह में अभी भी कोई कमी नहीं हुई है। १ फरवरी १९४८ को कारावास में जाने के पूर्व मैंने आपको एक पत्र लिखा था। उसमें व्यक्त परस्पर विश्वास, सहकार्य तथा सौहार्द का भाव मेरा स्थायी मनोधर्म है। उसी की स्मृति से मेरी मुक्ति के पश्चात् यह पत्र लिख रहा हूँ।

सब विचार कर, आपके और मेरे बीच जो व्यक्तिगत तथा वृत्तिगत स्नेह और साधर्म्य है, वह सदा के लिए बना रहे यही उचित है। अपनी ओर से मैं इस सबध में दत्तचित्त हूँ। मेरे पूर्वकार्य के सब मित्र भी इसी दृष्टि से आपकी ओर देखते होंगे, ऐसा अनुमान करता हूँ। प्रत्यक्ष में मेरे हृदय का स्नेह-भाव सबमें प्रसृत करने के मेरे कर्तव्य से निर्बधवशात् मैं वचित हूँ, केवल इसका दु ख है। साथ ही आपसे प्रत्यक्ष मिलकर मेरी और मेरे कार्य की भावना स्पष्ट कर आप सबका मनोमालिन्य दूर करने तथा सद्य कालीन राष्ट्र की कठिन अवस्था में आपसे, याने अपनी सरकार से सहकार्य करने के कर्तव्य से, इन्हीं अकारण निर्बंधों के कारण मैं वचित हूँ, इसका भी अतीव दुख है। आशा करता हूँ कि अब वह समय दूर नहीं, जब हम लोग आपस में मिलकर सहकारिता का शुद्ध वातावरण निर्माण करेंगे।

अस्तु। वर्तमान में शेष सब कुशल है। परमात्मा की कृपा से अपना पारस्परिक स्नेह वृद्धिगत हो और सबके प्रयत्नों से भविष्यकाल आनद और सुख से परिपूरित हो, यही भारत की अधिष्ठात्री देवता से प्रार्थना करता हुआ पत्र पूर्ण करता हूँ। बाकी सब प्रसग उपस्थित होने पर प्रत्यक्ष में।

आपका शुभाकाक्षी
मा स गोलवलकर

सरदार पटेल द्वारा दिया गया उत्तर

११ सितबर १९४८
१, औरगजेब रोड, नई दिल्ली

भाई श्री गोलवलकर,

आपका ११ अगस्त का पत्र मिला। जवाहरलाल ने भी आपका उसी तारीख का पत्र मुझको भेजा है।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के विषय में मेरे जो विचार हैं, उनको आप भली-भाँति जानते हैं। उन विचारों को मैंने दिसबर के महीने में जयपुर में और जनवरी के महीने में लखनऊ में प्रकट किया है। जनता ने उन विचारों को सराहा था। मुझे आशा थी कि आप लोग भी उनको स्वीकृत करेंगे। किंतु उनका कोई खास प्रभाव सघवालों पर नहीं हुआ, न ही उसके कार्यक्रम में कोई अतर आया। सघ ने हिंदू-समाज की सेवा की थी, इसमें कोई सदेह नहीं हो सकता। ऐसे इलाको में जहाँ कि उनके सगठन व सहायता की आवश्यकता थी, सघ के नवजवानों ने औरतों व बच्चों की

रक्षा की, उनके लिए काफी काम किया। किसी भी समझदार आदमी को इस पर कोई शिकायत का मौका नहीं हो सकता। हाँ, मौका तो तब आया जबकि बदले की आग से जलते हुए उन्होंने मुसलमानों पर अत्याचार शुरू किए। हिंदुओं का संगठन करना व उनकी सहायता करना एक बात है, पर उनकी मुसीबतों का बदला निहत्थे व लाचार औरतों, बच्चों व आदमियों से लेना दूसरी बात है।

उसके अतिरिक्त यह भी कि उन्होंने कांग्रेस का विरोध करके और वह भी इस कठोरता से कि न व्यक्तित्व, न सभ्यता, न शिष्टता का ध्यान रखा। जनता में एक प्रकार की बेचैनी पैदा कर दी। उनके सारे भाषण सांप्रदायिक विष से भरे थे। हिंदुओं में जोश पैदा करना व उनकी रक्षा के प्रबंध करने के लिए यह आवश्यक न था कि वह जहर फैले। उस जहर का फल अंत में यही हुआ कि गाँधी जी की अमूल्य जान की कुरबानी देश को सहनी पड़ी और सरकार व जनता की सहानुभूति जरा भी संघ के साथ न रही, बल्कि उनके खिलाफ हो गई। उनकी मृत्यु पर संघवालों ने जो हर्ष प्रकट किया अथवा मिठाई बाँटी, उससे वह विरोध और भी बढ़ गया। सरकार को इस हालत में संघ के खिलाफ कार्रवाई करना जरूरी ही था।

तब से छ: महीने से ज्यादा हो गए हैं। हम लोगों को आशा थी कि इतने वक्त के बाद सोच-विचार कर संघवाले सीधे रास्ते पर आ जाएँगे। परंतु मेरे पास जो सूचनाएँ आती हैं, उनसे यही विदित होता है कि पुरानी कार्रवाइयों को नई जान देने का प्रयत्न किया जा रहा है। मैं आपसे एक बार और कहूँगा कि मेरे जयपुर व लखनऊ के भाषण पर ध्यान दीजिए और मैंने उसमें जो रास्ता संघवालों के लिए बताया था, उसको स्वीकार कीजिए। मुझे पूर्ण विश्वास है कि उसी में संघ व देश का कल्याण है। उसी रास्ते पर चलकर हम एक होकर देश की भलाई कर सकते हैं। यह तो आपको स्वयं ज्ञात है कि हम लोग एक नाजुक घड़ी से गुजर रहे हैं। देश के हर छोटे से छोटे व बड़े से बड़े का यह कर्तव्य है कि देश की सेवा के लिए जिस किसी प्रकार भी हो सके, अपनी देन पूरी करे। इस नाजुक समय में पार्टीबंदी का अर्थात् पुराने मतभेदों का अवसर नहीं है। मेरा पूर्ण विश्वास है कि संघवाले अपने देशप्रेम को कांग्रेस से मिलकर ही निभा सकते हैं, अलग होकर या विरोध करके नहीं। मुझे इस बात की खुशी है कि आपको छोड़ दिया गया है। आशा है आप मेरे विचारों पर ध्यान देकर उचित निश्चय पर पहुँचेंगे। आप पर जो रुकावट लगाई गई है उसके

विषय में सेन्ट्रल प्रोविन्स की सरकार से पूछताछ कर रहा हूँ। उनका उत्तर आने पर आपको सूचित करूँगा।

आपका
वल्लभभाई पटेल

यह पत्र श्री गुरुजी को काफी विलब के बाद अर्थात् सरदार पटेल के २६-९-१९४८ के पत्र के बाद मिला। दिनाक २४ सितबर तक इन पत्रो का उत्तर न आने के कारण श्री गुरुजी ने पुन प्रधानमत्री प नेहरू तथा सरदार पटेल को निम्नलिखित पत्र लिखे—

नागपुर
२४ सितबर १९४८

माननीय प जवाहरलाल नेहरू,

लगभग डेढ मास पूर्व मैंने आपको पत्र लिखा था। उत्तर प्राप्त होने का सौभाग्य मुझे अभी तक प्राप्त न हो सका। पुन लिखने का विचार मैं स्थगित करता गया, क्योंकि हैदराबाद का प्रश्न गभीर रूप धारण कर रहा था व सरकारी कार्रवाई अपरिहार्य दिखाई दे रही थी। उस समस्या का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग सफलतापूर्वक हल हो जाने के कारण अब आपको लिखना मैं उचित समझता हूँ।

हैदराबाद में प्राप्त हुई सफलता से उत्पन्न हुए कुछ प्रशात वातावरण में मैं आपसे राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर लगाए गए प्रतिबध के प्रश्न पर पुन विचार करने की प्रार्थना करता हूँ। सघ पर प्रतिबध लगाए लगभग आठ मास व्यतीत हो चुके हैं तथा इस विषय की सब प्रकार की छानबीन की जा चुकी है। मुझे विश्वास है कि आपको अब भली-भाँति अनुभव हो गया होगा कि सघ पर लगाए गए आरोप मिथ्या तथा निराधार हैं। अत यह विषय अब केवल न्याय का ही प्रश्न है। अपनी ही सरकार से ऐसे न्याय की आशा करना हमारा अधिकार है।

सघ के विसर्जित किए जाने के कारण इस बीच के समय में बुद्धिमान नवयुवक कम्युनिज्म के जाल में फँसते जा रहे हैं। ब्रह्मा, (बर्मा), हिंदचीन, जावा तथा पडोस के दूसरे राज्यों में जो आतकपूर्ण घटनाएँ हो रही हैं, उनसे इस आगामी विभीषिका की कल्पना की जा सकती है। इस

सकट का सुदृढ प्रतिरोध करने वाला सघ आज विद्यमान नहीं है। कम्युनिस्टों ने सघ को अपने पथ का सबसे बडा रोडा समझा। इसलिए वे सदा उसके विरुद्ध विषवमन तथा कुत्सित प्रचार करते रहे। महात्मा जी की हत्या तथा सघ पर लगे प्रतिवध से उन्हें अपने जीवन का सबसे बडा अवसर हाथ लगा और उन्होंने सघ को नीचे गिराने तथा अपने कार्य को बढाने हेतु इस अवसर से अनुचित लाभ उठाया। उनकी प्रगति के समाचार भयावह हैं। आशा है आप शात चित्त से इस समस्या पर विचार करेंगे और ऐसा वायुमडल निर्माण करने में सहायक होंगे, जिसमें सघ अपने सास्कृतिक आधार पर सम्मानपूर्ण कार्य करता हुआ इस नई विभीषिका का मुँह तोडने में सरकार का हाथ बँटा सके। सघ पर लगाए गए प्रतिवध को हटाने तथा उस पर लगाए गए आरोपों को असदिग्ध रूप से वापस लेने से ही वैसा वातावरण निर्माण हो सकता है। स्वय अपने वारे में कहना हो, तो मेरे लिए यह असभव है कि बढते हुए सकट को मैं असहाय और मौन देखता बैठा रहूँ। जवकि मुझे विश्वास है कि अकारण लगाए गए असत्य आरोपों के कलक से तथा कार्य करने की कानूनी बाधाओं से मुक्त मेरा सास्कृतिक सगठनात्मक कार्य उस सकट पर विजय प्राप्त कर सकता है। इसलिए यह पत्र लिखकर मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप स्थिति पर पुनर्विचार करें और सघ पर से प्रतिवध हटा लें।

भवदीय

(मूल अग्रेजी)

मातृसेवा में सहयोगी
मा स गोलवलकर

गुरुजी का सरदार पटेल को दूसरा पत्र

नागपुर, २४ सितवर १९४८

मान्यवर वल्लभ भाई पटेल जी,

सादर प्रणाम। आपकी सेवा में पिछला पत्र प्रस्तुत किए डेढ मास से अधिक समय बीत चुका है। आपकी ओर से उसकी प्राप्ति का समाचार अभी तक नहीं मिला। दूसरा पत्र लिखने का विचार पिछले कुछ दिनों से मन में था, परतु बीच में हैदरावाद की समस्या गभीर होती गई और फिर प्रत्यक्ष रूप में सरकार की ओर से हस्तक्षेप करने का आवश्यक प्रसग निर्माण हो वहाँ कदम उठाया गया। भाग्यवश अत्यत अल्पावधि में इस कार्य का महत्त्वपूर्ण अश सपन्न हो गया। हैदरावाद के प्रश्न में अनेक पक्षोपपक्ष

अपनी-अपनी चाल चलाने का प्रयत्न करते हुए भी मैंने और मेरे साथियों ने यही मतव्य रखा था कि सरकार ही इस प्रश्न को ठीक करे और सारी जनता उसका साथ दे। मेरी वह इच्छा पूर्ण हुई। अर्थात् मेरे कार्य की भग्न अवस्था में मैं कुछ सहायता करने में असमर्थ रहा, परतु हृदय सरकार की विजय के लिए उत्सुक था। विजय हुई और मैंने आपको तथा प्रधानमत्री जी को तार द्वारा हृदयपूर्वक बधाई दी। हैदराबाद के प्रश्न में आप व्यस्त होंगे, ऐसा समझकर ही मैंने दूसरा पत्र लिखने में विलब किया। अब इस प्रश्न के महत्त्व का अग पूर्ण होने पर यह पत्र प्रस्तुत कर रहा हूँ।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ को अवैध घोषित किए जाने को अब आठ मास हो रहे हैं। उस पर जो आरोप लगाए गए थे, उनमें कहाँ तक तथ्य हैं, इसका आपको पूर्ण ज्ञान है ही। मैं विश्वास करता हूँ कि आपके मन में सघ की निर्दोषिता के विषय में कोई सदेह नहीं है। देश भर में तलाशियाँ, छानबीन इत्यादि हो चुकी है। अब और प्रमाण की आवश्यकता नहीं। सघ पर जो आरोप लगाए गए थे, वे सरकार को उस समय भले ही ठीक जँचे हों, परतु वे निराधार थे। उनका पूर्णतया निराकरण करना सरकार की न्यायप्रियता का परिचायक होगा।

यह तो न्याय की दृष्टि से हुआ। परिस्थिति की दृष्टि से मैं दो प्रकार से विचार करने के लिए आपसे अनुरोध करता हूँ। जिस समस्या के कारण कुछ लोगों की दृष्टि से 'साप्रदायिकता' बढने का डर था, वह हैदराबाद की समस्या यशस्वी रीति से हल हो रही है। अपनी सरकार का हाथ ऊपर है और हम सब लोग आनदपूर्वक निश्चित हैं कि इस प्रकार की धैर्यशाली नीति सरकार द्वारा अपनाने पर वह अनिष्ट 'साप्रदायिकता' बढ नहीं पाएगी। इस यश से वायुमडल में पर्याप्त परिवर्तन हुआ है और अब सघ पर किए आरोपों को निराधार घोषित कर उसको अपना कार्य पहले जैसे करने का अवसर देने में कोई व्यवधान नहीं दिखाई देता।

परिस्थिति की दूसरी दृष्टि यह है कि सघ के अवैध होने के उपरात युवकवर्ग विशेषत विद्यार्थीगण कम्युनिज्म की ओर अधिकाधिक झुकने लगा है, ऐसा समाचार दक्षिण से तथा सयुक्त प्रात आदि क्षेत्रों से प्राप्त हुआ है। उनका प्रचार बढ रहा है। इस खतरे की सूचना आपको देनी चाहिए, ऐसी बात नहीं। परतु इस देशबाह्य विचारप्रणाली को बढते देख अकर्मण्य होकर बैठे रहना (जबकि मुझे विश्वास है कि सघ का कार्य नि सदिग्धता से दोषमुक्त होकर वैध होने से इस सकट से युवकवर्ग का

रक्षण बहुत मात्रा में हो सकता है) मेरे लिए कितना कठिन होगा और हृदय को कितनी यन्त्रणा देता होगा, इसका आप विचार करें। मैं तो यही समझता हूँ कि आप अपनी सरकार की शक्ति और हम अपनी सास्कृतिक सघशक्ति यदि साथ-साथ लगाएँ तो इस सकट से शीघ्र मुक्त हो सकते हैं। अपने पडोसी देशों में इस बाह्य प्रणाली की यशस्विता की जो लहर दौड रही है, इससे मैं अत्यधिक चिंतित हूँ। इसी चिता के कारण आपसे सघकार्य पूर्ववत् करने देने के लिए अनुकूल वातावरण निर्माण करने के निमित्त अनुरोध कर रहा हूँ।

अनेक महत्त्व के प्रश्नों पर आप गभीरता से विचार करते हैं। यह प्रश्न भी आपके विशाल हृदय तथा व्यापक दृष्टिकोण के अनुरूप है।

इसी सबध में मैं एक और निवेदन करता हूँ। मुझ पर निर्बध हैं। केंद्रीय सरकार की सूचना के बिना वह लगाया जाना असभव नहीं है। परतु मैं समझता हूँ कि देश की, राष्ट्रजीवन की और अपनी सरकार की रक्षा हेतु भारत भ्रमण कर अपने नवयुवकों की निष्ठा को राष्ट्र-बाह्य होने से बचाना मेरा कतव्य है। उसको करने में मुझे यदि कुछ विपत्ति भी झेलनी पडे तो भी मुझे भारत-भ्रमणार्थ शीघ्र ही जाना होगा।

आप सब बातों का विचार करें। सरकार ने सघ के विषय में जो कदम उठाया था, उसके उचित-अनुचित होने आदि के सबध में वादविवाद करते बैठने का यह समय नहीं है। न मेरे पास बुद्धि की उतनी कलाबाजियों के लिए समय है। अत उन बातों को दृष्टि से ओझल कर परिस्थिति की पुकार को सुनते हुए आप निर्णय करें। मैं और मेरे सब साथी परिस्थिति को काबू में लाकर अपने देश को अजेय बनाने हेतु सहकार्य करने के लिए पहले से ही प्रयत्नशील हैं।

अति शीघ्र प्रत्युत्तर की प्रतीक्षा करता हूँ।

आपका शुभाकाक्षी

(मूल अग्रेजी) मा स गोलवलकर

२४ सितबर को श्री गुरुजी द्वारा सरदार पटेल को लिखे पत्र मे प्रधानमत्री तथा सरदार पटेल को तार भेजकर हैदराबाद समस्या के सफलतापूर्वक सुलझाने पर बधाई का उल्लेख है। प्रस्तुत पत्र सरदार पटेल द्वारा उस तार का उत्तर है—

१, औरंगजेब रोड, नई दिल्ली,
२४ सितंबर १९४८

प्रिय मित्र,

हैदराबाद अभियान की सफल संपन्नता पर आपके अभिनंदन संदेश के लिए धन्यवाद। अपना वास्तविक कार्य तो अभी प्रारंभ हुआ है। अनेक शतकों की क्षतिपूर्ति करनी है। प्रत्यक्ष अभियान की भाँति इस कार्य में भी आप जैसे मित्रों की सदिच्छा एवं शुभकामनाएँ हमारे साथ होंगी, इसमें हमें कोई संदेह नहीं।

सादर सविनय

भवदीय
वल्लभभाई पटेल

(मूल अंग्रेजी)

सरदार पटेल का उत्तर

१, औरंगजेब रोड, नई दिल्ली,
२६ सितंबर १९४८

भाई श्री गोलवलकर,

आपका पत्र २४ तारीख को मिला। मैंने आपके पहले पत्र का उत्तर ११ सितंबर को भेजा था। पता नहीं आपको मिला क्यों नहीं। उसकी एक नकल भेज रहा हूँ। पहला पत्र न मिलने के कारण मैं यह उचित समझता हूँ कि यह पत्र भी शुक्ला जी के द्वारा आपको भेजूँ।

आपके पत्र का जो मैंने उत्तर दिया था, उससे आपको सारी परिस्थिति मालूम हो जाएगी। संघ के विरुद्ध जो कार्रवाही की गई है, सब प्रांतों की सहमति से की गई है। अभी हाल में इस विषय में फिर से प्रांतों की सलाह ली गई है। लेकिन प्रांतों की राय अभी भी यही है कि संघ पर से गैरकानूनी संस्था होने की अधिसूचना नहीं हटाई जा सकती। आप स्वयं जानते हैं कि प्रांतों के मंत्रिमंडल में सब अपने ही आदमी हैं। यदि उन सबका यही अभिप्राय है कि यह अधिसूचना जारी रखी जाए, तो ऐसा ही माना जाएगा कि संस्था में ही कोई त्रुटि होगी। किसी को संस्था के प्रति कोई द्वेष नहीं है। यदि उनका यह अभिप्राय है तो वास्तविक प्रमाण के कारण ही होगा।

इन सब बातों को देखते हुए मेरी आपको यही सलाह होगी कि सघ को एक नई रीति और एक नई नीति पर लाना चाहिए। वह नई रीति या नई नीति केवल काग्रेस के नियमों के अनुसार ही हो सकती है। विद्यार्थियों में या युवकों में जोश है तो उसका प्रकटीकरण केवल अत्याचारों द्वारा या अपघातों द्वारा नहीं हो सकता। उसके लिए और भी सीधे मार्ग हैं, जिन पर युवकों और विद्यार्थियों को चलाने के काम में मेरी निजी व सरकार की पूरी-पूरी सहानुभूति हो सकती है।

आपके यहाँ आने के बारे में मैंने शुक्ला जी को लिखा है। उनका उत्तर आने पर मैं आपको फिर लिखूँगा।

आपका
वल्लभभाई पटेल

प्रधानमत्री की ओर से प्रत्युत्तर

क्र १० (१२) - ४७ प्र म

प्रधानमत्री का कार्यालय
नई दिल्ली
२७ सितबर १९४८

प्रिय श्री गोलवलकर,

प्रधानमन्त्री को २४ सितबर का आपका पत्र मिला। उन्होंने मुझे आपको यह सूचित करने के लिए कहा है कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर प्रतिबध रखने, न रखने का प्रश्न गृह विभाग के अधीन है। अत आपका पत्र उसके पास भेजा जा रहा है।

किंतु उन्होंने आपको सूचित करने के लिए मुझसे यह कहा है कि आपका यह कथन कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ निर्दोष है और उसके विरुद्ध लगाए गए अभियोग निराधार हैं ये स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। सरकार के पास पर्याप्त प्रमाण हैं, जो प्रकट करते हैं कि राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ ऐसी कार्यवाई में सलग्न था, जो राष्ट्र-विरोधी तथा जनहित की दृष्टि से आपत्तिजनक थी। राष्ट्रीय स्वयसेवक संघ पर प्रतिबध लगाए जाने के कुछ पूर्व प्रधानमंत्री को ज्ञात हुआ था कि संयुक्त प्रांतीय सरकार ने अपने पास एक नोट भेजा था जिसमें सयुक्त प्रात में सघ की उक्त कार्यवाई के संबंध में प्रांतीय सरकार द्वारा संकलित कुछ प्रमाण थे। अन्य प्रांतों के पास

भी इस प्रकार के प्रमाण हैं। प्रतिबध लगाए जाने के पश्चात् भी हमें राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के पुराने सदस्यों की अवाछनीय कार्रवाई के सबध में जानकारी मिली है। इस प्रकार की जानकारी हमारे पास अभी भी आ रही है। आप यह स्वीकार करेंगे कि इस जानकारी के होते हुए सरकार राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ को जनहित की दृष्टि से हानिरहित सस्था नहीं समझ सकती। देश से साप्रदायिकता को उखाड फेंकना सरकार की नीति है। अत ऐसे किसी सगठन को प्रोत्साहित नहीं किया जा सकता, जो साप्रदायिक दृष्टिकोण को बढावा देता है। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का लक्ष्य और उसके कार्यकलाप निश्चित ही साप्रदायिक हैं। कभी-कभी उसके नेता जो कहते हैं, वह जो प्रत्यक्ष किया जाता है, उसके साथ मेल नहीं खाता। सघ के बाहरी लक्ष्य और वास्तविक व्यवहार में बडा अतर है।

हस्ताक्षर (ए वी पै)

(मूल अग्रेजी)

पत्रकारो से वार्तालाप

१६ अक्तूबर १६४८ को प्रात काल ६ बजे दिल्ली मे लाला हसराजजी की कोठी पर कतिपय पत्रकारों ने राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ (अवैध) के सरसघचालक श्री गुरुजी से मुलाकात की। पत्रकारो ने उनसे कुछ प्रश्न किए। उन्होने उनके उत्तर अत्यत स्पष्ट और प्रेमपूर्ण ढग से दिए। प्रश्नोत्तर का विवरण निम्नलिखित आशय का है—

एक पत्र-प्रतिनिधि ने पूछा 'क्या यह सत्य है कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने राष्ट्र को उखाड फेंकने की बात सोची थी?

गुरुजी ने सहज मुस्कराहट के साथ कहा— 'यह प्रश्न ही भ्रात है। राष्ट्र के विरुद्ध सोचना तो किसी अन्य देश का कर्म हो सकता है या विदेशियों से मिले हुए किसी पचमागी प्रतिष्ठान का। किसी भी राष्ट्रीय सगठन के विषय में ऐसा कहना केवल अज्ञानता का सूचक है। हॉ, कोई जनसमूह यदि किसी दल विशेष की सरकार को राष्ट्रहित की दृष्टि से अपदस्थ करना चाहे, तो उसके लिए भी लोकतत्रीय मार्ग खुले पडे हैं। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सबध में तो किसी दल विशेष की सरकार के विरोध का भी प्रश्न नहीं उठता। सघ सर्वथा सास्कृतिक और सामाजिक

सगठन रहा है। सघ ने अपनी सारी शक्ति जनता के शारीरिक और बौद्धिक अभ्युत्थान की दिशा में ही व्यय की है। राष्ट्रीय चेतना तथा व्यक्तिगत चरित्र का निर्माण ही उक्त सगठन का एकमात्र कार्य रहा है।'

प्रश्न क्या सघ के कार्यकर्ता इस तथ्य का प्रमाण उपस्थित कर सकते हैं कि वे सदा राज्यभक्त रहे हैं?

उत्तर राज्यभक्ति का प्रमाण कैसा? राज्यभक्ति के प्रमाण की तो तब आवश्यकता पडती, जब उनके विरुद्ध देशद्रोहिता का कोई सबल आरोप होता। जिनके विरुद्ध कोई आरोप ही न हो, उन्हें सफाई देने की क्या जरूरत?

प्रश्न क्या आप बता सकते हैं कि सघ का भावी स्वरूप कैसा होगा– राजनैतिक केवल सास्कृतिक या चारित्रिक?

उत्तर सघ का स्वरूप-निर्धारण करना जनता का कार्य है, मेरा नहीं। मैं तानाशाह नहीं हूँ। आवश्यकतानुसार जनता सघ को कोई भी रूप प्रदान कर सकती है। हाँ, इतना निश्चित है कि व्यक्तिगत रूप से मैं राजनीति से अलिप्त हूँ।

प्रश्न क्या सघ गुप्त सगठन है?

उत्तर कुछ लोग सघ की गतिविधि को गुप्त बताते हैं। यह कथन अक्षरश असत्य है। सघ की सारी गतिविधियाँ पूर्णतया स्पष्ट तथा खुले मैदान में होती रही हैं। हाँ, जो लोग सघ को गुप्त सगठन के नाम से पुकारते हैं, वे भी दोषी नहीं हैं। उनकी आँखों पर विदेशी चश्मे लगे हुए हैं। विदेशी सगठनों के वातावरण से प्रभावित होने के कारण प्राच्य भारतीय परपरा तथा सादगी पर अवलबित सगठन के सबध में सदेह का होना स्वाभाविक ही है। प्रचार और प्रदर्शन के युग में शात और सुदृढ सस्था को गुप्त समझना वर्तमान काल की विशेषता है। सघ के व्यय-विवरण के विषय में इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि सघ ने कभी भी चदा नहीं उगाहा। सघ के स्वयसेवकों ने कुछ पैसे दिए और वे अपने पैसे का समुचित रीति से व्यय करना भली-भाँति समझते हैं।

प्रश्न क्या सघ अहिदुओं का विरोधी है?

उत्तर इसमें जरा भी संदेह नहीं कि हिदुस्थान हिदुओं का है। विश्व में केवल भारत ही ऐसा देश है, जिसे हिदू अपना देश कह सकते हैं,

किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि भारत में अहिंदुओं को रहने का कोई अधिकार ही नहीं है। जो लोग संघ को 'अहिंदू विरोधी' कहते हैं, उनकी बुद्धि को क्या कहा जाए? राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ निरपवाद रूप से सबके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करना अपना कर्तव्य मानता है। जब तक कोई हिंदू-द्रोही नहीं बनता, तब तक वह संघ का सहज मित्र है। मैं तो व्यक्तिगत रूप से सभी का मित्र हूँ। अनेक ईसाई सज्जन मेरे मित्र हैं।

प्रश्न क्या आप आशा करते हैं कि निकट भविष्य में ही संघ पर से प्रतिबंध उठ जाएगा?

उत्तर मैं तो सदा शुभ की आशा करता हूँ। किंतु प्रतिबंध उठा लेना सरकार का कार्य है, मेरा नहीं।

प्रश्न यदि प्रतिबंध न उठा तो आपका अग्रिम कार्यकलाप क्या होगा?

उत्तर यदि सरकार प्रतिबंध नहीं उठाती, तो उसके लिए यह आवश्यक होगा कि वह संघ को अपराधी सिद्ध करे। वर्तमान लोकतंत्रीय सरकार के लिए ऐसा करना परमावश्यक है। निरपराधी को अपराधी सिद्ध करना असंभव है। अतः मुझे पूर्ण आशा है कि सरकार प्रतिबंध अवश्य उठा लेगी। जब तक मेरा विश्वास बना हुआ है, तब तक अन्यथा विचार करने का कोई प्रसंग ही उपस्थित नहीं होता।

अंत में लोगों ने श्री गुरुजी के तपस्वी जीवन के बारे में भी कुछ प्रश्न करने चाहे पर उन्होंने यह कहकर उन्हें रोक दिया कि मैं अपने व्यक्तिगत जीवन के संबंध में कुछ भी नहीं कह सकता। मैं तो समाज का साधारण सेवक हूँ। सेवक अपने बारे में कुछ भी कहना उचित नहीं समझता।

कांग्रेस में आओ अन्यथा लौट जाओ

श्री गुरुजी के दिल्ली आने के उपरांत उन्होंने १७ तथा २३ अक्तूबर को गृहमंत्री सरदार पटेल से भेंट की। सरदार पटेल ने श्री गुरुजी के संघ पर से प्रतिबंध हटाने के अनुरोध की ओर विशेष ध्यान न देकर संघ के कांग्रेस में शामिल होने पर ही विशेष बल दिया। अपने काम से सरदार पटेल मुंबई गए हुए थे। उनके आदेश से श्री गुरुजी को २८ अक्तूबर को बताया गया— जिस काम के लिए

आप दिल्ली आए थे वह हो चुका है। अत आप दिल्ली छोड़ कर चले जाइए। २ नवबर १९४८ को जब दिल्ली पुलिस उक्त निर्बंध आज्ञा जारी करने के लिए २०-बाराखभा रोड, नई दिल्ली स्थित उनके निवास पर गई तब श्री गुरुजी ने उक्त आज्ञा अस्वीकार करते हुए आज्ञापत्र के पृष्ठ पर निम्नलिखित वाक्य अंग्रेजी मे लिखे—

'मैं समझता हूँ कि यह आज्ञा पूर्णत अनावश्यक और हमारे राज्य के कानून माननेवाले व्यक्ति की नागरिक स्वतत्रता का अपहरण है। मैं यह भी समझता हूँ कि इस आज्ञा को स्वीकार करने से अन्याय तथा अनुचित कार्य का मैं भी भागी बनूँगा। इस आज्ञा को स्वीकार कर मैं स्वतत्र राज्य के नागरिक के कर्तव्यपालन से गिर जाऊँगा। अत मुझे यह कहना पडता है कि मैं इस असाधारण आज्ञा को स्वीकार नहीं कर सकता।'

२ नवबर १९४८ को ही श्री गुरुजी न प्रेस को दो वक्तव्य दिए जिसमे सघ पर किए जानेवाले पुराने तथा नए सभी आरोपो का समुचित खडन किया था। वे दोनो वक्तव्य इस प्रकार थे—

श्री गुरुजी का प्रथम वक्तव्य

नई दिल्ली, २ नवबर १९४८

सद्य अवैध एव विसर्जित राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सहयोगी कार्यकर्ता और मैं सन् १९२५ की विजयादशमी से लगातार पिछले २३ वर्षो से हिंदू समाज की शक्तिभर सेवा करते आ रहे हैं। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के उद्देश्य पवित्र एव उदात्त हैं। सक्षेप में वे ये हैं—

भारतवर्ष हमारी पुण्यभूमि एव मातृभूमि है तथा हमारा एकमेव श्रद्धास्थान है।

इस पुण्यभूमि में हम हिंदू अगणित शताब्दियों से रहते आए हैं, जिसके कारण यह देश हिंदुस्थान नाम से विख्यात है।

इस पुण्यभूमि में रहते हुए हमने एक महान धर्म की सृष्टि की है, जिसमें उच्चतम भौतिक वैभव एव श्रेष्ठ आध्यात्मिक आनद का सुदर समन्वय है। यहीं हमने बडे-बडे साम्राज्यों के निर्माण का प्रयत्न किया, जिसमें समूचे राष्ट्र को एक सुव्यवस्थित समाज के रूप में सगठित किया।

प्रत्येक व्यक्ति को सुखी एव अभावमुक्त बनाया तथा ज्ञान के ऊँचे से ऊँचे शिखर पर आरूढ होने और आध्यात्मिक शाति प्राप्त करने के लिए अवसर प्रदान किए। प्रत्येक को अपनी योग्यता, अभिरुचि तथा मत के अनुसार बढने का अवसर था।

हमारे इस प्रयत्न में हमने व्यक्तिगत पवित्रता एव निष्कलकता, प्रेम एव सेवा, त्याग एव नि स्वार्थ वृत्ति, भक्ति एव आत्म-समर्पण के उच्च आदर्श प्रस्थापित किए। इन आदर्शों को अपने जीवन में लानेवाले महापुरुषों की अखड-मालिका से हमारा राष्ट्र गौरवान्वित रहा है।

चरित्र की शुद्धता

बहुमुखी अनुभवों से भरे हुए हमारे लौकिक जीवन, हमारे आध्यात्मिक दृष्टिकोण, हमारी दार्शनिक वृत्ति, चरित्र की पवित्रता पर हमारा आग्रह तथा महापुरुषों की हमारे जीवन पर पडी हुई छाप ने हमारी महान सस्कृति का विकास किया और हमने एक राष्ट्र का निर्माण किया।

दुर्भाग्यवश व्यक्ति एव समूहों को अत्यधिक रूप से दी हुई छूट के कारण मत-मतातरों की उत्पत्ति हुई। मातृभूमि की विशालता के कारण अनेक भाषाओं का विकास हुआ। इस प्रकार शनै-शनै जीवन की अनेक विभिन्नताओं के रहते हुए भी हमने जिस एकता की सृष्टि की थी, वह धीरे-धीरे नष्ट होने लगी।

इस प्रकार एक हजार वर्ष पूर्व आए हुए आक्रमणकारियों ने हमको विघटित पाया, जिस कारण हमको सरलतापूर्वक विजित कर शासनाधीन किया जा सका। हजार वर्ष की दासता ने विघटन के क्रम को इतनी गति दी कि हम आज यह भी भूल गए हैं कि कभी हम एक सस्कृति और एक मातृभूमि की पूजा करनेवाले एक ही समाज थे, एक ही राष्ट्र थे।

हमारे आदर्श नष्ट हो गए तथा उनका स्थान विदेशी आदर्शों ने, जीवन की विदेशी पद्धतियों ने तथा विदेशी स्वरूप के सामाजिक, आर्थिक एव राजनैतिक आदर्शों ने ले लिया। ऐसा प्रतीत होता था, मानो ससार का सास्कृतिक गुरु हिंदू-समाज अपने सम्मानपूर्ण पद को छोडकर उन विदेशियों का निकृष्ट अनुकरण करने लग जाएगा, जो अभी जीवन में प्रयोग की स्थिति पर ही हैं तथा जिनका जीवन-दर्शन अभी तक शैतान की पूजा के पजे से नहीं छूट पाया है।

स्थिति सुधारने का निश्चय

यह विश्वास करके कि जो राष्ट्र अपने भूतकाल के साथ इस प्रकार अत्याचार करता है, उसका भविष्य भी सदिग्ध होता है तथा यह अनुभव करके कि जिस राष्ट्र में आपसी फूट है, वह कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता, यदि उसे कुछ प्राप्त भी हो गया, तो उसे अधिक दिन सँभालकर नहीं रख सकता। यह विश्वास होने के कारण कि केवल अनुकरण ही प्रगति नहीं है, हमने सपूर्ण स्थिति को सुधारने का निश्चय किया।

अत हमने 'राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ' के नाम से अपना कार्य आरभ किया। इसका उद्देश्य देश को उसके अतीत का ठीक-ठीक ज्ञान कराना तथा उसकी महानताओं की ओर प्रवृत्त करने के लिए ध्यान आकर्षित करना था। इसने यह स्मृति जगाने का प्रयत्न किया कि हम एक समाज थे, जिसकी एक पुण्यमयी मातृभूमि थी, एक सस्कृति थी, इसीलिए हम एक राष्ट्र थे। इसने सब विघटनकारी प्रवृत्तियों को नष्ट किया। चाहे उनका आधार मत, सप्रदाय अथवा जाति रहा हो या राजनीतिक, आर्थिक अथवा भाषा-भेद।

यह प्रयास व्यक्तियों में चरित्र की पूर्ण निष्कलकता उत्पन्न करने तथा सेवा, त्याग एव राष्ट्र के लिए नि स्वार्थ भक्ति की भावना निर्माण करने, यह शिक्षा देने कि व्यक्ति के हित सपूर्ण राष्ट्र के हित से छोटे हैं तथा आपसी विघटित, असगठित एव अनुशासनहीन व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ण जीवन के स्थान पर एक सुगठित, सुव्यवस्थित एव अनुशासित समष्टिगत सामाजिक जीवन निर्माण करने का था। सघ ने पुरातन एव महान हिंदू राष्ट्र में चिरतन बधुत्व का अटूट सूत्र निर्माण किया। इस प्रकार ससार के राष्ट्रों में सबसे महान राष्ट्र में सर्वांगीण पुनर्जीवन का तथा इसको पुन ससार के आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक के उच्च सिहासन पर आसीन करने का प्रयत्न किया।

इस प्रकार हम २३ वर्षों तक कार्य करते रहे। हमको प्रात, भाषा एव सप्रदाय के भेदों से ऊपर उठकर एक ठोस और सच्चा बधुत्व निर्माण करने में सफलता मिली।

अपने कार्य की पवित्रता का विचार करते हुए हमें यह कभी भी आशा नहीं थी कि हमारे मार्ग में कोई आएगा। शकाशील विदेशी शासन में हम अपना कार्य बिना अडचन कर सके।

अब स्वतंत्रता प्राप्त होने के पश्चात् दलगत राजनीति का बोलबाला हो गया है तथा हमको भी संभावित राजनैतिक प्रतिद्वंद्वी समझकर नष्ट करने के लिए निशाना बनाया गया, किंतु हमारे कार्य की पवित्रता के कारण कोई भी अवसर नहीं मिला। अचानक महात्मा गाँधी जी की दुर्भाग्यपूर्ण हत्या हो गई, जिससे सत्ताधारी दल को चिरप्रतीक्षित अवसर मिल गया। अनेक दलों के क्षुद्र मनोवृत्ति के नेताओं ने हमारे विरुद्ध एक तूफान खड़ा किया और भाई को भाई के विरुद्ध कर तथा अपने समाज के कई अंगों में हमारे विरुद्ध, अपने ही बंधुओं के विरुद्ध घोर घृणा का निर्माण किया। मैं अपने स्वयंसेवक बंधुओं का आभारी हूँ कि ऐसे समय में उन्होंने अपना संतुलन बनाए रखा तथा भाई-भाई का संघर्ष बचाया।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर केंद्रीय सरकार ने ४ फरवरी १९४८ को प्रतिबंध लगा दिया तथा प्रांतीय सरकारों ने उसका अनुसरण किया। इसके ऊपर कई प्रकार के दोषारोपण किए गए, जिनको यहाँ दोहराने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि प्रत्येक उनको भली-भाँति जानता है। हम जानते थे कि आरोप निराधार हैं, फिर भी हमने अपने संगठन को विसर्जित कर दिया तथा संपूर्ण आरोपों को अस्वीकार किया। समय ने भी पूर्णतया सिद्ध कर दिया है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर अनेक कृत्यों के जो आरोप लगाए गए थे, वे झूठे थे। हमारा विश्वास था कि प्रतिबंध परिस्थिति के दबाव में तथा जल्दबाजी में लगाया गया है और आशा थी कि शीघ्र ही सरकार अपना कदम वापस ले लेगी। हम लोगों ने नौ मास से अधिक प्रतीक्षा की। हमने जेल की यातनाएँ सहकर भी व्यक्तिगत कार्यों तथा व्यक्तिगत गतिविधियों पर लगाए हुए बंधनों का सदा पालन किया, परंतु हमारी प्रतीक्षा व्यर्थ ही रही।

संपूर्ण स्थिति को केंद्रीय सरकार के समक्ष रखने और उनसे अन्याय के परिमार्जन का अनुरोध करने का मेरा विचार था। इसलिए मेरे ऊपर लगाए गए प्रतिबंध जब हटा लिये गए, तब मैंने पहला कार्य यही किया कि राजधानी में आकर उपप्रधानमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल से मिला। दो बार उनसे मिलकर संपूर्ण स्थिति बताई, किंतु मुझे बताया गया कि प्रतिबंध हटाने के संबंध में प्रांतों से राय ली जा रही है।

मैं नहीं जानता कि यह मार्ग क्यों अपनाया जा रहा है। जबकि प्रतिबंध लगाते समय केंद्र ने पहल की थी, प्रांतों ने उसका अनुसरण मात्र किया था। भिन्न-भिन्न प्रांतों के मुख्यमंत्रियों एवं गृह-मंत्रियों के वक्तव्यों से

हमको पता चला है कि यह केंद्रीय सरकार का ही प्रश्न है, प्रात तो केवल उसके निर्देश को मान सकते हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि जिन आरोपों के कारण प्रतिवध लगाया गया था, उनके असगत एव मिथ्या होने पर इस मार्ग को अपनाकर अन्याय को बनाए रखने के लिए इस पर्दे की ओट ली जा रही है। नए प्रश्न एव अधिक शर्ते रखी जा रही हैं। वास्तव में तो सरकार को सघ को अवेध घोपित करते समय विज्ञप्ति में लगाए गए आरोपों पर ही विचार करना चाहिए। इस प्रकार अनावश्यक रूप से दूसरे मामलों को नहीं घसीटना चाहिए। यह तो जनता को भ्रम में डालने तथा प्रतिवध को बनाए रखने के औचित्य को दिखाने का एक बहाना मात्र दिखता है।

एक और सुझाव दिया गया है कि सघ राजनीतिक दल बन जाए। इसका अर्थ यह होगा कि राजनीतिक दलों के अतिरिक्त और किसी भी कार्य को, यहाँ तक कि पवित्र सास्कृतिक कार्य को भी जीवित रहने का अधिकार नहीं है। यह स्थिति असह्य हे तथा जो ऐसे विचार रखते हैं, उनको शोभा नहीं देती।

मैं समझता हूँ कि सास्कृतिक कार्य को, सत्ता प्राप्त करने के लिए की जानेवाली राजनीतिक दौड-धूप से, स्वतत्र रहना चाहिए। इसका किसी राजनीतिक दल से गठवधन भी नहीं होना चाहिए। अत मैं एक समय के स्वयसेवक वधुओं से कहूँगा कि वे यह समझ लें कि मेरे सम्मानपूर्ण समझौते के प्रयत्न निष्फल हुए हैं। अव उनके सामने दो मार्ग हैं। प्रतिवध की अवहेलना कर सघ के नाते एकत्र होने के अपने अधिकार की रक्षा करना तथा सरकार को आरोप सिद्ध करने के लिए चुनौती देना, किंतु इसका अर्थ अशाति उत्पन्न करना होगा जो देश की आज कि नाजुक स्थिति में अविचारपूर्ण होगा। अत मैं उनको सलाह दूँगा कि वे इस प्रकार के सभी विचारों को छोडकर अपने देशप्रेम से उत्पन्न सयम और उच्च सास्कृतिक स्तर का और अधिक परिचय दें। जैसा कि उन्होंने गत फरवरी में दिया था।

उनके लिए दूसरा मार्ग हिंदू-समाज की सेवा में अपनी शक्ति और नि स्वार्थ भावना का उपयोग करने के वैधानिक एव शातिपूर्ण रास्ते ढूँढ निकालना है। मैं दूसरा मार्ग सुझाता हूँ। कार्य के दूसरे तरीके कौन से हों, इसका ठीक-ठीक निर्णय करने की स्थिति में तो वे स्वय ही हैं।

हिंदू समाज से मेरी अपील है कि वह भ्रमात्मक अपप्रचार का

शिकार न बने। पिछले एक हजार वर्षों में आपसी फूट के कारण हमने पहले ही बहुत कुछ भुगता है। अब तो हमको एक होना चाहिए तथा पारस्परिक प्रेम, श्रद्धा और विश्वास के आधार पर अधिक स्वस्थ, सुदृढ तथा उदात्त जीवन का निर्माण करना चाहिए जिससे हम प्राचीन हिंदू समाज को अपने घर में, अपनी पवित्र मातृभूमि भारतवर्ष में सुखी और वैभवसपन्न बना सकें।

सर्वशक्तिमान भगवान हमारा पथ-प्रदर्शक हो। सत्य की विजय होगी और हमारा राष्ट्र उसके पथ-प्रदर्शन से आज की दयनीय स्थिति से पार होगा।

श्री गुरुजी का द्वितीय वक्तव्य

नई दिल्ली, २ नवबर १९४८

पत्रकारों से मेरी एक-दो बार की भेंट समाचार-पत्रों में प्रकाशित होने के कारण मैं अनुभव करता हूँ कि कुछ विषयों पर अपने विचार अपने देश-बाधवों के सामने व्यवस्थित रूप से रखना उचित होगा- जिन विषयों को कुछ समय से बहुत महत्त्व दिया जा रहा है तथा जिनके सबध में बहुत सी भ्रमपूर्ण धारणाएँ उत्पन्न हो गई हैं। ऐसा भी कहा जा रहा है कि इनके सतोषप्रद स्पष्टीकरण पर ही राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ से प्रतिबध हटना निर्भर करता है।

राजधानी में अपने अर्द्ध-मास के वास के पश्चात् मेरी धारणा बनी है कि सघ पर से प्रतिबध हटने अथवा लगे रहने का प्रश्न केंद्रीय सरकार की ४ फरवरी १९४८ की विज्ञप्ति में उल्लिखित कारणों की सत्यता-असत्यता पर अथवा इन नए प्रश्नों के विषय में मेरा जो स्पष्टीकरण बताया जा रहा है, उनके सतोषप्रद अथवा असतोषप्रद होने पर निर्भर नहीं है। अभी तक मेरी जो धारणा बनी है, उससे मैं समझता हूँ कि कुछ अन्य स्वार्थ कार्य कर रहे हैं। जब सभी व्यक्तियों को यह स्पष्ट है कि सरकारी विज्ञप्ति में बताए गए कारण पूर्णतया काल्पनिक और असगत हैं और निष्पक्ष जॉच के सामने प्रमाणित नहीं हो सकते, तब वही स्वार्थी तत्त्व अपनी स्थिति डावाँडोल होती देख सघ पर प्रतिबध लगे रहने के नवीन तथा अनावश्यक कारण निर्माण कर रहे हैं। साथ ही, जनता को एक स्वार्थत्यागी शिक्षित वर्ग की

अत्यावश्यक सेवाओं से वंचित कर रहे हैं।

इस संबंध में कम से कम इतना कहना आवश्यक है कि इतने दिन बाद भिन्न कारण बताकर एक अन्याय को बनाए रखना अनुचित है। तब भी मैं अपने देशवासियों के विचारार्थ नव-उत्पन्न प्रश्नों पर अपने विचार उपस्थित करता हूँ।

प्रारंभ में मैं स्पष्ट कर दूँ कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ देश की राजनीतिक सत्ता हस्तगत करने की आकांक्षा लेकर चली हुई एक राजनैतिक संस्था नहीं है। अपने जीवन के इन वर्षों में यह संस्था राजनीति तथा उससे संबंधित दलबंदी तथा सत्ता-संघर्ष से दूर रही है। इसके द्वार सभी हिंदू-बंधुओं के लिए खुले हुए हैं, भले ही वे चाहे जैसे राजनैतिक विचार रखते हों। इसके सदस्यों को इस बात की स्वतंत्रता है कि वे विचारपूर्वक कोई भी राजनैतिक मत रख सकते हैं और अपनी इच्छानुसार किसी भी संस्था में काम कर सकते हैं। इसके सदस्यों से केवल यह अपेक्षित है कि वे हिंदुओं की एकता तथा संस्कृति में विश्वास रखें और उसके लिए कार्य करें तथा अपनी सांस्कृतिक परंपरा की सुदृढ़ भित्ति पर सभी व्यक्तियों के संबंध में अपने अंदर चिरबंधुत्व का भाव निर्माण करने का प्रयत्न करें।

इस पृष्ठभूमि के साथ हमारे स्वाभाविक विकास के मार्ग में जो प्रश्न उपस्थित किए गए हैं, उनके विषय में मैं अपनी स्थिति को प्रकट करता हूँ-

१) ध्वज- राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विषय में ध्वज के संबंध में अत्यंत प्रयत्नपूर्वक भ्रम फैलाया जा रहा है। विधान-परिषद् ने यह निर्णय कर लिया है कि हमारे राज्य का ध्वज कैसा हो। स्वातंत्र्य-प्राप्ति के पश्चात् राज्य ने उस ध्वज को स्वीकार किया है और इस कारण वह ध्वज इस देश के नागरिकों का श्रद्धा-भाजन है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का अपना ध्वज है, जो कि हिंदू जाति की सांस्कृतिक एकता निर्माण करने के उसके उद्देश्य का प्रतीक है। इस कारण वह स्वाभाविक पुरातन भगवाध्वज है, जो हिंदू संस्कृति के त्याग और आत्मसमर्पण की भावना का दिग्दर्शक है। सभी गैर सरकारी संस्थाओं का अपना अलग ध्वज है। कांग्रेस का भी है, जो राज्यध्वज से भिन्न है। निस्संदेह ऐसा होना चाहिए। राज्यध्वज का उपयोग केवल राजकीय कार्यो तथा उत्सवों में राजकीय भवनों पर तथा अधिकृत राज्य अधिकारियों द्वारा ही होना

चाहिए, किसी भी गैर सरकारी सस्था अथवा व्यक्ति द्वारा नहीं। सचमुच किसी गैर सरकारी सस्था अथवा दल को, चाहे वह कितनी बडी अथवा जनप्रिय ही क्यों न हो, राज्यध्वज अथवा उसके ही समान किसी ध्वज को, जिसके कारण जनता के मन में भ्रम उत्पन्न हो, उपयोग करने का अधिकार नहीं है। इस कारण अपने ध्वज के प्रति परिपूर्ण भक्ति रखते हुए राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ, राज्य का अग होने के कारण राज्य-ध्वज के प्रति सपूर्ण श्रद्धा रखता है और मैं विना किसी सकोच के कह सकता हूँ कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का प्रत्येक सदस्य किसी भी आक्रमणकारी से राज्य-ध्वज की रक्षा करने के लिए अपना जीवन सर्प दे देगा।

२) जनतात्रिक शासन-व्यवस्था पर विश्वास— समय ने यह सिद्ध कर दिया है कि जनतत्र राज्य ही सबसे श्रेष्ठ है तथा अन्य सभी प्रकार की राज्य-पद्धतियों से अधिक सफल तथा चिरस्थायी होता है। इस कारण राजनीति में तथा राजनीतिक सस्थाओं के लिए जनतत्रात्मक ढग ही सर्वोत्तम और आवश्यक है। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने पूर्णतया सास्कृतिक सस्था होने के कारण तथा राजनीतिक क्षेत्र से पूर्णतया वाहर होने के कारण, अपना निर्माण पारपरिक विश्वास और स्नेह की भावना पर किया है तथा अपना सदा ही वढते रहनेवाला पारिवारिक जीवन का ढग रखा है। अभी तक यह ढग भी पूर्णतया सतोषप्रद रहा है।

३) राज्य असाप्रदायिक सस्था है— हमारी एक हिंदू सस्था है। हिंदू के लिए राज्य सदा असाप्रदायिक रहा है और अभी भी है। हिंदू-धारणा से दूर जाने के कारण प्रथम वार अशोक के समय में साप्रदायिक धार्मिक राज्य का निर्माण हुआ था। वाद में विभिन्न मुसलमान वशों के अहिंदू राज्य तथा मुगलों के सामाज्य साप्रदायिक राज्य थे। यह ज्ञात रहना चाहिए कि विदेशी सत्ता के विरुद्ध शिवाजी के नेतृत्व में हिंदू शक्ति का जो निर्माण हुआ था, वह हिंदू-परपरा के अनुसार एक असाप्रदायिक राज्य था, जहाँ हिंदू और मुसलमान राज्य में उच्च स्थान प्राप्त कर सकते थे और उनका धर्म नागरिक जीवन के लिए वाधास्वरूप न था। सचमुच, अपने देश में राज्य के असाप्रदायिक होने पर उसे 'असाप्रदायिक' विशेषण देकर महत्त्व देना निरर्थक है तथा यह अपने देश की विशेषता, हिंदू-जाति की परपरा और सस्कृति का

दु खप्रद अज्ञान ही प्रदर्शित करता है।

४) हिंदू-राज्य– राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ देश के अहिंदू नागरिकों से शून्य हिंदू राज्य का प्रतिपादन नहीं करता। हमने इस विचार को 'ऊँची उडान भरनेवाली कल्पना तथा प्रबल भावावेश से उत्पन्न एक भूल' ही समझा है तथा इस विषय पर विचार का अनौचित्य समझकर सदा इसकी अवहेलना ही की है।

५) गुप्त कार्य– हमारा विश्वास है कि कोई भी प्रगतिशील सस्था बहुत समय तक जीवित तथा वृद्धिगत नहीं रह सकती, यदि वह अपना कार्य गुप्त रीति से करे। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ द्वारा गुप्त रीति से कार्य करने का प्रश्न इस कारण भी उपस्थित नहीं होता, क्योंकि उसका कार्य सास्कृतिक है और उसकी कोई राजनीतिक महत्त्वाकाक्षा नहीं रही है।

६) गैर-सरकारी सेना– सेना का निर्माण राज्य का कार्य है, किसी गैर सरकारी सस्था का नहीं। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने लाठी तथा इसी प्रकार का सुनिश्चित भारतीय शारीरिक व्यायाम तथा साधारण ड्रिल का उपयोग बधुत्व तथा नागरिक अनुशासन निर्माण करने की दृष्टि से किया था, जब तक इसके उपयोग की न्यायत नागरिकों को अनुमति थी। इस कारण राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के अनुशासित कार्य की सेना तथा उसके विधान से तुलना करना उचित नहीं।

७) वर्तमान सरकार को उलटकर हिसा द्वारा सत्ता प्राप्त करने का प्रयत्न– यह विचार केवल कपोलकल्पित है। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सास्कृतिक रूप को तथा उसके द्वारा राजनीतिक आकाक्षाओं से अपने को पृथक रखने के प्रयत्न को दृष्टि में रखते हुए यह प्रश्न उत्पन्न ही नहीं होता।

ये वे प्रश्न हैं, जिनके विषय में उत्तरदायी व्यक्तियों द्वारा कहा गया है कि इनके सबध में भ्रमात्मक धारणाओं को दूर करना आवश्यक है। मैं समझता हूँ कि इसके बाद मेरे देश-बधुओं को विश्वास हो जाएगा कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर अनुचित दोषारोपण किया गया है तथा उसके सबध में भ्रामक प्रचार किया गया है और वे इस सस्था को पुनर्जीवित करने के मेरे वैध प्रयत्नों की भी सराहना करेंगे।

प्रमाणो को प्रकट करने की माँग करने हेतु लिखा गया पत्र

२० बाराखभा रोड, नई दिल्ली
३ नवबर १९४८

माननीय प जवाहरलाल नेहरू,

मान्यवर,

आपका २७ सितबर १९४८ का पत्र, जिस पर आपकी ओर से श्री ए वी पै के हस्ताक्षर थे, मुझे यथासमय प्राप्त हुआ। ४ सितबर के मेरे पत्र के उत्तरस्वरूप आपका यह पत्र मुझे ४ अक्तूबर को मिला। तब तक इतनी देर हो चुकी थी कि आपके इग्लैंड जाने के पूर्व उसका उत्तर देना सभव नहीं था। अत अब जब आप दिल्ली वापस आने को हैं, इस आशा से इस पत्र को भेज रहा हूँ कि आप इसपर ध्यानपूर्वक विचार करेंगे।

२ सबसे पहले मैं यह कह देना चाहता हूँ कि सयुक्त प्रात की सरकार ने मुझे भेजे गए तथाकथित 'नोट' के सबध में सही जानकारी केंद्रीय सरकार को नहीं दी है। मुझे तथा सयुक्त प्रात में काम करनेवाले मेरे किसी पूर्व सहयोगी को कभी भी इस प्रकार का कोई 'नोट' प्राप्त नहीं हुआ। यदि वह सचमुच भेजा गया है, तो उसका क्या हुआ, यह मेरे लिए एक रहस्य है। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर प्रतिबध लगाए जाने के बहुत पहले एक अभियोग-पत्र के सबध में, जिसे सयुक्त प्रातीय सरकार हमारे विरुद्ध तैयार कर रही थी के बारे में मैंने भी बहुत कुछ सुना था। महीनों बीत गए किंतु वह सामने नहीं आया। इसका अर्थ क्या मैं यह करूँ कि सयुक्त प्रात तथा अन्य प्रातों की सरकार के पास जो तथाकथित प्रमाण हैं, उनका अधिकाश उसी प्रकार से प्रामाणिक है, जैसा कि वह 'रहस्यपूर्ण नोट'?

३ प्रमाणों के सबध में मैं यह भी कह दूँ कि सयुक्त प्रातीय सरकार के मुख्यमत्री के पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी श्री गोविंद सहाय ने 'नाजी टेकनीक और आर एस एस ' शीर्षक से एक पुस्तिका हिंदी में लिखी है। वे उच्च सरकारी अधिकारी के पद से उसका खूब प्रचार कर रहे हैं। उसपर एक दृष्टि डालने से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि वह आदि से अत-तक मनगढत और कुत्सित झूठ से भरी पडी है। यह है प्रमाणों का स्वरूप, जो सयुक्त प्रातीय सरकार के पास है।

४ यदि वास्तव में केंद्रीय और प्रातीय सरकारों के पास राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ या उसके कतिपय सदस्यों के विरुद्ध दोषी प्रमाणित करने योग्य प्रमाण हों, तो क्या यह उचित नहीं है कि सरकार इन तथाकथित अपराधियों के विरुद्ध सफल वैधानिक कार्यवाही करे? जहाँ तक मैं जानता हूँ, पिछले इन कई महीनों में विभिन्न सरकारों ने असाधारण विशेष कानून का उपयोग करने का मार्ग ही स्वीकार किया और दड-विधान की धाराओं के अतर्गत किसी व्यक्ति या व्यक्तिसमूह पर कानूनी कार्रवाई नहीं की। एक मुकदमे, जिसका बहुत ढोल पीटा गया था और जो मुजफ्फरनगर के 'काधला-काड' के नाम से विख्यात है, का निर्णय पिछले सप्ताह ही हो गया है। प्रतीत होता है कि सयुक्त प्रातीय सरकार के तथाकथित अभियोग-पत्र का सपूर्ण आधार यही था। न्यायाधीश के सुघटित तथा सतुलित निर्णय पर दृष्टिपात मात्र से ही 'राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ' के कुछ सदस्यों के विरुद्ध 'महान प्रमाण' की असत्यता स्पष्ट हो जाती है।

५ स्वतत्र राज्य की वैधानिक सरकार नागरिकों के जिन मूलभूत अधिकारों को प्रतिपादित करती है और अपने विचारों के अनुसार कार्य करने तथा उन्हें शातिपूर्ण तरीकों से प्रचारित करने का उनका अधिकार मानती है। उसके अनुसार हम अपना अधिकार समझते हैं कि सरकार उन प्रमाणों को हमारे सामने उपस्थित करे, जिससे हम उन अभियोगों का निराकरण कर सकें। किसी भी सुसभ्य सरकार, जैसी कि अपनी है, के लिए यह सर्वथा अनुचित है कि वह किसी भी वर्ग अथवा व्यक्ति पर बिना पर्याप्त पुष्ट प्रमाण उपस्थित किए गभीरतम अभियोग लगाए और अभियुक्त को अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करने का अवसर भी न दे। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सबध में मुझे बाध्य होकर यह कहना पड रहा है कि हम पर लगातार अभियोग लगाते जाना, सरकारी प्रतिबध की आड में व्यक्तियों तथा गुटों को हमारे विरुद्ध गदा प्रचार करने का अवसर देना, साथ ही जनसुरक्षा कानून जैसे असाधारण कानूनों द्वारा सब प्रकार से हमारा मुँह बद करना हमारे साथ भारी अन्याय है। मैं समझ नहीं पाता कि जिस सरकार को हम प्रेम और आदर की दृष्टि से देखना चाहते हैं उसे इस प्रकार के कार्य कैसे शोभा देंगे?

६ इस सक्षिप्त पत्र में मैंने यही निर्देशित करने की चेष्टा की है कि वे 'प्रमाण', जैसा उनका स्वरूप हैं अविश्वसनीय हैं। इन 'प्रमाणों' की एक बार जाँच-पडताल कर वास्तविक तथ्य को निर्धारित करना होगा। मेरा

निवेदन है कि इस प्रश्न पर आप हमारे प्रधानमत्री के नाते पक्षपातरहित, न्यायपूर्ण एव विधायक दृष्टिकोण से विचार करें तथा मुझे और मेरे साथियों पर लगाए गए आरोपों का निराकरण करने तथा अपनी निर्दोषिता सिद्ध करने का अवसर अवश्य देंगे। साथ ही मेरा यह भी निवेदन है कि लगाए गए आरोपों की प्रमाणहीनता को देखते हुए राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर लगाया गया प्रतिबध उठा लिया जाए। मैं यह भी निवेदन करूँगा कि इस सबध में अब नई-नई बातें जोडकर प्रस्तुत न की जाएँ, क्योंकि ऐसा करना न्याय एव विधान की स्थापित परपरा के प्रतिकूल होगा।

आपसे प्रत्यक्ष मिलकर यदि स्थिति भली-भाँति समझाने का शीघ्रातिशीघ्र अवसर मुझे मिल सका, तो मैं आपका बडा कृतज्ञ रहूँगा। भेंट करने के समय एव तिथि की आप कृपया सूचना देंगे।

शीघ्र प्रत्युत्तर की आशा में–

भवदीय
मातृसेवा में सहयोगी
मा स गोलवलकर

३ नवबर को दिल्ली के जिला मैजिस्ट्रेट से सूचना प्राप्त हुई कि प्रधानमत्री प नेहरू से मिलने के लिए यदि श्री गुरुजी दिल्ली मे रहना चाहते हैं तो रह सकते हैं परतु उनकी गतिविधियो पर जैसे बधन मध्यप्रदेश सरकार ने लगाए थे वैसे बधन लगाने पडेगे। इन बधनो को स्वीकार करना श्री गुरुजी ने अस्वीकार किया परतु हेतुपूर्वक उनका उल्लघन भी नहीं किया। ५ नवबर को श्री गुरुजी ने सरदार पटेल को एक पत्र लिखकर अपनी भूमिका स्पष्ट की। पत्र इस प्रकार था–

२०, बाराखभा रोड, नई दिल्ली
५ नवबर १९४८

मान्यवर सरदार पटेल जी,

सादर प्रणाम।

आपके दिल्ली से मुबई के लिए प्रस्थित होने के पश्चात् आपकी ओर से कुछ सूचनाएँ मेरे पास आईं। उनका साराश यह है कि 'मेरा दिल्ली आने का कार्य हो चुका है। प्रातों से राय मँगाई थी। वह सघ से प्रतिबध

उठाने के प्रतिकूल आई है। अब मैं यहाँ न रहकर नागपुर लौट जाऊँ। क्योंकि मेरे ऊपर के निर्बंध केवल इसलिए उठाए गए थे कि मैं दिल्ली आकर आपसे भेंट कर सकूँ और संघ से प्रतिबंध हटाने के लिए समक्ष प्रार्थना कर सकूँ। अब वह काम हो चुका है। सब प्रांतों की राय प्रतिकूल होने से अब आगे वार्तालाप की आवश्यकता नहीं है। अतः अब आप मुझसे मिलेंगे भी नहीं।' आपने मुझसे फिर न मिलने का निश्चय किया है, यह बात जानकर ही यह छोटा-सा पत्र सेवा में भेज रहा हूँ।

एक बात प्रथम स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मुझ पर लगाए गए निर्बंध केवल किसी कार्य-विशेष के लिए हटाए जाने का मुझे पता नहीं। मैंने माननीय पंडित द्वारकाप्रसाद जी मिश्र से यह बात बहुत पहले, अगस्त में कह रखी थी कि केवल दिल्ली जाने की अनुमति या उस शर्त पर निर्बंधों का उठाया जाना मैं नहीं चाहता। सरकार अच्छा-बुरा सोचकर बिना शर्त प्रतिबंध उठाए तो ठीक। अर्थात् प्रतिबंध हटते ही संघ को वैध कराने के प्रयत्नों में मैं प्रथम दिल्ली जाऊँगा, यह मैंने कहा था। परंतु इस शर्त पर निर्बंध उठे, यह मैं मान्य करने को तैयार नहीं था। अतः बिना शर्त निर्बंध उठने का समाचार पढ़ने के बाद ही मैं यहाँ आया।

दूसरी बात, अनेक बार अनेक लोग अनेक प्रकार के प्रश्न पूछते रहे। मैंने उनका संकलित उत्तर २-११-१९४८ को दो वक्तव्य प्रसारित करवाकर देने का प्रयत्न किया है। दोनों की प्रतियाँ पत्र के साथ भेज रहा हूँ। उन्हें आप ध्यानपूर्वक पढ़ें, यह प्रार्थना है।

तीसरी बात-भिन्न-भिन्न प्रांतों से आपने संघ से प्रतिबंध उठाने के विषय में राय मँगवाई थी और मुझे वह बताया भी था। उसी समय मैंने यह कहा था कि यह प्रश्न तो केंद्र सरकार का और विशेष रूप से केवल आपका ही है। प्रतिबंध डालते समय जहाँ तक सब जानते हैं, केंद्र-सरकार ने ही अपनी इच्छा से अपनी आज्ञा प्रकट की और तत्पश्चात् दूसरे दिन अन्य प्रांतों में तथा कुछ काल के अनंतर रियासतों में भी वह आज्ञा जारी की गई। अनेक प्रांतों के मंत्रियों ने मेरे मित्रों से यही कहा है कि वे उदासीन हैं। कुछ प्रांतों में यह अवश्य कहा गया कि हम विरुद्ध हैं। परंतु सब लोगों ने यही अंतिम बात कही कि यह तो केंद्र-सरकार का प्रश्न है। हम उनके आदेश के अनुसार चलेंगे। यही बात मैंने भी आपसे कही थी कि वास्तव में केंद्र-सरकार के अधिकार का ही यह प्रश्न है, बाकी के प्रांत तो केंद्र-सरकार के निर्देशानुसार चलेंगे।

अब प्रातीय सरकारें केंद्रीय सरकार की ओर और केंद्रीय सरकार प्रातीय सरकारों की ओर अगुलिनिर्देश करते हुए इस प्रश्न को केवल टालने में ही सफल हो सकते हैं, परतु किसी का समाधान हो सके ऐसे निर्णय पर तो नहीं पहुँच सकेंगे। ऐसा होना कहाँ तक वाछनीय है, आप स्वय सोचें।

सघ की निर्दोपिता, उपयुक्तता तथा नितात आवश्यकता स्वय ही प्रमाणित हो जाएगी, हो रही है। अपप्रचार से सत्य दीर्घकाल तक ढका नहीं जा सकता।

मैं एक बार फिर यह निवेदन करना चाहता हूँ कि सघ पर लगाए गए सब आरोप निराधार, प्रमाणशून्य एव मिथ्या हैं। पक्षाधता और स्वार्थ ने ही उन्हें जन्म दिया है। उनके अत्यधिक प्रचार से ही आप जैसे गभीर पुरुप का भी मन विचलित हो उठा प्रतीत होता है। मैं अपने कार्य को जानता हूँ। उसमें किस उच्च श्रेणी का भाव, सास्कृतिक दृढता, त्याग, नि स्वार्थ जनसेवा और नितात राष्ट्रप्रेम से भरे हुए व्यक्तियों, विशेप कर युवकों का निर्माण होता है, उनमें कितना विशुद्ध प्रेम प्रकट होता है, उदात्त चरित्र विकास पाता है, इसका मैं नित्य अनुभव करता आया हूँ। इस पवित्र कार्य पर घृणित आरोप लगा देखकर मैं आश्चर्य और दु ख से व्यथित हूँ। इतना अपप्रचार होने के बाद अनेकों अविवेकी व्यक्तियों द्वारा प्रत्यक्ष आघात होने के बाद भी अब तक जो सयम सघ के स्वयसेवकों ने प्रकट किया और आपसी झगडों तथा कटुता का निवारण सभ्यतापूर्वक अपने विवेक से किया, यही एक उदाहरण सघ के विशुद्ध भावों को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है।

अस्तु, देश की नाजुक अवस्था को देखकर और उज्ज्वल भविष्य के निमाण के लिए विघटन नष्ट करने की आवश्यकता को दृष्टि में रखकर मैंने शाति से चलने की सब स्वयसेवक बधुओं को सूचना दी और शातिपूर्ण मार्ग से समझौता हो– इस निमित्त प्रयत्न किया। राजनीतिक क्षेत्र के कार्यक्रम और वर्तमान काल में शासनारूढ सस्था काग्रेस ओर सास्कृतिक क्षेत्र में असामान्य बधुभाव, दृढ राष्ट्रप्रेम तथा स्वार्थ-शून्यता का निर्माण करने में सफलता पानेवाले राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के बीच वैमनस्य न हो, स्नेह ही रहे, वे परस्पर पूरक हों और इनका कहीं पवित्र मिलन हो, इसलिए मैंने अपनी पूरी शक्ति से प्रयत्न किया और सहकार्य का हाथ आगे बढाया। मुझे अत्यत दु ख से कहना पडता है कि मेरी सद्भावनाओं की आपकी ओर से उपेक्षा की गई। मेरे मन की इच्छा, दोनों प्रवाहों का सयोग अतृप्त

रह गई। हो सकता है कि परम करुणामय परमात्मा मेरे लिए किसी अन्य मार्ग की ओर सकेत कर रहा हो और सभवत उसी में इस देवभूमि भारतवर्ष के भाग्योदय के बीज हों।

मार्ग विभक्त होते समय मेरी यह इच्छा है कि एक बार आपके दर्शन करूँ। यद्यपि आपने मुझसे न मिलने का विचार किया है, तथापि मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप एक अवसर मुझे दें, ताकि शिष्ट-सप्रदाय के अनुसार मैं आपसे विदाइ ले सकूँ। सघ को वैध कराने के विषय में आपके और मेरे बीच में यद्यपि कुछ मत भिन्नता उत्पन्न हो गई है, मैं व्यक्तिगत रूप से आपको बहुत मानता हूँ और केवल इसी दृष्टि से विभक्त मार्ग, अनिच्छा से ही क्यों न हो, अपनाने के समय आपसे मिल कर जाने की इच्छा है।

एक छोटी सी बात और है। २-११-१९४८ को सायकाल दिल्ली जिलाधीश ने मुझे निर्वंधाज्ञा भेजी थी। प्रथम परिच्छेद में लिखी घटनाओं से सिद्ध है कि आपसे परामर्श कर आपकी सूचना के अनुसार ही यह किया होगा। इस नीति की मैंने आशा नहीं की थी। अत्यत खेद का अनुभव करते हुए मैंने वह आज्ञापत्र वापस कर दिया है, क्योंकि मैं उसे अकारण व अन्याय समझता हूँ।

और सब कुशल है। हम सबका बुद्धिदाता श्री परमात्मा सब मगल करे। त्वरित पत्रोत्तर की प्रतीक्षा है।

आपका शुभाकाक्षी

(मूल अग्रेजी) मा स गोलवलकर

प्रधानमत्री प नेहरू से मिलकर सब बाते स्पष्ट करना सभव होगा ऐसा सोच कर श्री गुरुजी ने उन्हे निम्नलिखित पत्र लिखा था—

२० बाराखभा रोड, नई दिल्ली,
८ नवबर १९४८

माननीय प जवाहरलालजी नेहरू,

प्रणाम।

मध्यप्रातीय सरकार द्वारा मुझ पर लगाए गए बधनों के हटने के पश्चात् मैं तुरत ही आवश्यक व्यक्तियों से मिलने के लिए दिल्ली आया। मैं

आपके विदेश से लौट आने की प्रतीक्षा करता रहा, जिससे मैं आपसे प्रत्यक्ष भेंट का अवसर प्राप्त करूँ। इस भेंट का जो भी परिणाम हो, मैं यह आवश्यक समझता हूँ कि अपने तथा जिस कार्य का मैं प्रतिनिधित्व करता हूँ, उसके विषय में प्रचलित भ्रमों के निराकरण का प्रयत्न करूँ।

अक्तूबर १६४७ में जब मैं आपसे मिला था, मैंने कहा था कि मैं आपसे फिर मिलूँगा। किंतु मेरे अनवरत भ्रमण के कारण यह सभव न हुआ। वह अवसर अब मुझे मिला है। आशा है कि आप मुझे भेंट की तिथि और समय सूचित कर अनुगृहीत करें। आपसे मिलने पर मुझे गत अक्तूबर १६४७ में दिए हुए अपने इस आश्वासन को फिर से दुहराने का अवसर मिलेगा, जिसमें मैंने इस नाजुक समय में सरकार के साथ बिना किसी शर्त के सहयोग करने की बात कही थी।

शीघ्र उत्तर की प्रतीक्षा में–

भवदीय
मातृसेवा में सहयोगी
मा स गोलवलकर

प्रधानमत्री का उत्तर

क्र १३६६ प्र म

१० नवबर १६४८

प्रिय श्री गोलवलकर,

मुझे आपके ३ और ८ नवबर के पत्र मिले। आतरिक मामलों से भारत सरकार के गृह विभाग का ही सबध है। अत राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ की समस्या को उसी ने हल करना है। मैं समझता हूँ कि उन्होंने इस प्रश्न पर पर्याप्त ध्यान दिया है और प्रातीय सरकारों से परामर्श भी किया है। मेरा सुझाव है कि आपको उसी विभाग से सीधे पत्र-व्यवहार करना चाहिए। आपने मेरे पास जो कागज-पत्र भेजे हैं, वे मैं उनके पास भेज रहा हूँ।

गत वर्ष केंद्रीय तथा प्रातीय सरकारों को राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के उद्देश्य और कार्यकर्ताओं के सबध में बहुत सी जानकारी प्राप्त हुई। आपने सघ की ओर से जो कुछ कहा है, उसका प्राप्त जानकारी से सामजस्य नहीं है। सच तो यह दिखाई देता है कि सघ के घोषित उद्देश्यों का वास्तविक उद्देश्यों और उसके लोगों द्वारा किए जानेवाले कार्यकलापों से

जरा भी सबध नहीं है। यह भी प्रतीत हुआ कि ये 'वास्तविक उद्देश्य' भारतीय ससद के निश्चयों और भारत के प्रस्तावित सविधान की धाराओं के सर्वथा विपरीत हैं। हमारी जानकारी के अनुसार वे कार्यकलाप राष्ट्रविरोधी और बहुधा विध्वसात्मक तथा हिंसापूर्ण हैं। अत आप यह स्वीकार करेंगे कि केवल आग्रहपूर्ण कथन बहुत उपयोगी नहीं हो सकता।

मैं आपसे प्रसन्नता के साथ मिलता, किंतु यूरोप से लौटने के बाद अत्यधिक व्यस्त होने के अतिरिक्त मुझे यह प्रतीत नहीं होता कि इस प्रकार की भेंट से कोई लाभ हो सकेगा। चूँकि प्रश्न गृह विभाग के हाथ में है, अत यह उचित होगा कि आप उससे सीधे पत्र व्यवहार करें।

भवदीय

(मूल अंग्रेजी) जवाहरलाल नेहरू

निरतर किए जानेवाले अन्याय पर श्रीगुरुजी के विचार

२० बाराखभा रोड, नई दिल्ली,
१२ नवबर १९४८

माननीय प जवाहरलाल नेहरू,

प्रणाम।

१० के त्वरित कृपा-पत्रोत्तर के लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मैं समझता हूँ कि यह पत्र पूर्ण विचार के पश्चात् लिखा गया होगा। यह पत्र प्राप्त होने पर मुझे पत्र-व्यवहार जारी रखने की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि इस पत्र से प्रकट होता है कि आप अब इस प्रश्न पर विचार करने को ही तैयार नहीं हैं।

किंतु आपके दिनाक १० के कृपा-पत्र के कारण उपस्थित कुछ बातों को आपके सामने रखना मेरे लिए आवश्यक हो गया है। मुझे प्रतीत होता है कि सरकार का यह कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है कि उसे राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सबध में हम सब लोगों, उसके सभी सदस्यों की अपेक्षा अधिक जानकारी है और गत वर्ष उसे बहुत अधिक जानकारी प्राप्त हुई है। इस अवधि में नौ महीने या इससे कुछ अधिक समय से राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ कार्य ही नहीं कर रहा और जहाँ तक सदस्यों का व्यक्तिगत

सबध है, सभी प्रमुख लोग इस अवधि में अधिकाश समय जेल में थे और किसी भी प्रकार की कार्यवाही नहीं कर सकते थे। आपके कथनानुसार आपके पास जिस कार्यवाही के सबध में विपरीत जानकारी पहुँची है, उसमें सच्चाई का अश भी नहीं हो सकता। मुझे आशा है कि आप अपने पत्र की इस स्पष्ट असगति पर अवश्य ध्यान देंगे।

प्रतीत होता है कि उक्त जानकारी से आपने यह समझा है कि हमारा कार्य राष्ट्रविरोधी है। यह एक गभीर अभियोग है, जिसे किसी पर सहज में लगाना उचित नहीं। इसके लिए ठोस तथा तथ्यपूर्ण प्रमाणों की आवश्यकता है। केवल भावनाएँ और सम्मतियाँ इस विषय में कोई कीमत नहीं रखतीं। जिनपर अभियोग लगाए गए हैं, उन्हें उसकी जॉच-पडताल करने की अनुमति दिए बिना बार-बार केवल यह कहना कि सरकार के पास जानकारी है, व्यर्थ है। हम दोनों इस बात को स्वीकार करें कि केवल आग्रहपूर्वक कथन अधिक उपयोगी नहीं होगा। जब तक सरकार केवल कहती और अभियोग लगाती रहेगी, किंतु अखडनीय प्रमाणों से उसे हम पर साबित नहीं करेगी, हम केवल इतना ही कह सकते हैं और वह न्यायपूर्ण भी होगा कि ये सारे आरोप झूठे हैं और हमारे साथ अन्याय किया जा रहा है।

यदि कोई न्यायाधीश किसी व्यक्ति का किसी अपराध के लिए, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, बिना प्रमाण बताए केवल यह कहकर कि उसके विरुद्ध बहुत कुछ जानकारी है, दड देता है तो न्यायाधीश का वह कार्य स्वत निंदनीय हो जाता है। जब एक भी प्रमाण न बताते हुए ऐसे गभीर आरोप लगाए जाते हैं, तब हम क्या कहेंगे? क्या हम उस अधयुग की ओर वापस लौट गए हैं, जब कुछ व्यक्तियों और दलों की भावनाएँ, सम्मतियाँ और इच्छाएँ ही न्याय्य और युक्तिसगत हुआ करती थीं और किसी भी व्यक्ति या वर्ग को केवल अपने मनोरजन के लिए मृत्युदड तक दिया जाता था? यह ऐसा अवैधानिक कार्य है, जिससे अधिक की हम कभी कल्पना भी नहीं कर सकते। क्या भारतीय ससद के निश्चयों से यह कोसों दूर नही है?

जहाँ तक मैं जानता हूँ कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के उद्देश्यों में कोई ऐसी बात नहीं है, जिसपर भारतीय ससद आपत्ति कर सके। ससद के जो निश्चय अब तक प्रकाशित हो चुके हैं, उनके विरुद्ध भी उसमें कुछ नहीं है। जहाँ तक प्रस्तावित सविधान की धाराओं के विपरीत होने की बात,

है, अधिक अच्छा होता, यदि वह बात हमारे प्रधानमंत्री द्वारा न लिखी गई होती। यह वैसा ही विचित्र है, जैसा एक वर्ष या इससे अधिक अवधि के बाद जन्म लेनेवाले व्यक्ति की हत्या का प्रयत्न करने के अपराध में किसी व्यक्ति को दड देना।

एक बात और है कि हमारे घोषित उद्देश्यों और कार्यकलापों से अलग आप किसे हमारे वास्तविक उद्देश्य और कार्यकलाप कहते हैं, यह हम नहीं जानते। हमारे लिए तो हमारे घोषित उद्देश्य ही वास्तविक हैं और हमारे उन वास्तविक उद्देश्यों को हमने सदा ही स्पष्ट कहा है। वास्तविकता को भीतर छिपाकर दूसरा चोला पहनना, जो अभिप्रेत नहीं है, उसे ही प्रकट करना, जिसे कभी प्रकट नहीं किया, वह अभिप्रेत मानना, विचार, शब्द तथा कार्य में कभी सामजस्य न रखना, ये सब कुछ छद्मवेष के स्वरूप हैं। और हो सकता है कि ये चतुर कूटनीतिज्ञ तथा राजनीतिज्ञ के लिए आवश्यक गुण हों। हम लोग राजनीति से अलग सास्कृतिक क्षेत्र में चरित्र तथा एकता के निर्माण के लिए अपने समाज के साधारण सेवक मात्र हैं। हमारे कार्य में उस कला के लिए स्थान नहीं है, जिसमें घोषित उद्देश्यों में वास्तविक उद्देश्य छिपाया जाता है।

कुछ स्पष्टवादिता के लिए आप हमें क्षमा करें। किंतु निरतर अन्याय, जॉच के लिए सामने न आ सकनेवाली बहुत कुछ जानकारी का बराबर ढोल पीटते रहने तथा आपके प्रत्येक पत्र में कुछ अनोखे और पहले न सोचे हुए आरोपों को लगाए जाने से मैं अपनी कुछ उत्कट भावनाएँ बाध्य होकर प्रकट कर रहा हूँ। सरकार के विशिष्ट रुख के कारण हमारे कार्य के साथ इतना अधिक अन्याय किया गया है कि वह आगे चलकर अनिवार्यत बुरी परिपाटी उपस्थित करेगा। मुझे डर है कि यह अभागा देश निरतर होनेवाले कलह तथा पारस्परिक अविश्वास में डूब जाएगा। पिछले एक हजार वर्ष का इतिहास इन कलहों से भरा हुआ है, जिसका परिणाम पराजय और हमारे अध पतन में हुआ है। मुझे आशा है कि अब, जब देश पिछली दस शताब्दियों की विच्छिन्नावस्था से पहली बार ऊपर उठ रहा है, हम लोग अधिक सुज्ञ और अधिक विवेकपूर्ण बनकर अपने देश के उसी दुर्भाग्यपूर्ण अश को दूसरे नाम से दुहराने नहीं देंगे।

बस, यदि मुझे आपसे मिलने का अवसर दिया गया होता तो मैं बहुत प्रसन्न और कृतज्ञ होता। किंतु जैसी आपकी इच्छा। प्रतीत होता है

कि हम लोगों के मार्ग विलग हो रहे हैं। माता की पूजा विभिन्न मार्गों से की जा सकती है। सभी माग आज नहीं तो कल माता के पवित्र चरणों पर ही जा मिलेंगे। अपने मार्ग शीघ्र एक हो जाएँ इसके लिए मैंने प्रयत्न और आशा की थी, किंतु माता की यह इच्छा नहीं दिखाई देती। मैं उसकी आज्ञा मानूँगा और आपके प्रति पूर्ण प्रेम और आदर के साथ उस मार्ग पर, जिसका भगवती मुझे सकेत देगी, चलने की तैयारी करूँगा।

आपके विचारपूर्ण उत्तर से मैं उपकृत रहूँगा।

भवदीय

मातृसेवा में सहयोगी

(मूल अंग्रेजी) मा स गोलवलकर

श्री गुरुजी का दिल्ली मे रहने का निश्चय

२०, बाराखभा रोड, नई दिल्ली,

१३ नवबर १९४८

माननीय प जवाहरलाल जी नेहरू

प्रणाम।

कल शाम को जब साथ का पत्र लगभग तैयार ही था कि गृह विभाग का एक पत्र मुझे मिला, जिसमें मुझे यह सूचित किया गया है कि आपने मुझे १० तारीख को जो पत्र भेजा है, उसके अनुसार प्रतिबध नहीं हटाया जाएगा। आप कहते हैं कि इस प्रश्न पर निर्णय देने के लिए गृह विभाग पूर्णत उत्तरदायी है, किंतु गृह विभाग का निणय स्वतत्र रूप से न होकर आपके पत्र के बल पर होता है, यह एक आश्चर्य है।

मैं यह भी कह दूँ कि गृह विभाग मुझे दिल्ली छोडकर नागपुर जाने के लिए बाध्य कर अन्याय करना चाहता है। आप जानते हैं कि मैं केंद्रीय सरकार से न्याय की माँग करने के लिए यहाँ आया था, क्योंकि इसका मुझे अधिकार है। अवैधानिक निश्चयों की कोई कीमत नहीं। या तो सभी आरोप पूर्णत सिद्ध किए जाएँ अथवा बिना शर्त वापस लेकर प्रतिबध तुरत हटाया जाए।

हम सुसभ्य राज्य होने का दावा करते हैं। ऐसे अवैधानिक निर्णय असभ्य गुण के तानाशाही शासन अथवा किसी सीमा तक विदेशी एकतत्री

शासन में शोभा दे सकते हैं, किंतु मेरी सम्मति में आधुनिक सुसभ्य लोकतांत्रिक सरकार को जो बिना पक्षपात तथा न्याय के साथ नागरिक अधिकारों को कायम रखने का दावा करती है, यह शोभा नहीं देता।

अत हमारे साथ किए गए अन्याय का परिमार्जन होने तक मैंने राजधानी में रहने का निश्चय किया है।

समादर के साथ,

भवदीय

मा स गोलवलकर

गृह सचिव का पत्र

नई दिल्ली,

१२ नवबर १९४८

प्रिय श्री गोलवलकर,

सरदार पटेल ने मुझसे कहा है कि मैं आपके ५ नवबर १९४८ के पत्र तथा उसके साथ की सामग्री की प्राप्ति-सूचना भेजूँ और आपको यह सूचित करूँ कि उन्हें इस बात का बडा दु ख है कि पूर्व निश्चित कार्यक्रम के कारण वे स्वय उत्तर देने में असमर्थ हैं।

आपको अवश्य ही प्रधानमत्री का १० नवबर १९४८ का पत्र मिला होगा। उसमें उन मुख्य विषयों पर, जिनका उल्लेख आपने सरदार पटेल को लिखे अपने पत्र में किया है, पूर्ण प्रकाश डाला गया है। सरदार पटेल को खेद है कि वे आपके साथ हुई पिछली भेंट में लिए हुए अपने रुख को छोडने तथा गृह विभाग के श्री बेडेकर द्वारा मौखिक रूप से आपको सूचित भूमिका त्यागने में असमर्थ हैं। आपके सगठन पर लगाया गया प्रतिबध हटाने में प्रातीय सरकारों ने अपनी असमर्थता प्रकट की है तथा १० नवबर के प्रधानमत्री के पत्र द्वारा आपको सूचित कारणों से भारत सरकार प्रातीय सरकारों को इसके विपरीत सलाह नहीं दे सकती। चूँकि वह कार्य, जिसके निमित्त मध्यप्रातीय सरकार द्वारा आप पर लगाए गए प्रतिबध हटाए गए थे, पूर्ण हो चुका है। इसलिए अब आपका दिल्ली में अधिक रहना आवश्यक नहीं है।

अत मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप नागपुर वापस लौटने

की तुरत व्यवस्था करें। मैं यथाशीघ्र, किंतु कल सायकाल तक अवश्य यह जानना चाहूँगा कि आप इस सबध में क्या प्रबध कर रहे हैं, जिससे हम तदनुसार मध्यप्रातीय सरकार को सूचित कर सकें।

भवदीय

एच वी आर अय्यगार

(मूल अंग्रेजी) सचिव, गृह विभाग

श्री गुरुजी का सरदार पटेल को पत्र

२०, बाराखभा रोड, नई दिल्ली,

१३ नवबर १९४८

माननीय सरदार जी,

प्रणाम।

आपकी ओर से श्री अय्यगार का पत्र कल सायकाल मुझे प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

१० नवबर को माननीय प्रधानमत्री द्वारा मुझे भेजे गए पत्र पर आधारित राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर से प्रतिबध न हटाने का आपका निर्णय मुझे ज्ञात हुआ। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि जहाँ प्रधानमत्री ने अपने पत्र में मुझे यह सूचित किया है कि गृह विभाग को ही उस पर निर्णय करना है, वहाँ आपका निर्णय प्रधानमत्री द्वारा मुझे भेजे गए पत्र पर अवलबित है।

मैं अपने कार्य के प्रति न्याय कराने के लिए दिल्ली आया था, किंतु मुझे उसके स्थान पर विपरीत निर्णय प्राप्त हुआ। यह अवैधानिक निर्णय जनता के मूलभूत अधिकारों की दुहाई देनेवाली सभ्य सरकार को शोभा नहीं देता। प्रश्न पूर्णत गृह विभाग पर सौंपा गया है, अत अब उसके लिए केवल दो मार्ग बचे हैं--

१ राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ को अवैध घोषित करते हुए ४ फरवरी १९४८ को प्रकाशित विज्ञप्ति में कथित आरोपों पर अपना ध्यान सीमित कर सर्वसामान्य प्रमाणों द्वारा उन आरोपों को साबित करें और हमें भी यह अधिकार दें कि हम उन प्रमाणों की जाँच-पडताल कर सकें। प्राप्त जानकारी, जो प्रमाणित नहीं हुई है, का केवल आग्रहपूर्वक कथन और



ऐसी जानकारी, जो बहुत ही गुप्त रखी गई है, पर आधारित अवैधानिक निर्णय इस मामले में उपयोगी सिद्ध न होंगे।

२ सभी आरोप निराधार तथा 'अप्रमाणित' होने के कारण वापस लेकर प्रतिबंध हटा लिया जाए। मेरा विचार राजधानी में तब तक रहने का है, जब तक इनमें से कोई एक मार्ग स्वीकार कर हमारे कार्य के साथ न्याय नहीं किया जाता।

जहाँ तक मेरे दिल्ली छोड़ने और नागपुर जाने का प्रश्न है, ५ नवबर के अपने पत्र में मैंने यह स्पष्ट कर दिया है कि मध्यप्रांतीय सरकार द्वारा मेरी गतिविधि तथा कार्यवाही पर से प्रतिबंध बिना शर्त हटाए जाने पर ही मैंने दिल्ली आने का निश्चय किया था। मैं आपसे मिलने के निमित्त यहाँ आने के सीमित कार्य के लिए प्रतिबंधों के अस्थायी रूप से हटाए जाने के लिए कभी तैयार नहीं था। आपके कल के पत्र में दिया गया यह सुझाव कि प्रतिबंध अस्थायी रूप से हटाए गए थे, पूर्णत भ्रामक है। ऐसी परिस्थिति में मुझे दिल्ली छोडकर केवल नागपुर जाने के लिए बाध्य करने का प्रयत्न करना अनुचित है। जैसा मैंने कहा था, मैं अपने साथ न्याय किए जाने की प्रतीक्षा करूँगा और तब तक दिल्ली में रहूँगा, जब तक किसी सभ्य राज्य की तरह सरकार न्याय की माँग पूरी नहीं करती।

मुझे विश्वास है कि जो कुछ ऊपर लिखा गया है, उसपर आप उचित ध्यान देंगे और वह कार्य करेंगे, जो उचित और न्यायसगत होगा। आप वह नहीं करेंगे, जो तानाशाहीपूर्ण तथा अवैधानिक होगा।

समादरपूर्वक पत्र पूर्ण करता हूँ।

भवदीय

एम एस गोलवलकर

स्वयसेवको के नाम पत्र

केवल विचार-विनिमय कर सघ पर लगाया गया प्रतिबंध हटाने के पक्ष मे सरकार अनुकूल नहीं है इसलिए उचित समय देखकर शातिपूर्ण सत्याग्रह करना आवश्यक है यह लगभग निश्चित हो गया था। वैसे ही इसमे भी सदेह न रहा कि श्री गुरुजी को गिरफ्तार करने के लिए सरकार के आदेश से पुलिस किसी भी समय आ सकती है। श्री गुरुजी ने १३ नवबर को ही सभी स्वयसेवको को सबोधित कर एक पत्र लिखा जिसमे सरकार की सर्वथा अयोग्य

हठवादिता के उल्लेख के साथ अपना संघ कार्य प्रारंभ करने हेतु माननीय सरकार्यवाह को दी हुई आज्ञा का स्पष्ट उल्लेख है। यह आदेशपत्र रणनाद नाम से प्रसिद्ध है। यह रणनाद अंग्रेजी तथा हिंदी में स्वयं श्री गुरुजी ने लिखा था।

२०, बाराखंभा रोड, नई दिल्ली,
१३ नवंबर १९४८

मेरे सभी स्वयंसेवक बंधुओ,

१ आप लोगों को विदित ही है कि किस परिस्थिति में अपना संगठन विसर्जित किया गया। यह देखकर मुझे अतीव आनंद हुआ कि इस कालावधि में आप सभी ने उस निर्णय का तत्परता से पालन किया।

२ उस समय यह आशा थी कि अपने विरुद्ध लगाए गए आरोप पूर्णतः निराधार और काल्पनिक होने से वापस लिए जाएँगे और अपने संघ पर से असमर्थनीय प्रतिबंध हटा लिया जाएगा व शीघ्र ही हिंदुओं में शुद्ध भ्रातृभाव जागृत करने का निरामय सांस्कृतिक कार्य हम प्रारंभ कर सकेंगे।

यह आशा की गई थी कि सरकार में अपने ही बंधु होने से, यद्यपि एक विशिष्ट उत्तेजना के क्षण में उन्होंने हम पर अन्याय किया है, तथापि समय बीतने के साथ वे शांत हो जाएँगे और न्याय करने पर प्रवृत्त होंगे। यह भी आशा की गई थी कि उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर आसीन होने के कारण वे अपनी भूल महसूस करेंगे और दूरदृष्टि अपनाएँगे तथा पक्ष-स्वार्थ से ऊपर उठकर उदार देशभक्ति का परिचय देंगे व भूल-सुधार में प्रवृत्त होकर राष्ट्रीय हित का मार्ग प्रशस्त करेंगे। यह भी आशा की गई थी कि कम से कम सरकार सुसंस्कृत सरकार के समान आचरण करेगी और हमारे विरुद्ध प्रमाण पेश करेगी, उनका खंडन करने का मौका देगी और फिर प्रस्थापित कानून की मान्यता के अनुसार कोई निर्णय करेगी।

३ अंततोगत्वा न्याय मिलेगा इस आशा से हम लोगों ने धैर्य से कारावास तथा व्यक्तिगत निर्बंध सहे। परंतु आठ मास से अधिक समय बीत जाने के बाद जब मैं नागपुर से बाहर जाने को स्वतंत्र हुआ, तब मैं न्याय की माँग करने के लिए राजधानी में आया। सम्माननीय और न्यायपूर्ण समझौता करने के मेरे प्रयास विफल हुए। इसलिए २ नवंबर १९४८ को मैंने दो वक्तव्य देकर अपने विरुद्ध किए जानेवाले सभी नए-पुराने आरोपों का सार्वजनिक उत्तर दिया। उनमें अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों का पुनरुच्चार कर केंद्र सरकार में आज जो वातावरण फैला हुआ है, उसके प्रति

अपनी प्रतिक्रिया प्रकट की। दूसरे वक्तव्य में मैंने सकेत किया कि आप लोगों के सामने अब दो ही रास्ते खुले हैं। उसमें से एक प्रतिबंध की परवाह किए बिना अपना कार्य प्रारंभ करने की राह पर चलने को स्पष्ट रूप से कहा है।

४ उक्त निर्णय का दृढ़ता से पालन करना मुझे आनददायी हुआ होता परंतु कुछ समय बाद, याने २ नवबर को सायकाल दिल्ली के जिला मजिस्ट्रेट के आदेश से मेरी गतिविधियों और कार्यक्रमों पर निर्बंध लाद दिए गए। यह सरकारी कार्य असमर्थनीय और घोर अन्यायकारी है। अब कल (१२ नवबर) शाम को गृह मत्रालय ने मुझे पत्र भेजकर अपना मनमाना निर्णय सूचित किया है कि अपने कार्य पर से प्रतिबंध नहीं हटाया जाएगा। इतना ही नहीं तो उन्होंने मुझे यह भी बतलाया कि केवल सरदार पटेल से मिलने की शर्त पर मध्यप्रदेश सरकार ने मुझ पर से निर्बंध ढीले किए थे, इसलिए मैं अब नागपुर लौट जाऊँ। उनका यह कथन पूर्णत असत्य है। शासन द्वारा दिल्ली छोडकर विशिष्ट स्थान पर जाने के लिए मुझे बाध्य करना पूर्णत अन्याय है और स्वतत्र नागरिक के नाते मुझे प्राप्त अधिकारों पर आघात है। अधिकारों का अन्यायपूर्ण दमन अपने कई कार्यकर्ताओं को भी नसीब हुआ है। इससे स्पष्ट सकेत मिलता है कि जीवित रहने तथा परस्पर मिलने के स्वाभाविक अधिकार का इस रीति से निरकुश दमन किया गया कि हमारे प्राथमिक नागरिक अधिकार भी छीन लिये गए।

५ यह अवस्था लज्जाजनक है। इस क्रूर नृशसता के आगे दबना स्वतत्र भारत के नागरिक सम्मान को अपमानित करना है और सभ्य स्वतत्र राज्य की प्रतिष्ठा को धक्का पहुँचाना है। इसलिए अपने कर्तव्य के पालन व नागरिकों तथा राज्य के सम्मान तथा अधिकारों की रक्षा के लिए हमें तैयार होना चाहिए।

६ हम लोग अनुभव कर रहे हैं कि सप्रति हम गभीर अवस्था से गुजर रहे हैं। देशभक्ति की अपनी सहज प्रवृत्ति के कारण हमने बहुत से अन्याय इसलिए सहे कि समाज में आतरिक फूट पैदा न हो। यह समय गभीर है, यह पहचानने की जिम्मेदारी जितनी हमारी है, उससे अधिक, कम से कम उतनी ही जिम्मेदारी सरकार की भी है। न्यायपूर्ण समझौता हो, इसलिए शातिपूर्ण उपायों से जो भी करना सभव था, वह हमने किया। परतु इसके विपरीत सरकार अधिकाधिक अन्यायी और स्वेच्छाचारी बनी। लगता है कि अपने दल को मजबूत बनाने के उद्देश्य से हमारी देशभक्ति की भावना का वे दुरुपयोग कर रहे हैं। वास्तव में गभीर देशचिंतन के कारण

निमाण हुए हमारे सयम को वे दुर्बलता मानते हैं। वे ऐसी योजनाएँ बना रहे हैं कि व्यक्तिश और सघश हमारा अस्तित्व न रहे, हमारा नाम मिट जाए। इसके आगे हम इस दुष्ट मनोवृत्ति को कदापि नहीं चलने देंगे, क्योंकि उससे अततोगत्वा देश का सपूर्ण विनाश होगा। वह सकट टालने के लिए यह नितात आवश्यक है कि हम कटिबद्ध होकर थोडी उथल-पुथल करने का साहस दिखाएँ, जिससे अपना राज्य भावी महान सकट से बच सके।

७ इसलिए अपने महान उद्देश्य के लिए कमर कसने को मैं आप लोगों से प्रार्थना करता हूँ। सत्य और न्याय अपने पक्ष में हैं। जिधर सत्य है, उधर ईश्वरीय कृपा की वर्षा होती है। ईश्वर पर पूर्ण विश्वास और अपनी पवित्र मातृभूमि के प्रति अविचल भक्ति रखकर, अपने ध्येय की न्यायपूर्णता करने के लिए अपना यह शातिपूर्ण अभियान हम प्रारभ करें। हमारी कितनी भी अनिच्छा हो, तो भी सरकार की सकीर्ण मनोवृत्ति अपने ही दल का निरतर प्रभाव रखने के मोह तथा अन्य किसी भी मत या काय का अस्तित्व न रहने देने की उसकी असहिष्णुता के कारण हमें इस मार्ग पर बाध्य होकर चलना पड रहा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण अवस्था निर्माण करने की पूरी जिम्मेदारी सरकार पर ही है, अन्य किसी पर नहीं।

८ अतएव ६ फरवरी १९४८ को सघ-विसर्जित करने का मैंने जो आदेश दिया था, वह पूर्ण विचार करने के बाद वापस ले रहा हूँ और अपना कार्य नित्यानुसार प्रारभ करने की आप लोगों से प्रार्थना करता हूँ। इसके साथ ही शाति रहे, वैमनस्य न बढे, इसके लिए हमें भरसक प्रयत्न करने चाहिए।

९ अपने सरकार्यवाह श्री भैयाजी दाणी को मैंने सूचित किया है कि वे यह निर्णय सभी स्वयसेवकों को बतलाएँ और अपना कार्य पूर्ववत् प्रारभ करने का दिन और तिथि निश्चित करें।

१० हम सत्य के लिए खडे हैं, हम न्याय के लिए खडे हैं, हम राष्ट्रीय अधिकारों के लिए खडे हैं। न्यायशील सत्य-देवता पर आतरिक श्रद्धा रखकर हम आगे बढें और उद्देश्य-प्राप्ति तक रुके नहीं।

परमेश्वर की जय हो। मातृभूमि की जय हो।

भवदीय

मातृभूमि की सेवा में सहयोगी

मा स गोलवलकर

सदेश

२०, बाराखभा रोड, नई दिल्ली,
१३ नवबर १९४८

प्रिय स्वयसेवक बधुगण,

आज दस मास होते आए अपना पवित्र कार्य बद है। अपने पवित्र धर्म, सस्कृति तथा समाज की सेवा कर विशुद्ध भारतीय राष्ट्रजीवन निर्माण करने के लिए सपूर्ण समाज को अटूट स्नेहसूत्र में गूँथना तथा परमपावन भारतमाता के चरणों में जीवनसर्वस्व समर्पण करना, इन उज्ज्वल भावनाओं को लेकर अपना राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ कार्यशील रहा है। अकस्मात उसकी पावन धारा खडित-सी हो गई। अनेक घृणित आरोप उस पर लगाए गए। उस पर अत्याचार हुए। परतु अपनी स्वाभाविक धीरोदात्तता से हम लोगों ने सब सहा। आशा थी कि कुछ समय व्यतीत होने पर सब आरोपों का मिथ्यात्व स्पष्ट होकर अपने कार्य के ऊपर से प्रतिबध हटेंगे, न्याय की विजय होगी। इसी दृष्टि से शातियुक्त मार्ग से न्याय प्राप्त करने के निमित्त मैं प्रयत्नशील रहा।

परतु मैंने अनुभव किया कि सरकार में उच्चपदस्थ सज्जनों को न्याय की चाह नहीं है। दलबदी, स्वार्थाध सत्तालोलुपता का बोलबाला है, अभारतीय वृत्तियाँ बढी हैं। अत भारतीयत्व के सास्कृतिक कार्य से घृणा है। असहिष्णुता से मन कलुषित हो गया है। फिर न्याय और सत्प्रवृत्ति कहाँ?

दलगत स्वार्थाधता और असहिष्णु सत्तालोलुपता का प्रादुर्भाव भेदों को, वैमनस्य को, स्नेहशून्यता को जन्म दे राष्ट्रजीवन को अधिकाधिक छिन्न-विच्छिन्न एव दुर्बल बनाकर अल्पावधि में ही नष्ट कर देगा। इस दुष्ट भावना का उच्छेद करना भारतमाता का पुत्र कहलानेवाले प्रत्येक व्यक्ति का प्रथम परम पवित्र कर्तव्य है। हम राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के स्वयसेवक भारतमाता की अनन्य पूजा का व्रत लेनेवाले हैं, हमें इस राष्ट्रघाती मनोवृत्ति का सामना करना है। इस महान उद्देश्य के निमित्त अपने सघकार्य का पुनरुत्थान कर उसके श्रेष्ठ ध्येय की पूर्ण सफलता तक प्रयत्नशील होना है। आगे और आगे, सदा आगे ही आगे बढते जाना है। किसी भी कारण से मार्ग में रुकना नहीं है। सकट बाधाएँ,

दुर्भाग्य से कभी स्वजनों द्वारा ही द्रोह, सब सहना है। अपने कार्य की शुद्धता, न्यायपूर्णता, महानता तथा निरपवाद आवश्यकता को प्रमाणित करना है।

भारतमाता के इस भयकर सकटकाल में 'मैं और मेरा' के विचार के लिए अवकाश नहीं है। व्यक्ति के नाते अपना कुछ भी हो, परतु भारतमाता को अभारतीयता के प्रभाव से मुक्त करना है। माँ की सब सतानों को उनके स्वाभाविक अधिकारों को स्वार्थी-सत्ताध दलों के द्वारा होनेवाले अपहरण से बचाना है। सब को स्वतत्र सुखपूर्ण, सम्मान्य जीवन का लाभ कराना है। यह अपने को ही करना है।

कार्य श्रेष्ठ है, महान है, ईश्वरीय है, इसकी पूर्ति में मानवता का उच्चतम आविष्कार है। भगवान का साक्षात्कार है।

अत उठो और दस मास से स्थगित अपने कार्य का पुनरारभ करो। दस मास की अकर्मण्यता की क्षतिपूर्ति करो। सत्य अपने साथ है। अन्यायों में सोते रहना, उसका भागी बनकर रहना पाप करना है। हम अन्याय का परिमार्जन करें। अत करण में न्यायपूर्ण सत्य के अधिष्ठाता श्री परमात्मा को दृढ विश्वास से धारणकर समस्त प्राणशक्ति से भारतमाता का ध्यान कर, उसकी सतानों के प्रेम से प्रेरित होकर उठो, कार्य को बढाओ और यशप्राप्ति तक कहीं न रुकते हुए आगे बढते चलो।

यह धर्म का अधर्म से, न्याय का अन्याय से, विशालता का क्षुद्रता से, स्नेह का दुष्टता से सामना है। विजय निश्चित है, क्योंकि धर्म के साथ श्री भगवान और उनके साथ विजय रहती है।

तो फिर हृदयाकाश से जगदाकाश तक भारतमाता की जयध्वनि ललकार कर उठो और कार्य पूर्ण कर के ही रहो।

भारत माता की जय।

आपका
मा स गोलवलकर

ॡ ॡ ॡ

सरकारी विज्ञप्ति

दिल्ली, १४ नवबर १९४८

भारत सरकार के गृह-विभाग द्वारा १३ नवबर की रात को प्रकाशित एक प्रेस नोट में कहा गया है कि नागपुर में ६ महीने की विधिवत अवधि के कारावास से मुक्त होने के पश्चात् राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सरसघचालक श्री गोलवलकर ने सरकार से सपर्क स्थापित कर यह सभावना प्रकट की कि सस्था की गतिविधि बदली तथा उन कार्यक्रमों तक सीमित की जा सकती है, जिसका देश की साप्रदायिक परिस्थिति पर घातक प्रभाव न पडे। उन्होंने गृहमत्री से भेंट करने की इच्छा भी प्रकट की। उन्हें इस प्रकार का अवसर देने के लिए भारत सरकार ने मध्यप्रातीय सरकार से प्रार्थना की कि वह अपनी वह आज्ञा रद्द कर दे, जिसके द्वारा श्री गोलवलकर की गतिविधि को नागपुर नगर तक ही सीमित कर दिया गया था और गृहमत्री से मिलने के विशिष्ट उद्देश्य से उन्हें दिल्ली आने की सुविधा देने के लिए कहा। तदनुसार श्री गोलवलकर दिल्ली आए तथा यहाँ आने के कुछ समय पश्चात् ही वे गृहमत्री से पहली बार मिले।

उनमें परस्पर विचार-विनिमय हुआ। श्री गोलवलकर ने अपने अनुयायियों को उचित मार्ग पर लाने के उद्देश्य से विचार-विनिमय के लिए समय चाहा। कुछ दिनों पश्चात् जब वे दूसरी बार मिले, तब उन्होंने प्रतिबध हटाए जाने के पूर्व किसी भी प्रकार के परिवर्तन का बधन स्वीकार करने में अपनी असमर्थता प्रकट की। उनका विचार था कि प्रतिबध का हटाया जाना अनुयायियों के साथ होनेवाले परामर्श में उनके हाथ अधिक मजबूत करेगा। इसके साथ ही भारत सरकार ने प्रातीय सरकार से उसके विचार जानने तथा राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ की गतिविधि के सबध में अद्यतन जानकारी प्राप्त करने के लिए सपर्क स्थापित किया। भारत सरकार को प्राप्त सूचना से प्रकट हुआ है कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ से सबधित लोगों द्वारा विभिन्न रूपों और प्रकारों से की जानेवाली कार्यवाही राष्ट्रविरोधी रही है और कई बार ध्वसात्मक तथा हिंसापूर्ण रही है। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ द्वारा देश में वह वातावरण फिर से जागृत करने का निरतर प्रयत्न किया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप भूतकाल में भीषण घटनाएँ हुई थीं। इन कारणों से प्रातीय सरकारों ने प्रतिबध हटाने के विरुद्ध अपनी सम्मति दी और भारत सरकार प्रातीय सरकारों के विचारों से सहमत हुई।

गत मास के अंत में यह स्थिति श्री गोलवलकर को सूचित की गई और उनसे कहा गया कि चूँकि जिस कार्य के लिए उन्हें दिल्ली आने की अनुमति दी गई थी, वह समाप्त हो चुका है। अत अब उन्हें नागपुर लौट जाना चाहिए। श्री गोलवलकर इस स्थिति को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत नहीं हुए और उन्होंने गृहमंत्री तथा प्रधानमंत्री से उनके दिल्ली लौटने पर मिलने की इच्छा अभिव्यक्त की। गृहमंत्री ने फिर से मिलना अस्वीकार किया, किंतु प्रधानमंत्री के वापस लौटने पर यदि उनकी इच्छा रही तो उनसे मिलने का अवसर देने के लिए दिल्ली जिलाधीश द्वारा जारी की गई कतिपय प्रतिबंधात्मक आज्ञाओं के अंदर दिल्ली में रहने की अनुमति दी गई। श्री गोलवलकर ने प्रतिबंधात्मक आज्ञाएँ मानना अस्वीकार किया, किंतु उन्होंने उनपर लगाए गए प्रतिबंधों के उल्लंघन का कोई प्रयत्न नहीं किया। उन्होंने प्रधानमंत्री तथा गृहमंत्री– दोनों को स्पष्टीकरणात्मक पत्र लिखे, जिनमें यह कहा गया था कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ भारत में धर्मनिरपेक्ष राज्य के आदर्श से पूर्णत सहमत है और वह देश के राष्ट्रीय ध्वज को मानता है। पत्रों में यह प्रार्थना की गई कि गत फरवरी में संस्था पर लगाया गया प्रतिबंध अब हटा लिया जाए। किंतु राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेता के उक्त कथन, अनुयायियों द्वारा किए जानेवाले आचरण के सर्वथा विपरीत हैं। इन कारणों से, जिन्हें ऊपर स्पष्ट किया गया है, भारत सरकार प्रांतीय सरकारों को प्रतिबंध हटाने की सलाह नहीं दे सकी। इसलिए प्रधानमंत्री ने भेंट करना, जिसकी श्री गोलवलकर ने माँग की थी, अस्वीकार किया।

उक्त निर्णय के अनुसार श्री गोलवलकर को यह सूचना दी जा रही है कि वे नागपुर वापस लौटने की तुरंत व्यवस्था करें। श्री गोलवलकर से उक्त आदेशों का पालन कराने के लिए भारत सरकार उचित कार्रवाई कर रही है।

संघ के दिल्ली के प्रचारक
श्री वसंतराव ओक का वक्तव्य

भारत सरकार ने १४ नवंबर १९४८ को दोपहर १ बजे एक प्रेस-विज्ञप्ति प्रकाशित की थी। जिसमें उसने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर से प्रतिबंध न उठाने के अपने निर्णय के कारण बताए थे। लगभग २ घंटे पश्चात् ही श्री गुरुजी बंदी बना लिये गए, इस कारण उनके लिए उक्त

विज्ञप्ति का उत्तर देना असभव था। तव से अनेक व्यक्ति, उक्त विज्ञप्ति द्वारा जनता में जो धारणाएँ उत्पन्न हुईं, उनके विषय में सत्यासत्य जानने के लिए मेरे पास आए हैं।

श्री गुरुजी के दिल्ली के अल्प निवास के समय मुझे उनके साथ रहने का अवसर मिला था। सरदार पटेल से वार्तालाप के समय भी मुझे श्री गुरुजी के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इसीलिए सरकारी विज्ञप्ति में जो वातें अस्पष्ट व असत्य हैं, उनपर मैं कुछ प्रकाश डाल सकता हूँ।

निस्संदेह मेरा यह उद्देश्य नहीं है कि सरकारी विज्ञप्ति के घिसे हुए तर्कों का उत्तर दूँ, क्योंकि श्री गुरुजी ने स्वय ही उनका उत्तर अपने पत्र-व्यवहार में पूर्ण रूप से दे दिया है, जो अव प्रकाशित हो चुका है। मैं जनता का ध्यान सरकारी विज्ञप्ति के दूसरे परिच्छेद के कुछ प्रारभिक वाक्यों की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ, जो इस प्रकार हैं–

'उनमें परस्पर विचार-विनिमय हुआ। श्री गोलवलकर ने अपने अनुयायियों को उचित मार्ग पर लाने के उद्देश्य से विचार-विनिमय के लिए समय चाहा। कुछ दिनों पश्चात् जब वे दूसरी बार मिले, तब उन्होंने प्रतिबध हटाए जाने के पूर्व किसी भी प्रकार के परिवर्तन का बधन स्वीकार करने में अपनी असमर्थता प्रकट की। उनका विचार था कि प्रतिबध का हटाया जाना अनुयायियों के साथ होनेवाले परामर्श में उनके हाथ अधिक मजबूत करेगा।'

उक्त वात से सभवत यह भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि सरदार पटेल ने सघ में परिवर्तन करने के लिए कोई प्रस्ताव रखा था तथा श्री गुरुजी ने प्रतिबध उठाने से पहले कोई भी परिवर्तन करने में अपनी असमर्थता प्रकट की थी। इसी कारण सरकार ने सघ पर से प्रतिबध न उठाने का निश्चय किया।

मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि सरदार पटेल ने ऐसा कोई भी प्रस्ताव नहीं रखा। अत उसको स्वीकार करने अथवा न करने का प्रश्न ही नहीं उठता। सरदार पटेल की एकमात्र इच्छा अथवा सम्मति जो उन्होंने अपने एक पत्र में प्रकट की थी, यह थी कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ (जो एक सास्कृतिक सस्था है) को काग्रेस (जो एक राजनैतिक सस्था है) में विलीन कर देना चाहिए। परतु यह सम्मति तो इतनी विचित्र और अनुचित थी कि इसे 'परिवर्तन कराने का प्रस्ताव' तो किसी भी दशा में नहीं कहा जा सकता।

इसी परिच्छेद में एक और अत्यत भ्रमोत्पादक एव असत्य विचार प्रकट किया गया है। इस विषय में केवल इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि *श्री गुरुजी को भारत सरकार की ओर से न तो कोई 'सीधा मार्ग' बतलाया* गया था और न उन्होंने अपने साथियों से विचार-विमर्श करने के लिए समय ही माँगा था। वास्तविक तथ्य यह है कि इसके बिल्कुल विपरीत *गृह-विभाग ने ही प्रांतीय सरकारों से मत लेने के लिए समय माँगा था व* श्री गुरुजी को यह बतलाया गया था कि प्रांतों की सहमति मिलने पर ही सघ पर से प्रतिबंध हटाने का प्रश्न अवलबित है।

दो शब्द और कहना आवश्यक प्रतीत होता है। यह सत्य है कि श्री गुरुजी नीति-विषयक प्रश्नों पर सघ के प्रमुख कार्यकर्ताओं एव अनुयायियों से सदैव विचार-विमर्श करके निर्णय लेते हैं, परतु सरकारी विज्ञप्ति द्वारा यह भ्रम उत्पन्न करना अत्यत निंदनीय है कि श्री गुरुजी व उनके अनुयायियों के बीच कोई मतभेद है व इसके समर्थन में मनगढंत कथाओं को जन्म देना कि 'उन्होंने अपने अनुगामियों को उचित मार्ग पर प्रभावित करने के लिए समय माँगा अथवा वे अनुयायियों से विचार-विमर्श करने में अपने को अधिक समर्थ बनाना चाहते थे' अथवा इस प्रकार का निराधार व मिथ्या आरोप लगाना कि 'उनके कथन तथा उनके अनुयायियों के आचरण में विषमता है। इस तरह के असत्य एव भ्रमात्मक प्रचार केवल हास्यापद ही नहीं, *निश्चित ही कुटिलतापूर्ण हैं।*

卐卐卐

अतत ९ दिसबर को सत्याग्रह प्रारभ हुआ। आदोलन का परिणाम यह हुआ कि सघ तथा सरकार के बीच सात्विक देशभक्त आगे बढ़े। उनमे से कुछ विशिष्ट जनो से भेंट व बातचीत के पश्चात् श्री गुरुजी ने यह सोचकर कि इन वार्ताओ का कुछ अच्छा परिणाम निकल सकता है सत्याग्रह स्थगित करने का निश्चय किया। १९ जनवरी १९४९ को उनका उस विषय मे वक्तव्य श्री केतकर ने प्रकाशित किया तथा २२ जनवरी को बाहर रहकर सारे सत्याग्रह का सूत्र सचालन करनेवाले प्राध्यापक श्री महावीर जी की ओर से भी सत्याग्रह स्थगित करने की घोषणा हुई। श्री गुरुजी के इस पत्र का सबने सर्वत्र स्वागत किया था वह पत्र यहाँ प्रस्तुत है—

आंदोलन स्थगित करें

सिवनी कारागार
१९ जनवरी १९४९

मेरे प्रिय स्वयंसेवक बंधुओ,

देश की सर्वसाधारण परिस्थिति, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वर्तमान आंदोलन के बारे में सरकार की भूमिका, अनेक महत्त्वपूर्ण तटस्थ नागरिकों द्वारा अभिव्यक्त व्यापक सहानुभूति और शुभेच्छा आदि बातों के बारे में श्री ग वि केतकर ने मुझे कल्पना दी। उससे मुझे लगता है कि वातावरण परस्परानुकूल होने और इन तटस्थ मित्रों द्वारा वर्तमान गतिरोध भंग करने के लिए जो सहानुभूतिपूर्वक प्रयत्न किए जा रहे हैं के लिए योग्य वातावरण निर्माण करने के लिए अपना आंदोलन स्थगित करने का समय आ गया है।

इसलिए आंदोलन के संचालनकर्ता स्वयंसेवक बंधुओं को मैं सूचित करता हूँ कि वे आंदोलन बंद करने का निर्णय करें और अपना यह निर्णय सारे देश में व्यापक रूप में पहुँचाएँ। मैं अपने स्वयंसेवक बंधुओं से भी प्रार्थना करता हूँ कि आंदोलन के संयोजक जो भी निर्णय करेंगे, उसका वे हृदय से व तत्काल पालन करें।

मा स गोलवलकर

११ अप्रैल को श्री गुरुजी ने एक पत्र के साथ संघ का संविधान गृहमंत्री सरदार पटेल को प्रेषित किया। ११ अप्रैल १९४९ तथा १७ मई १९४९ को सरदार पटेल को लिखे श्री गुरुजी के पत्र—

सिवनी कारागृह
११ अप्रैल १९४९

सम्माननीय गृहमंत्री,
भारतीय शासन, नई दिल्ली,
(द्वारा सम्माननीय गृहमंत्री, मध्यप्रदेश शासन, नागपुर)

महोदय,

संघ का लिखित संविधान साथ भेज रहा हूँ। इसके आगे यह संस्था उसके नियमों के अनुसार काम करेगी। जिन नियमों के अनुसार संघकार्य वर्षों से चल रहा था, वे ही प्रमुखता से इसमें हैं।

मैं आशा करता हूँ कि अव तैयार हुआ यह सविधान स्वीकार्य होगा और तीव्रता से प्रतीत होनेवाली त्रुटि की पूर्ति करेगा। भारतीय शासन को यह सविधान पसद होगा, ऐसी आशा रखकर और सघ पर से प्रतिबध उठाने के आदेश शीघ्र भिजवाने का सौजन्य दिखाएँगे तथा सघ को सविधान के अनुसार (जो तैयार कर आपके पास भेजा जा चुका है) कार्य करने दिया जाएगा, ऐसी मैं अपेक्षा करता हूँ। वैसी सभावना निर्माण हुई तो मैं यह सविधान छपवाकर प्रकाशित करूँगा, जो आनुषगिक आदेश दिए जानेवाले हैं, वे शीघ्र दिए जाएँ, जिससे सघ कार्य सुगमता से हो सके।

मुझे यह जानकर बहुत वेदना होती है कि भारतीय शासन मेरे वचनों और सर्वसाधारण व्यवहार की ओर संदेह की दृष्टि से देखता है। परतु समय साबित कर देगा कि अपने विशृखलित तथा अत्यत विभाजित जनता को एकत्र गूँथकर, उसमें समान ध्येय और समान अनुशासन निर्माण कर सास्कृतिक बधन से एकता प्रस्थापित करने का मेरा कार्य ही देश के व्यापक हित के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। भविष्य ही बताएगा कि मेरी वृत्ति सहयोग करने की है, सबके प्रति सद्भाव रखनेवाली है, किसी एक गुट से लडाई-झगडा करने की नहीं है।

मैं शीघ्र अनुकूल प्रत्युत्तर की अपेक्षा करता हूँ।

भवदीय

मा स गोलवलकर

भारत सरकार (गृह मत्रालय)

न २८/२३ (४८ पोल) नई दिल्ली

३ मई, १६४६

प्रेषक

एच वी आर अय्यगार, आई सी एस

भारत सरकार के सचिव

सेवा में,

श्री मा स गोलवलकर

द्वारा मुख्य सचिव, मध्यप्रदेश एव बरार सरकार,

नागपुर

महोदय,

मुझे निर्देश हुआ है कि मैं आपके ११ अप्रैल के पत्र की ओर आपका ध्यान आकर्षित करूँ, जिसमें राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के संविधान के प्रारूप की नकलें प्रेषित की गई थीं और सगठन पर से प्रतिबंध उठाने का निवेदन किया गया था।

२ आपके द्वारा प्रस्तुत प्रारूप एव निवेदन के सबध में भारत सरकार प्रातीय सरकारों से सलाह ले रही है। उनके उत्तरों के आने में और उनपर विचार करने में कुछ समय लगेगा। इस क्रम में वे विचार कर रहे हैं कि यह लाभप्रद होगा कि इस स्थिति में वे अपने दृष्टिकोण से आपको अवगत कराएँ। इन दृष्टिकोणों को प्रस्तुत करते समय उन्होंने उन विचारों को ध्यान में रखा है जो पिछले अक्तूबर में सरदार पटेल ने साक्षात्कार के समय आपके समक्ष रखे थे। आपको स्मरण होगा कि उन्होंने आपसे कहा था कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के विरुद्ध गभीर आरोप ये हैं कि वह सगोपनशीलता से कार्य करता है। इसके सगठकों के मतव्य चाहे जो रहे हों, यह जनमानस में प्रमुख प्रेरणा जातीय विद्वेष से प्राप्त करता रहा है। इसने एक जातीय दल को राज्य से ऊपर ऊँचा उठा दिया और व्यवहार में इसके अनुसरण करनेवाले व्यवस्थित ढग से हिसा में भाग लेते हैं। भारत सरकार के विचार से सविधान इन कमियों के विरुद्ध सगठन को सुरक्षा प्रदान नहीं करता। विशेषत उन्होंने निम्नलिखित गद्याशों में दी गई बातें अनुभव की हैं।

३ आपने अपने पत्र में लिखा है कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने पूर्वकाल में सविधान में प्रतिपादित सिद्धातों का पालन किया है। इसमें से एक यह है कि सघ अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए 'शातिमय एव सवैधानिक साधनों' का प्रयोग करता है। दुर्भाग्य से राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ की कार्यवाहियों का अधुनातन इतिहास यह प्रदर्शित करता है कि आपके अनुयायियों ने व्यवस्थित रूप से इस प्रतिपादन का उल्लघन किया है। सभी प्रान्तों एव अनेक राज्यों में ऐसी घटनाएँ हुई हैं, जहाँ सघ के कार्यकलापों को शातिपूर्ण एव न्यायसगत शायद ही माना जा सके और जहाँ हिंदू धर्म एव सस्कृति के हितों के प्रसार ने हिंदुत्व से इतर श्रद्धा रखनेवाले व्यक्तियों के विरुद्ध हिसा का रूप ग्रहण किया है। इसलिए सरकार यह समझती है कि सविधान में हिसा-परित्याग के सबध में स्पष्ट घोषणा आवश्यक होगी।

४ धारा ४ के अतर्गत सन्नियम द्वारा स्थापित सविधान के प्रति राजभक्ति की स्पष्ट घोषणा और धारा ५ के अतर्गत राष्ट्रीय ध्वज की प्रकट स्वीकृति (साथ में सगठन के ध्वज के रूप में भगवा ध्वज) देश को सतुष्ट करने के लिए आवश्यक होगी, ताकि यह प्रकट हो कि राज्य के प्रति भक्ति में कोई उदासीनता नहीं है।

५ सगठन की सगोपनीय कार्यप्रणाली का आरोप सरकार के विचार से उस समय तक पूर्णरूपेण दूर नहीं हो सकता, जब तक सघ के सविधान में यह व्यवस्था न की जाए कि इसके सभी नियम एव आदेश लिखित एव प्रकाशित होंगे और उसके सभी कार्यक्रम खुले रूप में होंगे। वार्षिक अकेक्षित खातों के भी प्रकाशन की व्यवस्था उपयोगी होगी।

६ सगठनात्मक पक्ष में सभी स्तरों पर राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ की विभिन्न समितियों पर व्यक्तियों का काफी बडा भाग वास्तव में ऊपर से मनोनीत होता है। सगठन का यह एक सिद्धात भयकर खतरे का कारण बन सकता है और भारत सरकार का विचार है कि प्रजातात्रिक चुनाव प्रणाली को असदिग्ध रूप से स्वीकार करना एव प्रयुक्त करना चाहिए। विशेष रूप से सरसघचालक के कार्यो को सुतथ्यता के किसी अश तक परिभाषित नहीं किया गया है। प्रजातात्रिक कार्य-सचालन के हित में इन कार्यो को विशेष सूचीबद्ध किया जाना चाहिए और अधिनायकशाही चरित्र के सभी अवशेषों को दूर कर देना चाहिए। निश्चय ही आपको इस सामान्य आलोचना का परिज्ञान होगा कि महत्त्वपूर्ण पदों पर राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ में विशिष्ट क्षेत्र से विशिष्ट जाति के लोग रखे गए हैं। आपको यह सुनिश्चित करना होगा कि यह बाहुल्य दूर कर दिया जाए और सामान्यत क्षेत्रीय स्वायत्तता पदाधिकारियों इत्यादि के सबध में रखी जाए।

७ प्रतिज्ञा के सबध में यह कहा जा सकता है कि किसी सगठन की सदस्यता के सबध में जीवनपर्यत स्वीकृति अधिकतर गोपनीय सस्थाओं में पाई जाती है, पूर्ण जनदृष्टि से कार्य करनेवाले प्रजातात्रिक वर्गो में नहीं। इसलिए इस सीमा तक सविधान में सम्मिलित प्रतिज्ञा एक प्रतिगामी पग है।

८ सविधान में एक व्यवस्था यह भी होनी चाहिए कि अल्पवयस्कों की सदस्य रूप में भरती केवल उनके पिता अथवा अभिभावक की लिखित स्वीकृति पर ही की जाएगी और उनकी सदस्यता किसी भी समय पिता व अभिभावक की इच्छा पर समाप्त कर दी जाएगी। अल्पवयस्कों को कोई

प्रतिज्ञा या सौगंध नहीं दिलानी चाहिए।

६ इस अवसर पर आपको ये आलोचनाएँ इसलिए प्रेषित की जा रही हैं, क्योंकि सरकार चाहती है कि आप इस ओर वस्तुत अन्य राजनीतिक समस्याओं के प्रति उसके रुख का अभिनदन कर सकें, जो रचनात्मक एव सहयोगी हैं, न कि ध्वसात्मक और विद्वेषपूर्ण। परतु यह पूर्णरूपेण आप पर निर्भर करता है कि इस पत्र पर क्या कार्यवाही करेंगे। सरकार आपके अगले उत्तर की प्राप्ति पर इस विषय पर आगे विचार करेगी।

आपका विश्वासपात्र
(एच वी आर अय्यगार)
भारत सरकार के सचिव

श्री गुरुजी का उत्तर

सिवनी कारागार
१७ मई १९४९

सम्माननीय श्री गृहमत्री
भारत शासन, नई दिल्ली

महोदय,

भारत सरकार के सचिव श्री एच वी आर अय्यगार, (आई सी एस) के हस्ताक्षर का ३-५-१९४९ का पत्र (क्रमाक २८/२६/४८) प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

मुझे लगता है कि इस पत्र में राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के विरुद्ध किए गए तथाकथित आरोपों-आक्षेपों का उल्लेख न करना शासन की दृष्टि से अच्छा ही होता। इस पत्र ने पुन हमें फरवरी १९४८ के कालखड में पहुँचा दिया है। यह विपरीत गति दुर्भाग्यपूर्ण है। फिर भी मेरे सहयोगियों ने एक ज्ञापन सरकार को भेजा है, जिसमें उन आरोपों के बारे में विस्तृत स्पष्टीकरण देकर बताया है कि वे कैसे निराधार हैं। जिन समाचारों को विश्वसनीय मानकर सरकार ने आरोप लगाए हैं, उन्हें निष्पक्ष न्यायाधिकरण के सामने रखकर सिद्ध करना चाहिए था। इस तरह की प्रार्थना मैंने अगस्त, सितबर, अक्तूबर १९४८ में सम्माननीय प्रधानमत्री और आपको लिखे पत्रों में की थी। इससे उन समाचारों में कितना दम है, यह जानने

का अवसर हम लोगों को उपलब्ध होता। परतु सरकार ने वे समाचार ऐसे गुप्त रखे जैसे शकालु कृपण अपना धन रखता है। उसने उन समाचारों के प्रकट रूप से विश्लेषण की जोखिम नहीं उठाई। इन आरोपों को लगाकर अब सोलह मास का समय बीत चुका है। इन आरोपों के प्रमाण पेश किए जाने की मेरे द्वारा की गई मॉग को भी छ महीने बीत चुके हैं, परतु इस कालावधि में ऐसे कोई प्रमाण सामने नहीं आए हैं। अब बहुत देर हो गई है। योग्य समय निकल गया है। इसलिए एक मात्र अनुमान निकलता है कि तथाकथित समाचार सिद्ध करने योग्य नहीं हैं व कूडे-करकट की टोकरी में फेंक देने योग्य हैं। ऐसी परिस्थिति में सुसस्कृत कहलानेवाली सरकार को तथाकथित आरोपों का इतना समय बीत जाने के बाद बार-बार उच्चार करते रहना और सत्य, न्याय तथा न्याय-पद्धति का अनादर करना उसे शोभा नहीं देता। यह निष्कर्ष असुविधाजनक लगता हो, तो भी तर्कशुद्ध हैं। शासन सकोच का अनुभव न करे, इसलिए मैंने ११ अप्रैल १९४९ के पत्र में इन आरोपों का कोई भी सदर्भ जानबूझ कर टाला था तथा उन आरापों को वापस लेने के सबध में वक्तव्य प्रकाशित किया जाए, ऐसी प्रार्थना भी नहीं की थी। वास्तव में मेरा मत है कि इस तरह की घोषणा से सरकार की प्रतिष्ठा बहुत ही बढेगी। आपके कृपापत्र के दूसरे और तीसरे परिच्छेद के सबध में इतना पर्याप्त है।

अब इस पत्र के परिच्छेद छ के बारे में। सघ के महत्त्वपूर्ण पदों पर विशिष्ट प्रदेश के विशिष्ट जाति के लोग हैं– इस आलोचना के बारे में मुझे कुछ मालूम नहीं है। इसके विपरीत मुझे जो मालूम है, वह यह है कि जातीय, उपजातीय या प्रातीय विचारधारा से सघकार्य कलुषित नहीं हुआ है। प्रमुख पद पर विराजमान कोई भी व्यक्ति उन विचारों का भक्ष्य नहीं हुआ है। आज सरकार के पास बडे पैमाने पर सघ के स्वयसेवक उपलब्ध हैं, क्योंकि कारागृह में रखने की सरकार ने उनपर कृपा की है। उन पर सरसरी निगाह दौडाने से पता चल जाएगा कि उपर्युक्त आरोप अविचारमूलक है। साराश यह कि किसी भी एक वर्ग की प्रबलता सघ में न होने से और सघकार्य सचालन के बारे में सबधित स्थानीय कार्यकर्ताओं को पूरी स्वतत्रता होने से इस विषय में कुछ विशेष व्यवस्था सविधान में करने की आवश्यकता है, ऐसा मैं नहीं समझता।

'ऊपर से की गई नियुक्तियाँ' के विषय में कहना हो तो मैं अत्यत विनम्रता से सज्ञान में ला देता हूँ कि 'लोकतात्रिक प्रणाली' में उससे कोई

न्यूनता नहीं आती। सभी प्रांतों और केंद्र में भी कार्य के संचालन और नियंत्रण के बारे में नीति तय करनेवाले मंडल जननिर्वाचित सदस्यों से बनते हैं। केवल दैनिक नित्य परिपाटी 'ऊपर से नियुक्त' व्यक्तियों को सौंपी जाती है। स्वयं सरकार की रचना देखें तो उसमें 'विधानसभा' या 'लोकसभा' नाम से परिचित छोटी-सी जन-निर्वाचित संस्था रहती है और बिल्कुल महामहिम राज्यपाल से लेकर अंतिम चपरासी तक बहुत बड़ा अंश 'ऊपर से नियुक्त' होता है। इसे देखते हुए सरकार की जनतांत्रिक निर्वाचन पद्धति के बारे में जो व्याकुलता है, वह शांत हो जाएगी। सरकारी रचना इस तरह होने पर भी कोई उसे अलोकतांत्रिक नहीं कह सकता।

संविधान के प्रारूप में सरसंघचालक के जो कार्य दिए हैं, उसमें मुझे तो कहीं भी 'एकाधिकार के लक्षण' दिखाई नहीं दिए। संघ कार्य की दृष्टि से आवश्यक सभी काम पूरे करने का उत्तरदायित्व निर्वाचित केंद्रीय कार्यकारी मंडल पर है। उस विषय के सभी अधिकार इस कार्यकारी मंडल को हैं। सरसंघचालक को केवल दो ही अधिकार दिए गए हैं– (१) अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करना और (२) किसी भी स्थान के सदस्यों की बैठक बुलाना और उन्हें संबोधित करना। अन्य सब मामलों में वह एक व्यापक मार्गदर्शक है। उसके उस मार्गदर्शन का अनुसरण करना या न करना अथवा कितनी मात्रा में करना पूर्णत: केंद्रीय कार्यकारी मंडल के निर्णय का विषय है। केवल यही सरसंघचालक के कार्य हैं। संविधान के प्रारूप में बिल्कुल स्पष्ट रूप से वैसा लिखा है।

अपने पत्र के आठवें परिच्छेद में अल्पवयस्कों के विषय में आपने जो लिखा है, उसके बारे में मुझे बड़े खेद के साथ कहना पड़ता है कि प्रारूप में अल्पवयस्कों के विषय में जो लिखा है, उसका सरकार ने सावधानीपूर्वक विचार नहीं किया। संघ के मैदानी कार्यों में भाग लेने और उत्तम चारित्र्य-निर्माण करनेवाले सद्गुण आत्मसात करने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करने से ही उनका संबंध है। उनके माता-पिता की लिखित अनुमति लेने की आवश्यकता आदि गौण ब्यौरा है, जो बाद में किया जा सकता है।

पाँचवें परिच्छेद के बारे में लिखना हो तो मुझे कहना होगा कि संघ हमेशा खुले मैदान में कार्य करते आया है। 'गुप्त रीति से कार्य करना' असत्य है और वह भ्रांति में से पैदा हुआ है। उसी प्रकार और एक बात मैंने अपने दिनांक ११ अप्रैल १९४९ के पत्र में लिखी है कि यह संविधान

उचित समय पर प्रकाशित किया जाएगा। वैसी परिस्थिति पैदा होते ही मैं अपने सहयोगियों को ऐसे नियमों का समावेश करने के औचित्य-अनौचित्य के विषय में विचार करने के लिए कहूँगा।

सप्रति हम लोग जिन बातों का विचार कर रहे हैं, उस दृष्टि से चौथे परिच्छेद का प्रतिपादन पूर्णतया अप्रासगिक है। 'सविधान' और 'एकनिष्ठा की शपथ' के बीच जो अतर है, उस पर सरकार ध्यान दे, ऐसी मैं प्रार्थना करता हूँ। यह अतर ध्यान रखा तो इस परिच्छेद में सुझाई गई बातें अप्रासगिक हैं। उसी प्रकार सविधान की चौथी और पाँचवीं धाराएँ पर्याप्त स्पष्ट हैं। इस विषय में मैं शासन का ध्यान मेरे नवबर १९४८ के वक्तव्य की ओर खींचना चाहूँगा। यहाँ इन मुद्दों के उत्तर असदिग्ध रूप से दिए गए हैं। मैं समझता हूँ कि उतना पर्याप्त होगा।

प्रतिज्ञा के विषय में एक और मुद्दा रह गया है। (पत्र का सातवाँ परिच्छेद)। हिंदू-सस्कृति सघकार्य का आधार है। हिंदू-सस्कृति में प्रतिज्ञा का पालन जीवनभर करना पडता है, वह कोई प्रासगिक वचनबद्धता नहीं है। आजीवन प्रतिज्ञा लेना यदि गुप्त-सस्थाओं का तथा प्रतिगामिता का लक्षण हो तो सरकार के मत से हिंदू-समाज गुप्त समुदाय है और हिंदू-सस्कृति प्रतिगामी है। आपने अर्थात् सम्माननीय गृहमत्री महोदय ने (आपके माध्यम से सरकार ने) अपने अभी के भाषण में घोषित किया था कि उन्हें हिंदू-सस्कृति का ज्ञान है और वे उसका आदर करते हैं। इस पृष्ठभूमि में क्या सरकार सोचती है कि उपर्युक्त निष्कर्ष मान्य करना सगत और योग्य होगा?

मैंने आलोचनाओं का उत्तर देने का प्रयास किया है। वास्तव में अपने सहयोगियों से विचार-विमर्श किए बिना मुझे पूर्ण उत्तर देना भी सभव नहीं है, क्योंकि इस विषय में मेरे समान ही, उन्हें भी बोलने का अधिकार है। पूर्वाग्रह न रखते हुए मेरे उत्तर का शातिपूर्वक विचार करें, ऐसी मैं शासन से प्रार्थना करता हूँ। मुझे लगता है कि विलबकारी पद्धति का सहारा लेने से कोई लाभ नहीं होगा। फिर भी सरकार अपनी सुविधानुसार चाहे जितना समय ले सकती है।

मैंने हमेशा विश्वास किया है तथा मैं अपनी सपूर्ण शक्ति के साथ उसपर दृढ हूँ कि ये सारे आरोप झूठे हैं। हिसा, गुप्तता, जाति-द्वेष आदि बातों को सघकार्य में पहले भी कभी स्थान नहीं था और भविष्य में भी कभी नहीं रहेगा। 'राज्य भर जातीय पक्ष को सम्मान प्राप्त करा देना' इस

प्रकार के अभिनव और मौलिक आरोप के विषय में मैं इतना ही कह सकता हूँ कि यह आरोप निरर्थक हैं। आज की व्यवस्था में ऐसी परिस्थिति पैदा हो ही नहीं सकती, फिर वह कोई भी पक्ष क्यों न हो।

यह पत्र पूर्ण करने के पूर्व मैं एक बात की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहूँगा कि ऐसा कोई भी सविधान नहीं है, जिसके किसी न किसी अश पर दोषारोपण नहीं किया जा सकता हो। यथासमय सभी सविधानों में सुधार हो सकता है। इसलिए मैं सोचता हूँ कि कोई सविधान तैयार होने पर तुरत उसकी आलोचना करना और वह परमेश्वर के वचनों के समान बिल्कुल परिपूर्ण होगा, उसके सबध में ऐसी धारणा रखना उचित नहीं है। मुझे बताया गया है कि सरकार को सघ का सविधान लिपिबद्ध चाहिए। मैंने वह दिया है। उसके आधार पर प्रत्यक्ष कार्य को अनुमति देने के पूर्व ही वह परिपूर्ण होगा— उसमें यदि ऐसी अपेक्षा की गई और सुधार व परिवर्तन सुझाए गए, तो फिर मुझे लगता है कि वह सविधान अनतकाल तक अपूर्ण तथा अकार्यान्वित ही रहेगा। मुझे लगता है कि सविधान को प्रत्यक्ष कार्यान्वित करना और परिस्थिति की माँग के अनुसार उसमें परिवर्तन और सुधार करना ही योग्य मार्ग है। यही सचमुच रचनात्मक और कार्योपयोगी मार्ग है।

भवदीय, विश्वसनीय
मा स गोलवलकर

१७ मई १९४९ को भेजे हुए पत्र का गृह सचिव श्री अय्यगार महोदय ने २४ मई को उत्तर भेजा जिसमे गृह मत्रालय की अप्रसन्नता और सघ पर से प्रतिबध हटाए जाने के बारे मे प्रतिकूल विचार स्पष्ट होते थे—

नई दिल्ली, २४ मई १९४९

श्री मा स गोलवलकर
द्वारा मध्य प्रदेश एव बरार शासन
महोदय,

कृपया सरदार पटेल को लिखे गए अपने १७ मई १९४८ के पत्र का सदर्भ लें।

१ भारत सरकार को खेद है कि आपने अपने पत्र में 'अर्थरहित

कथन' जैसे वाक्यांशों का प्रयोग किया और सरकार पर आरोप लगाया है कि वह अयोग्य व्यवहार करती है और सत्य, न्याय अथवा न्याय की प्रक्रिया के प्रति अश्रद्धा रखती है। ऐसी भाषा विनय एव शिष्टता के साधारण नियमों का पूर्णतया उल्लघन है। विशेष रूप से सरकार के साथ पत्र-व्यवहार में मेरे द्वारा लिखित पूर्व पत्रों के समान भाषा का प्रयोग किया जाना चाहिए, जिसमें सरकारी पत्राचारों के उपयुक्त पूर्ण उत्तरदायित्व का भाव परिलक्षित है।

२ आपके उत्तर की विषयवस्तु पर आते हुए भारत सरकार को यह जानकर खेद हुआ है कि आप राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के आदर्शों और कार्यवाहियों में भूतकाल में भी कोई दोष नहीं देखते हैं और यह सकेत करते हैं कि भविष्य में भी सगठन उसी आदर्शवाद से निर्देशित होगा तथा उन्हीं नीतियों का अनुसरण करेगा।

आपके इस तर्क के सदर्भ में कि कोई निष्पक्ष आयोग राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के विरुद्ध लगाए गए आरोपों की जॉच करे, भारत सरकार यह चाहती है कि आप भी इस तथ्य को समझें कि वह (सरकार) ही किसी सस्था या व्यक्ति के कार्यों के 'राज्य के लिए विरोधी या घातक होने' के बारे में अतिम निर्णायक है और होनी भी चाहिए। इस सबध में वह किसी जॉच आयोग के निष्कर्षों से सहमत होने के लिए बाध्य नहीं है।

वास्तव में इस प्रकार के मामले में एक निष्पक्ष न्यायिक जॉच आयोग का सुझाव केवल वहीं से आ सकता है, जो लोग प्रशासन के मूल तत्त्वों को भी नहीं समझते। मैं दोहराता हूँ कि भारत सरकार के पास काफी प्रमाण इस बात के हैं, जो राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ एव उसके सदस्यों के व्यक्तिगत हिसात्मक कार्यों में सलग्न होने की बात सिद्ध कर सकते हैं। उसने यह सोचकर बहुत अधिक समय तक प्रतीक्षा की कि सगठन अपने तरीके बदल देगा और उसने तभी कोई कार्यवाही की, जब उसका धैर्य समाप्त हो गया।

३ सरकार ने सोचा था कि कुछ शातिपूर्वक विचार करने के बाद आप उसके रुख की सच्चाई और दृढ़ता की सराहना करेंगे, परतु उसे यह देखकर दु ख हुआ कि आप राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के कार्यकलापों एव सगठन के उन्हीं दोषों से एक हठवादी सलग्नता प्रदर्शित कर रहे हैं, जो देश के हितों के लिए अत्यधिक हानिकारक सिद्ध हुए हैं। यह लगाव आप

इस सीमा तक ले गए हैं कि आप यह स्पष्ट तथ्य भी भूल जाते हैं कि प्रत्येक प्रांत में आपके संगठन के महत्त्वपूर्ण पदों पर एक विशिष्ट क्षेत्र से आए हुए विशिष्ट जाति के व्यक्ति कार्य कर रहे हैं। भारत सरकार ने यह आशा की थी कि आप राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संविधान के प्रारूप के प्रति उसके रचनात्मक दृष्टिकोण का समादर करेंगे, परंतु ऐसा लगता है कि या तो आपने उस दृष्टिकोण को ठीक प्रकार से समझा नहीं अथवा जानबूझकर अपने संविधान के आपत्तिजनक लक्षणों पर डटे हुए हैं। इस आशा में कि कदाचित उन्हीं अनिच्छित रीतियों पर आपको राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को चलाने की सुविधा मिल जाएँगी, जिन पर वह भूतकाल में चलता रहा है।

४ सरकार की नीति राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संबंध में पूर्ण स्पष्ट और असंदिग्ध है। वह जनहितों की संरक्षक है और होनी भी चाहिए। उसका यह कर्तव्य है कि उन दूषित एवं अवांछनीय तत्त्वों से उनके हितों की रक्षा करे। जब तक वह पूर्णरूप से आश्वस्त नहीं हो जाती कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ उन घटनाओं को दुहराने की स्थिति में नहीं रहेगा और उन अनर्थकारी प्रतिफलों को रोक दिया जाएगा, जो उसकी कार्यवाहियों से भूतकाल में प्राप्य हुए हैं, वह अपना वर्तमान रुख संगठन के संबंध में ढीला नहीं कर सकती।

आपका विश्वासपात्र
(एच वी आर अय्यंगार)
भारत सरकार के सचिव

श्री अय्यंगार के पत्र के उत्तर में श्री गुरुजी द्वारा १ जून १९४९ को श्री सरदार पटेल को पत्र लिखा—

सिवनी कारागार
१ जून १९४९

सम्माननीय गृहमंत्री
भारत सरकार नई दिल्ली

महोदय,

१ भारत सरकार के गृह सचिव श्री एच आर अय्यंगार, (आई

सी एस) का २४ मई १९४९ का पत्र प्राप्त हुआ। बहुत आभारी हूँ।

२ 'इस प्रकार के मामले में एक निष्पक्ष न्यायिक जाँच आयोग का सुझाव केवल वहीं से आ सकता है, जो लोग प्रशासन के मूल तत्त्वों को भी नहीं समझते', यह मुझे बताए जाने के लिए आपका आभारी हूँ। मैं इस विषय का अज्ञान स्वीकार करता हूँ। कोई साधारण मनुष्य नहीं तो प्रत्यक्ष महात्मा गाँधी भी इसी प्रकार के अज्ञान के हकदार थे, इसलिए इसे मैं अपना गौरव मानता हूँ। यदि यही आपके राज्यशासन का स्थायी तत्त्व हो तो वह खतरनाक है।

३ पत्र के अंतिम परिच्छेद में प्रकट विचारों से मैंने कुल मिलाकर पत्र का भाव समझने का प्रयास किया। इस और ३ मई १९४९ के पत्र ने मुझे एक संतोष प्रदान किया। वह यह कि शासन के अधिकार जिन व्यक्तियों के पास हैं, उनके मन का मैंने जो मूल्यांकन किया है, वह भूल नहीं है।

४ प्रस्तुत पत्र के पहले परिच्छेद के अनुसार लगता है कि मेरी भाषा के कारण सरकार का अधिक्षेप हुआ है। इसका मुझे बहुत खेद है। मैं एक सीधा-सादा आदमी हूँ। जहाँ ऊँच-नीच के भाव प्रभावी नहीं हैं, ऐसे संगठन में मैं पला हूँ। इसलिए राजकर्ताओं और मालिकों के साथ बोलते समय जिस भाषाशैली का अभ्यास और प्रयोग ज्ञात होना चाहिए, वह सीखने का अवसर मुझे कभी प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए मुझे जो योग्य और सत्य लगा, वह मैंने सीधा ओर स्पष्ट प्रकट किया। फिर भी सत्य के स्पष्ट रूप से प्रकटीकरण के कारण अनजाने शासन का अधिक्षेप हुआ, इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

५ मैं और एक बात के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ, क्योंकि जिनके हाथ में शासन की बागडोर है, उनके प्रति आदर होते हुए भी उनकी प्रसन्नता के लिए मैं अपने मन को उन आरोपों को स्वीकार करने के लिए नहीं मनवा सका, जिनके बारे में जानता हूँ कि झूठे हैं।

६ मेरे सरल और सत्य शब्द यदि सरकार को अरुचिकर लगते हों तो इसके आगे लेखन-सन्यास ही उत्तम होगा।

७ फिर भी मैं सरकार से यह प्रार्थना करता हूँ कि मेरे १७ मई १९४९ के पत्र के अंतिम परिच्छेद में सुझाए गए दृष्टिकोण पर विचार कर वह इस मामले का पुनर्विचार करे।

८ और क्या लिखूँ? मैं अपनी जगह आनंदित हूँ।

भवदीय

मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)

गृह मंत्रालय, भारत सरकार का पत्र

नई दिल्ली

११ जून १९४९

श्री मा स गोलवलकर

द्वारा मध्यप्रदेश एवं बरार शासन

महोदय,

आपके १ जून १९४९ को आदरणीय गृहमंत्री को लिखे गए पत्र के संदर्भ में मैं लिख रहा हूँ। आपका पत्र यह स्पष्ट करता है कि आप सत्यता व न्याय-संबंधी अपने विचारों और व्यवहार की सच्चाई में इतने अधिक निमग्न हैं कि आप कटु सत्यों को हँसकर ग्रहण करने की स्थिति में नहीं हैं या अपने द्वारा उत्पन्न की गई कठिनाइयों के प्रति किसी तर्कशुद्ध और सहयोगी रुख का आकलन नहीं कर सकते। इन परिस्थितियों में सरकार समझती है कि पत्राचार चालू रखने से कोई उपयोगी कार्य सिद्ध नहीं होगा। जहाँ तक सरकार का संबंध है, स्थिति वही है, जो मेरे पूर्व के दो पत्रों में कही जा चुकी है।

आपका विश्वासपात्र

(एच वी आर अय्यंगार)

भारत सरकार के सचिव

इसके पश्चात् श्री गुरुजी ने सरकार से किसी भी प्रकार का पत्र-व्यवहार पूर्णत बंद कर दिया था व मौलिचंद्र शर्मा से हुई बातचीत के बाद श्री गुरुजी ने उनके नाम एक निजी पत्र लिखा था। उसमे उन्होने संघ की भूमिका को पुन एक बार सुस्पष्ट शब्दो मे रखा। इसी पत्र के आधार पर संघ पर से प्रतिबंध हटाया गया। वह पत्र निम्नानुसार है--

१० जुलाई १९४९

प्रिय पंडित मौलिचंद्र जी,

आप मुझे मिलने आए और देश व समाज के कुछ वर्गों में संघ के विषय में क्या-क्या विचार व्यक्त हो रहे हैं, इसकी जानकारी दी। इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। गिरफ्तारी के पूर्व मेरे द्वारा दिए गए वक्तव्य, कारागार में मुझे मिलने आए मेरे मित्रों द्वारा किया गया पत्र-व्यवहार, गृह मंत्रालय से प्रत्यक्ष हुआ पत्र-व्यवहार, सब कुछ होने के बाद भी सरकारी प्रवक्ताओं द्वारा अनेक बार उपस्थित किए गए मुद्दों के विषय में मेरी जो भूमिका है, उसके विषय में अब भी किसी को शंका है, यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ। देश कठिन समय से गुजर रहा है, यह देखकर आप सोचते हैं कि देश में संपूर्ण समाज शक्तिशाली, सुसंगठित और स्थिर रहे और ऐसा सोचनेवालों को अपने मतभेद भूलकर निकट आना चाहिए। इसलिए संघ के ध्येय, संविधान और व्यवहार-विषयक भूमिका की मुझसे जानकारी प्राप्त करने के लिए कष्ट उठाकर आप मुझसे मिलने आए, ताकि सभी संदेहों का निवारण होकर स्थायित्व की शक्तियों का दृढ़ीकरण होने की परिस्थिति निर्माण की जा सके। आपके प्रयत्नों के पीछे की सदिच्छा और सद्‌भाव का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। मन में यत्किंचित् भी हिचकिचाहट न रखते हुए मैं आपके द्वारा पूछे गए मुद्दों के विषय में संघ की भूमिका का पुनर्निवेदन कर रहा हूँ।

१ भारतीय संविधान और राज्यध्वज पर निष्ठा-- स्वतंत्र देश में यह प्रश्न उपस्थित नहीं होना चाहिए। भारत का प्रत्येक नागरिक अपने देश के प्रति निष्ठावान होता है। वह उसका जन्मसिद्ध अधिकार है, जिसका उसे अभिमान है। संघ का प्रत्येक स्वयंसेवक मातृभूमि के लिए अपना सर्वस्व समर्पण करने की प्रतिज्ञा ग्रहण करता है। अन्य किसी भी भारतीय नागरिक के समान संघ का प्रत्येक स्वयंसेवक देश, संविधान तथा भारत की स्वतंत्रता तथा वैभव के सभी प्रतीकों के प्रति निष्ठावान होता है। ध्वज भी इसी प्रकार का एक प्रतीक है और इसलिए जैसा पहले कहा जा चुका है, प्रत्येक नागरिक के समान ही इस ध्वज का संरक्षण और सम्मान करना प्रत्येक स्वयंसेवक का गौरवास्पद कर्तव्य है। संविधान के प्रारूप की पाँचवीं धारा में यह पहले ही बतलाया जा चुका है, यह आप जानते हैं। वैसा जानबूझकर उल्लेख करना आवश्यक नहीं था, तथापि संघ की दृष्टि से इस विषय का कितना महत्त्व है, इस बात पर जोर देने के लिए ही उसका

निर्देश औचित्यपूर्ण समझा गया। मुझे विश्वास है कि हमारी सस्था के भगवा ध्वज का प्रश्न और सविधान समिति द्वारा स्वीकृत राज्यध्वज के प्रश्न में कोई मिलावट नहीं करेगा। आप जानते ही हैं कि काग्रेस का भी राज्यध्वज से अलग अपना स्वतत्र ध्वज है। वास्तव में कानून के अनुसार कोई भी पक्ष, सस्था या व्यक्ति सरकारी नियमों की सीमा के बाहर राज्यध्वज का उपयोग नहीं कर सकता। यह बात देखते हुए यह मुद्दा यदि प्रत्यक्ष सविधान में अधिक स्पष्ट कहा गया हो, तो मेरी कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

२ हिंसा और गुप्तता की नीति– सघ के आलोचकों ने सघ पर हिंसाचार और गोपनीयता का आरोप लगाया है, परतु आज तक हिंसाचार और गोपनीयता का आरोप सिद्ध नहीं किया गया है। राष्ट्रीय युद्ध का अपवाद छोडकर सघ ने हिंसा पर कभी भी विश्वास नहीं रखा। राष्ट्रीय युद्ध के समय प्रत्येक देशभक्त नागरिक का कर्तव्य है कि उसे सरकार की आज्ञा के नीचे देश के शत्रुओं के साथ लडना चाहिए। यह अपवाद छोडकर सुव्यवस्थित जनतांत्रिक समाज में और सघ की विचारधारा या व्यवहार में हिंसा को कोई स्थान नहीं है। यह बात धारा क्रमाक ४ में स्पष्ट उल्लिखित है।

गोपनीयता के बारे में कहना हो तो सघ द्वारा प्रस्तुत सविधान के प्रारूप और सघ की नीति में गोपनीयता नहीं है। इसका यह एक स्पष्ट प्रमाण है। खुले मैदान में काम करनेवाली वह एक सार्वजनिक सस्था है। हिंसा और षड्यत्र पर विश्वास रखकर उनके अनुसार कार्य करनेवाली सस्थाओं का आविर्भाव देखते हुए, धारा ४ के अत में स्पष्ट किया है कि हिंसक और गोपनीय पद्धतियों पर विश्वास रखनेवाले व्यक्तियों को सघ में कोई स्थान नहीं है।

३ सघ से सबधित समितियों का चुनाव– सघ के सविधान के प्रारूप से यह ध्यान में आएगा कि उस विषय में इडियन नेशनल काग्रेस के सविधान का ही स्थूल रूप में अनुकरण किया गया है। सघ की अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा काग्रेस की ऑल इडिया काग्रेस कमेटी के समान ही विशुद्ध निर्वाचित सभा है। सघ की प्रातीय प्रतिनिधि सभा भी प्रातीय काग्रेस कमेटियों के समान ही है। सरकार्यवाह काग्रेस अध्यक्ष के समान है, जिसका चुनाव अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा, जो सार्वदेशिक निर्वाचित सभा है, करती है। पुन काग्रेस प्रेसिडेंट के समान वह अपना केंद्रीय कार्यकारी मडल नियुक्त करता है। यह सभा ऑल इडिया काग्रेस वर्किंग

कमेटी के समान है। उसी प्रकार प्रातीय कार्यकारी मडल प्रोविन्शियल काग्रेस एक्जिक्यूटिव के समान हे। अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा नीतियों और कार्यक्रमों का निर्धारण करती है और कार्यकारी मडल केवल उनका अमल करता है। इस प्रकार आपके ध्यान में आएगा कि सपूर्ण सविधान निर्वाचन तत्त्व पर आधारित है। तात्रिक प्रशिक्षण और अन्य विशेषतायुक्त कार्य पूरा समय कार्य करनेवालों के जिम्मे सौंपा जाता है, जिनकी नियुक्तियाँ की जाती हैं। ये नियुक्तियॉ उन व्यक्तियों के सबधित विषय के विशेष ज्ञान के कारण की जाती हैं, परतु उनके अस्तित्व से निर्वाचित समितियों के प्रभुत्व और नियत्रण-क्षमता पर कोई भी प्रभाव नहीं पडता।

४ आमरण प्रतिज्ञा– सघ की प्रतिज्ञा हिदी में है ओर बहुत कम लोगों ने उसे गभीरता से पढा है, इसलिए उसके विषय में भ्राति है। मातृभूमि, भारतवर्ष और उसकी सेवा के प्रति निष्ठा प्रतिज्ञा में हे। वह प्रतिज्ञा सघ, सस्था या किसी व्यक्ति से निष्ठावान रहने के बारे में नहीं है। इसलिए देशसेवा के अन्य कार्य करने के लिए कोई सघ का त्याग करना चाहे तो प्रतिज्ञा-भग न करते हुए भी वह वैसा कर सकता है। सविधान धारा 'छ – उ' में वैसी व्यवस्था है।

५ अल्पवयस्कों को सघ में प्रवेश– अपने सविधान के अनुसार सघ का कार्य सास्कृतिक क्षेत्र तक सीमित है, उसे राजनीति से कोई सरोकार नहीं है। राष्ट्रीय चारित्र्य निर्माण करना, लोगों के शरीर और मन निरामय बनाना सघ का प्रमुख कार्य हे। आयु का १४ से २० वर्ष का काल सबसे अधिक सस्कारक्षम काल होता है। युवकों में कार्य करनेवाले सभी सास्कृतिक सगठन इसी आयु में उनपर सस्कार करने का कार्य करते हैं। इन सभी सास्कृतिक सगठनों के कार्यों पर नियत्रण रखने के उद्देश्य से जब तक कानून नहीं बनाए जाते, तब तक सघ से यह कहना कि तुम अठारह वर्ष के नीचे के अल्पवयस्कों को शिक्षण न दो, युक्तिसगत नहीं होगा। यहाँ में यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि सघ ने आज तक अल्पवयस्कों में जो कुछ कार्य किया है, वह कानून की मर्यादा में ही किया है। अपने पाल्य को सघ की शिक्षा नहीं देना चाहिए– ऐसी प्रार्थना यदि कोई अभिभावक करता है, तो उसका नाम हाजिरी से हटा दिया जाता है।

६ सरसघचालक द्वारा अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करना– आप यदि इस विषय की धाराओं की शब्द-रचना देखें तो उसमें कहा गया है कि वर्तमान सरसघचालक, अर्थात् मेरी नियुक्ति मेरे पूर्ववर्ती सरसघचालक,

निर्देश औचित्यपूर्ण समझा गया। मुझे विश्वास है कि हमारी सस्था के भगवा ध्वज का प्रश्न और सविधान समिति द्वारा स्वीकृत राज्यध्वज के प्रश्न में कोई मिलावट नहीं करेगा। आप जानते ही हैं कि काग्रेस का भी राज्यध्वज से अलग अपना स्वतत्र ध्वज है। वास्तव में कानून के अनुसार कोई भी पक्ष, सस्था या व्यक्ति सरकारी नियमों की सीमा के बाहर राज्यध्वज का उपयोग नहीं कर सकता। यह बात देखते हुए यह मुद्दा यदि प्रत्यक्ष सविधान में अधिक स्पष्ट कहा गया हो, तो मेरी कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

२ हिसा और गुप्तता की नीति– सघ के आलोचकों ने सघ पर हिसाचार और गोपनीयता का आरोप लगाया है, परतु आज तक हिसाचार और गोपनीयता का आरोप सिद्ध नहीं किया गया है। राष्ट्रीय युद्ध का अपवाद छोडकर सघ ने हिसा पर कभी भी विश्वास नहीं रखा। राष्ट्रीय युद्ध के समय प्रत्येक देशभक्त नागरिक का कर्तव्य है कि उसे सरकार की आज्ञा के नीचे देश के शत्रुओं के साथ लडना चाहिए। यह अपवाद छोडकर सुव्यवस्थित जनतात्रिक समाज में और सघ की विचारधारा या व्यवहार में हिसा को कोई स्थान नहीं है। यह बात धारा क्रमाक ४ में स्पष्ट उल्लिखित है।

गोपनीयता के बारे में कहना हो तो सघ द्वारा प्रस्तुत सविधान के प्रारूप और सघ की नीति में गोपनीयता नहीं है। इसका यह एक स्पष्ट प्रमाण है। खुले मैदान में काम करनेवाली वह एक सार्वजनिक सस्था है। हिसा और षड्यत्र पर विश्वास रखकर उनके अनुसार कार्य करनेवाली सस्थाओं का आविर्भाव देखते हुए, धारा ४ के अत में स्पष्ट किया है कि हिसक और गोपनीय पद्धतियों पर विश्वास रखनेवाले व्यक्तियों को सघ में कोई स्थान नहीं है।

३ सघ से सबधित समितियों का चुनाव– सघ के सविधान के प्रारूप से यह ध्यान में आएगा कि उस विषय में इडियन नेशनल काग्रेस के सविधान का ही स्थूल रूप में अनुकरण किया गया है। सघ की अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा काग्रेस की ऑल इडिया काग्रेस कमेटी के समान ही विशुद्ध निर्वाचित सभा है। सघ की प्रातीय प्रतिनिधि सभा भी प्रातीय काग्रेस कमेटियों के समान ही है। सरकार्यवाह काग्रेस अध्यक्ष के समान है, जिसका चुनाव अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा, जो सार्वदेशिक निर्वाचित सभा है, करती है। पुन काग्रेस प्रेसिडेंट के समान वह अपना केंद्रीय कार्यकारी मडल नियुक्त करता है। यह सभा ऑल इडिया काग्रेस वर्किंग

कमेटी के समान है। उसी प्रकार प्रातीय कार्यकारी मडल प्रोविन्शियल काग्रेस एक्जिक्यूटिव के समान है। अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा नीतियों और कार्यक्रमों का निर्धारण करती है और कार्यकारी मडल केवल उनका अमल करता है। इस प्रकार आपके ध्यान में आएगा कि सपूर्ण सविधान निर्वाचन तत्त्व पर आधारित है। तात्रिक प्रशिक्षण और अन्य विशेषतायुक्त कार्य पूरा समय कार्य करनेवालों के जिम्मे सौंपा जाता है, जिनकी नियुक्तियाँ की जाती हैं। ये नियुक्तियाँ उन व्यक्तियों के सबधित विषय के विशेष ज्ञान के कारण की जाती हैं, परतु उनके अस्तित्व से निर्वाचित समितियों के प्रभुत्व और नियत्रण-क्षमता पर कोई भी प्रभाव नहीं पडता।

४ आमरण प्रतिज्ञा– सघ की प्रतिज्ञा हिंदी में है और बहुत कम लोगों ने उसे गभीरता से पढा है, इसलिए उसके विषय में भ्राति है। मातृभूमि, भारतवर्ष और उसकी सेवा के प्रति निष्ठा प्रतिज्ञा में है। वह प्रतिज्ञा सघ, सस्था या किसी व्यक्ति से निष्ठावान रहने के बारे में नहीं है। इसलिए देशसेवा के अन्य कार्य करने के लिए कोई सघ का त्याग करना चाहे तो प्रतिज्ञा-भग न करते हुए भी वह वैसा कर सकता है। सविधान धारा 'छ - उ' में वैसी व्यवस्था है।

५ अल्पवयस्कों को सघ में प्रवेश– अपने सविधान के अनुसार सघ का कार्य सास्कृतिक क्षेत्र तक सीमित है, उसे राजनीति से कोई सरोकार नहीं है। राष्ट्रीय चारित्र्य निर्माण करना, लोगों के शरीर और मन निरामय बनाना सघ का प्रमुख कार्य है। आयु का १४ से २० वर्ष का काल सबसे अधिक सस्कारक्षम काल होता है। युवकों में कार्य करनेवाले सभी सास्कृतिक सगठन इसी आयु में उनपर सस्कार करने का कार्य करते हैं। इन सभी सास्कृतिक सगठनों के कार्यों पर नियत्रण रखने के उद्देश्य से जब तक कानून नहीं बनाए जाते, तब तक सघ से यह कहना कि तुम अठारह वर्ष के नीचे के अल्पवयस्कों को शिक्षण न दो, युक्तिसगत नहीं होगा। यहाँ मैं यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि सघ ने आज तक अल्पवयस्कों में जो कुछ कार्य किया है, वह कानून की मर्यादा में ही किया है। अपने पाल्य को सघ की शिक्षा नहीं देना चाहिए– ऐसी प्रार्थना यदि कोई अभिभावक करता है, तो उसका नाम हाजिरी से हटा दिया जाता है।

६ सरसघचालक द्वारा अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करना– आप यदि इस विषय की धाराओं की शब्द-रचना देखें तो उसमें कहा गया है कि वर्तमान सरसघचालक, अर्थात् मेरी नियुक्ति मेरे पूर्ववर्ती सरसघचालक,

अर्थात् डाक्टर हेडगेवार द्वारा 'उस समय के सघ के कार्यकारी मडल से विचार-विनिमय कर' की गई। भविष्य में सरसघचालक 'उस समय के कार्यकारी मडल की सम्मति से' अपना उत्तराधिकारी नियुक्त करेंगे। आप इस ओर ध्यान देंगे कि भविष्य के लिए 'विचार-विनिमय' शब्द के बदले 'सम्मति' शब्द रखा गया है। यह नियुक्ति, याने कार्यकारी मडल द्वारा निर्वाचित व्यक्ति की औपचारिक घोषणा मात्र है। कार्यकारी मडल, अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा द्वारा निर्वाचित और उसके नियत्रण में रहकर उसके आदेश कार्यान्वित करनेवाली सभा है। और भी एक बात ध्यान देने योग्य है कि सरकार्यवाह सघ के सविधान की दृष्टि से प्रमुख है। वह अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किया जाता है। बारहवीं धारा में जो कहा गया है, उसके अनुसार सरसघचालक केवल एक 'तत्त्वज्ञ और मार्गदर्शक' है।

७ एक विशिष्ट प्रदेश की विशिष्ट जाति का प्रभुत्व– सघ का प्रारभ नागपुर में हुआ। इसलिए प्रारभिक कार्यकर्ता वहीं प्रशिक्षित हुए थे। वे फिर प्रातों-प्रातों में गए और उन्होंने वहाँ शाखाएँ प्रारभ कीं। इन्हीं ऐतिहासिक कारणों से इनमें से अधिकाश कार्यकर्ता नागपुर के महाराष्ट्रीय युवक थे, परतु जैसे-जैसे काम बढने लगा, वैसे-वैसे अन्य प्रातों में बडी सख्या में कार्यकर्ता निर्माण हुए। उनमें से कुछ तो सघ के उच्च पदों पर आसीन हैं। यह सख्या आगे और बढेगी। यह प्रारूप-सविधान जब अपनी निर्वाचित सभा द्वारा कार्यान्वित होगा, तब तक सघ के बहुसख्य स्वयसेवक महाराष्ट्र के बाहर के ही होंगे। अन्य किसी भी सार्वजनिक सस्था के समान, अपने-अपने प्रात में सर्वसाधारण को सर्वाधिक प्रिय रहनेवाले लोग प्रातीय प्रतिनिधि सभा के सदस्य के नाते चुने जाएँगे और उनमें से अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा के लिए निर्वाचित होंगे। ऐसी आलोचना वर्तमान में भी सही नहीं है, परतु भविष्य की परिस्थितियों में तो वह लागू ही नहीं होगी।

८ हिसाब जाँचना– आप धारा १४ परिच्छेद 'सी', उपधारा ३ देखें तो स्पष्ट होगा कि सविधान के प्रारूप में वार्षिक हिसाब की जाँच एक आवश्यक कार्य माना गया है। इस विषय में सघ की नीति वास्तव में बहुत कठोर है, क्योंकि सार्वजनिक पैसों की प्रत्येक पाई-पाई का हिसाब रखा जाता है।

कुछ विशिष्ट शकाकुल लोगों का इस स्पष्टीकरण से सतोष होगा और सघ-विषयक वस्तुस्थिति उन्हें अवगत होगी– ऐसा मुझे विश्वास है।

मेरी शुभेच्छाएँ और आपने जो कष्ट उठाए, उनके लिए धन्यवाद देकर मैं यहीं समाप्त करता हूँ।

भवदीय विश्वसनीय
मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)

सारी बातचीत और पत्र व्यवहार के बाद भी अड़ियल रुख अपनाए हुई केंद्र सरकार ने इस निजी पत्र के आधार पर ही सघ पर लगा प्रतिबध १२ जुलाई १९४९ को बिना शर्त हटा दिया।

ऌ ऌ ऌ

दुष्टप्रवृत्ति के दमन को प्राय युद्ध–लिप्सा की सज्ञा दी जाती है, परतु बुराई के विरुद्ध सघर्ष और न्याय एव मानवमूल्यो की रक्षा की तुलना युद्ध–मनोवृत्ति से करना भ्रामक है। युद्धोन्माद हमारे रक्त मे नहीं है। हमारा दर्शन पूर्ण शक्ति के साथ सघर्ष करने का समर्थक है परतु युद्धोन्माद–प्रवृत्ति से विरत रहने को कहा गया है। योगश्वर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध करने का आदेश दिया किन्तु युद्ध–ज्वर रहित होकर लडने के लिये उसे ललकारते हुए कहा– युद्धस्व विगतज्वर। उन्होने स्वधर्म (दृढ कर्त्तव्य) भाव से सघर्ष करने के लिए ही आह्वान किया था–
स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।

– श्री गुरुजी



आभार-प्रदर्शन

प्रतिबंध हटने के पश्चात् प्रतिबंध हटाने में सहयोग करनेवाले सभी विशिष्ट जनों को श्री गुरुजी ने आभार-प्रदर्शन के पत्र लिखे। उनमें से कुछ यहाँ प्रस्तुत हैं–

---

(१)

डा हेडगेवार भवन,
नागपुर सिटी,
४ अगस्त १९४९

माननीय पडित जवाहरलाल जी नेहरू,

सादर प्रणाम।

विलब से पत्र लिखने के लिए आप क्षमा करेंगे। मै कुछ स्वस्थचित्त होने की प्रतीक्षा में था, परतु अभी तक हो नहीं सका। इधर कुछ समय से शारीरिक अस्वस्थता भी अनुभव कर रहा हूँ। फिर भी अधिक विलब करना उचित नहीं था।

लगभग डेढ वर्ष के लबे अतराल के पश्चात् अपनी महान सस्कृति के चिरतन अधिष्ठान पर अपने समाज को सगठित करने की आपने हमें सहर्ष अनुमति प्रदान की है। मुझे विश्वास है कि मेरे सहयोगी कार्यकर्ता पुन प्राप्त इस अवसर का उपयोग कर अपने विच्छिन्न एव असगठित समाज को परस्पर स्नेह के सूत्र में गूँथकर देश को बलशाली बनाने में सफल होंगे।

अपने अवशिष्ट सामर्थ्य से मैं अपने कार्यकर्ताओं के मन से कटु अनुभवों की स्मृति को परिमार्जित करने का प्रयास कर रहा हूँ। भूतकाल

की स्मृतियों में खोए रहने का कोई लाभ नहीं। पारस्परिक स्नेह, सम्मान और सहयोग के आधार पर स्वस्थ वातावरण की निर्मिति हेतु, जिससे सर्वोपयोगी सद्भावनायुक्त वातावरण बन सके, सरकार की ओर से सहयोग मिलने के प्रति मैं नि शक हूँ।

मुझे दिल्ली तथा उत्तर क्षेत्र के अन्य स्थानों पर प्रवास हेतु निकलना था, किंतु मेरी शारीरिक अवस्था प्रवास आगे बढाने के लिए बाध्य कर रही है। दिल्ली-प्रवास के समय आपसे भेंट करने का सौभाग्य प्राप्त करने के विषय में कुछ कह नहीं सकता। यह आपकी समय-उपलब्धता पर निर्भर करेगा, तथापि आपसे भेंट हेतु मैं आशान्वित हूँ।

अपने कार्य को जारी रखने में सहयोग के लिए मैं आपका आभारी हूँ।

आपका विश्वस्त

(मूल अंग्रेजी) मा स गोलवलकर

(२)

नागपुर

१८ जुलाई १९४९

मान्यवर सरदार जी,

सादर प्रणाम।

१३ जुलाई को प्रातःकाल कारागार से मुक्त होकर मैं सायंकाल नागपुर आया। स्वभावानुसार उसमें मुझे विशेष हर्ष आदि की भावना का अनुभव नहीं हुआ। नागपुर आने पर मित्रों ने मुझे समाचार दिया कि सरकार ने संघ पर से प्रतिबंध उठा लिया है। यह समाचार अवश्य संतोषजनक रहा, परंतु इस जगत् में निरपवाद सुख या दुःख मिलता नहीं इस सिद्धांत का भी अनुभव आया। अस्तु।

दीर्घ काल के पश्चात् सबसे मिलने का अवसर आने के कारण चारों ओर से मित्रों तथा सहकारियों के समूह आ रहे हैं। इस कारण पत्र लिखने के लिए अवकाश मिलना भी कठिन हो गया है। साथ ही जिन सज्जनों ने इस समस्या को सुलझाने के लिए स्वयस्फूर्त स्नेह से परिश्रम किए, उन्हें मिलकर कृतज्ञता प्रगट करना मेरा कर्तव्य है। अत मैं श्री वेंकटराम शास्त्री आदि सज्जनों से भेंट करने जा रहा हूँ। तत्पश्चात् कार्य

के पुनर्गठन की पूर्ण सिद्धता कर आपके दर्शन करने के लिए आने का प्रयत्न करूँगा।

ज्ञात हुआ है कि आप कुछ अस्वस्थ हैं। यह समाचार अतीव चिंता निर्माण कर रहा है। मैं श्री परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वह आपको स्वास्थ्यपूर्ण दीर्घायु प्रदान करे। राष्ट्र को आपके सुयोग्य कर्तृत्व की नितांत आवश्यकता है। आशा है कि मेरे उधर आने तक आपका स्वास्थ्य पर्याप्त सुधर चुका होगा।

कुछ भावनाएँ शब्दों की शक्ति से परे होती हैं। मैं वैसा ही कुछ अनुभव कर रहा हूँ। अत प्रत्यक्ष भेंट के समय ही उनको प्रकट करना उचित समझता हूँ, क्योंकि पत्र द्वारा उनको अशत भी प्रकट करना मेरी शक्ति के बाहर है। परमात्मा आपको कुशल रखे।

आपका

मा स गोलवलकर

(३)

नागपुर

१८ जुलाई १९४९

मान्यवर डा बाबासाहेब अंबेडकर,

सप्रेम नमस्कार।

आपसे भेंट का सुवसर प्राप्त हुए पर्याप्त समय बीत चुका है। इस बीच अनेक घटनाएँ घटीं। अतत भगवान की कृपा से संघ ग्रहणमुक्त हुआ। इसके लिए अनेक सज्जनों ने विविध प्रकार से सहायता की। बहुत लोगों ने अथक परिश्रम किया। इन सबके सम्मिलित प्रयत्नों से ही आज की यह सुखद स्थिति उत्पन्न हुई। सम्यक् विचार से यह सुख सम्मिश्रित ही है। यद्यपि इस विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है, तथापि मैंने उसपर अभी शात रहने का ही विचार किया है।

इस सब घटनाचक्र में आपने मुझे मिलने का समय दिया तथा सपूर्ण विषय शातचित्त से सुनने के पश्चात् यथासभव सहायता का आश्वासन दिया। अपने आश्वासन के अनुरूप अपनी ओर से भरसक सहायता की होगी, ऐसी मेरी मान्यता है। इस सहृदयता के लिए मैं आपका अत्यत आभारी हूँ। वस्तुत सहृदयता आपका स्वाभाविक गुण है। इसके

विपरीत व्यवहार की किसी को आपसे अपेक्षा भी नहीं है।

संघकार्य को फिर से व्यवस्थित करने की व्यस्तता के कारण आप जैसे हितचिंतकों को मिलने का आवश्यक कर्तव्य आगे बढाना पड रहा है। फिर भी यथाशीघ्र वहाँ आकर, सबसे मिलकर प्रत्यक्ष आभार प्रकट करने का दायित्व पूर्ण करने का प्रयास कर रहा हूँ।

प्रेमवृद्धि की कामना सहित ।

आपका

मा स गोलवलकर

(४)

नागपुर

१८ जुलाई १९४९

माननीय श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी,

सादर प्रणाम।

अंततोगत्वा दीर्घ अंतराल के पश्चात् संघ पर छाए बादल छँट गए। मुझे दिनांक १३ को कारावास से मुक्त किया गया। मेरे अधिकांश सहयोगी भी क्रमश छोड दिए गए हैं। यद्यपि मुझे ज्ञात हुआ है कि कई प्रांतों में कुछ सहयोगी अभी भी कारागृह का आनंद ले रहे हैं। पर क्यों? मैं नहीं जानता। मैं प्रसन्न हूँ कि सरकार ने सुयोग्य निर्णय लिया।

मैं उन लोगों के प्रति आभार कैसे प्रकट करूँ, जिन्होंने इस कठिन एवं कष्टप्रद अठारह महीनों के लंबे काल में अबाधित सौहार्द प्रकट कर समस्या सुलझाने में सहयोग दिया? उनमें आप अग्रणी हैं। आपके प्रति असीम कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं हैं। अपना कार्य शनै-शनै गतिमान एवं सशक्त होगा। कार्य को पुन व्यवस्थित करने हेतु मुझे व्यस्त रहना होगा। आपसे मिलने की प्रबल इच्छा होते हुए भी उसे कुछ दिनों तक स्थगित रखना पडेगा। मैं आगामी मास के पूर्वार्द्ध में दिल्ली आने का मानस बना रहा हूँ। मुझे आशा है कि आप उस समय मेरे लिए अपने अमूल्य क्षण निकालने की कृपा करेंगे। मेरे मन में जो विविध विचार एवं कल्पनाएँ हैं प्रत्यक्ष भेंट के समय हम उनपर विचार-विमर्श कर सकते हैं।

मुझे आशा है कि आपकी तथा अन्य मित्रों की सहानुभूति एव

परामर्श से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ हिंदू-समाज के सर्वांगीण विकास और संगठन का अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकेगा।

सम्मानपूर्वक

आपका अति आत्मीय
मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)

(५)

श्री काकासाहब गाडगील महाराष्ट्र के वरिष्ठ कांग्रेस नेता थे और उस समय केंद्रीय मंत्रिमंडल मे मंत्री थे।

नागपुर
१८ जुलाई १९४९

मान्यवर श्री काकासाहब गाडगिल,

सादर नमस्कार।

पिछले अक्तूबर अंत एवं नवंबर के प्रारंभ में मुझे आपसे मिलने का सौभाग्य मिला था। अब पर्याप्त समय बीत चुका है। इस बीच अनेक घटनाएँ घटीं। आप सबकी शुभाकांक्षाओं, आत्मीय प्रयत्न एवं ईश्वर की कृपा के कारण अंततः संघ ग्रहणमुक्त हुआ। इस संबंध में आपके प्रति जितनी कृतज्ञता व्यक्त की जाए, कम ही है। आप सभी के सहयोग से संघ व्यवस्थित रूप धारण कर अपने लक्ष्य की ओर निरंतर बढने में समर्थ होकर, इस प्रिय मातृभूमि के सर्वांगीण उन्नति में अपना असामान्य योगदान देगा, इसका मुझे विश्वास है।

धीरे-धीरे कार्य व्यवस्थित होगा, परंतु मुझे कुछ दिन इसी कार्य में संलग्न रहना पडेगा, तथापि समय निकालकर आगामी माह के पूर्वार्द्ध में दिल्ली आकर अपने मन की भावनाओं को आपके समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास करूँगा। भाषा पर प्रभुत्व कम होने के कारण अपनी बात योग्य ढंग से प्रकट नहीं कर सका हूँ, इस न्यूनता के कारण आप रुष्ट नहीं होंगे, ऐसा विश्वास है।

प्रेमवृद्धि की कामना सहित।

आपका
मा स गोलवलकर

(६)

नागपुर
१८ जुलाई १६४६

मान्यवर राजर्षि पुरुषोत्तमदास जी टडन,

सादर प्रणाम।

१८ महीनों के वनवासतुल्य जीवन के पश्चात् राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ बधनों से मुक्त होकर अपने हिंदू-समाज का सास्कृतिक नींव पर पुनर्गठन करने का कार्य करने के लिए फिर से प्रवृत्त हो सका है। यह सुखद स्थिति उत्पन्न होने में अनकों के प्रयत्न कारणीभूत हुए हैं। आपने तो सदैव ही इस कार्य से पुत्रवत् प्रेम किया है। जब चारों ओर सघ का नामनिर्देश भी दोषास्पद-सा हो गया था, उस अधकारमय काल में भी आपके प्रेम का दीपक स्थिरता से प्रकाश देता हुआ हम लोगों की आशा जिलाता रहा। मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि यह कार्य आपके वात्सल्य के योग्य बने और उसपर आपका प्रेम दिन-प्रतिदिन वृद्धिगत होता हुआ इसको सुयोग्य प्रेरणा देता रहे।

अभी मैं कार्य को फिर से समेटने मे लगा हूँ। उसकी प्राथमिक व्यवस्था कर आपके दर्शन कर समक्ष में अपनी कृतज्ञता प्रकट करने का आवश्यक तथा आनदवायक कर्तव्य पूर्ण करने का प्रयत्न करूँगा। सभवत अगले मास में यह सुयोग प्राप्त हो सकेगा। तब तक हृदय की उत्सुकता को रोकना ही पड रहा है।

शेष आपके आशीर्वाद से सब कुशल है।

आपका
मा स गोलवलकर

(७)

श्री बाबासाहब खापर्डे (लोकमान्य तिलक जी के निकट सहयोगी अमरावती के श्री दादासाहब खापर्डे के सुपुत्र) को लिखा पत्र—

नागपुर
१६४६

मान्यवर श्रीमत बाबासाहब ख

प्रेमपूर्वक सादर

आपके द्वारा प्रेषित

}

परतु देशभर से आनेवाले सहकारी कार्यकर्ताओं से मिलने में ही सारा समय निकल जाता है। दूसरा विचार आया कि श्रीमत बाबासाहब घटाटे के कारावास से मुक्त होने के पश्चात् उनसे मिलने आप नागपुर आएँगे ही, तब प्रत्यक्ष भेंट होगी। इस कारण निश्चित था, परतु अभी तक आपका आना न होने के कारण, कम से कम पत्र द्वारा आपसे भेंट हो सके, इसी उद्देश्य से पत्र लिख रहा हूँ।

इन अठारह महीनों की दीर्घकालावधि में एक बार आपसे भेंट हुई थी। आप सभी की शुभेच्छा और प्रयत्नों के कारण सघ अपना कार्य करने के लिए मुक्त हुआ है। एक बार फिर गाडी पटरी पर लाने तक मेरी व्यस्तता रहेगी। इस कारण आपसे भेंट कब हो सकेगी, कहना कठिन है। तो भी शीघ्र ही इसका प्रयत्न अवश्य करूँगा।

इस अवधि में मैं सुख में था– ऐसा ही कहना पडेगा, क्योंकि आप सब लोग इस कठिन परिस्थिति में से मार्ग निकालने के लिए अनेक कष्ट उठा रहे थे। आपके इन प्रयत्नों के लिए किस विधि आभार प्रकट करूँ, समझ में नहीं आता। समाधान केवल इतना ही है कि देर से ही क्यों न हो, आपके प्रयत्न सफल रहे। मुझे ऐसा लगता है कि इस विषय में अभी कुछ लिखना उचित नहीं।

प्रेमवृध्दि की कामनासहित।

भवदीय
मा स गोलवलकर

(८)

नागपुर
१८ जुलाई १९४९

श्री गोपाल स्वामी अय्यगार,

सादर प्रणाम।

आपसे हुई पिछली भेंट के पश्चात् अनेक घटनाएँ घटित हुईं। अततोगत्वा राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ को हिंदू-समाज को सगठित कर उसके सर्वांगीण विकास हेतु अपने सकारात्मक कार्य को करने के लिए मुक्त किया गया। इस दुर्भाग्यपूर्ण अध्याय को समाप्त कर सुखद अत को लाने में अनेक समर्थकों ने जो निरपेक्ष व अथक प्रयास किए, उनके प्रति किन

शब्दों में अपनी भावनाएँ प्रकट करूँ, समझ में नहीं आता।

आपने मेरे पक्ष को सहानुभूतिपूर्वक सुनने की कृपा की तथा हमारे कार्य के प्रति स्नेहभाव रख यथासंभव सहयोग हेतु आश्वस्त कर, व्यक्तिगत धारणाओं के रहते हुए भी सकारात्मक सहयोग दिया। आप सबके शुभचिंतन से प्रयत्न सफल हुए। इसके लिए मैं आपका अतीव ऋणी हूँ। अति शीघ्र आपसे व्यक्तिगत रूप से मिलने का हर संभव प्रयास करूँगा।

तमिलनाडु के आपके प्रबल समर्थक त्रिचि निवासी माननीय श्री आर श्रीनिवास अय्यर के असामयिक निधन का समाचार आपको प्राप्त हो गया होगा।

सम्मानपूर्वक आपका
मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)

(६)

नागपुर
४ अगस्त १९४९

श्रीमान् त्रिलोकीनाथ जी भार्गव,

सादर नमस्ते।

३० जुलाई १९४९ का आपका कृपापत्र प्राप्त हुआ। जनाधिकार समिति के कार्य द्वारा संघ को न्याय प्राप्त करवा देने के उद्योग में आपने जो कष्ट उठाए, उसके लिए सर्वप्रथम मैं आपका आभार मानता हूँ।

आपके पत्र में लिखी बातों के संबंध में श्री एकनाथ जी रानडे से मैंने बातचीत की है और इस विषय में उचित ध्यान देने के लिए उन्हें सूचित किया है। वे इसी सप्ताह इंदौर पहुँचनेवाले हैं। आपसे मिलकर व सारी जानकारी प्राप्त कर उचित कार्यवाही करेंगे।

सितंबर माह में मेरे इंदौर आने की संभावना है। उस समय प्रत्यक्ष बातें हो सकेंगी, परंतु मुझे विश्वास है कि उक्त विषय के संबंध में बातचीत करने के लिए तब तक कुछ शेष नहीं रहेगा। फिर भी आप अवश्य मिलें, यह मेरी हार्दिक इच्छा है। अस्तु।

आपका
मा स गोलवलकर

(१०) सरदार वल्लभभाई पटेल

नागपुर
१२ अगस्त १६४६

मान्यवर सरदार जी (मुबई),

सादर प्रणाम।

आपका कृपा पत्र मिला। सोचा था कि शीघ्र ही दिल्ली जाकर आपके दर्शन करूँगा, परतु शरीर ने साथ नहीं दिया। स्वास्थ्य खराब होने के कारण प्रवास की तिथि बदलनी पडी।

इसी बीच समाचार-पत्रों में पढा कि आपको विश्राम की नितात आवश्यकता होने के कारण आप मुबई जा रहे हैं। आज यह भी पढा कि मुबई आने के पश्चात् आपके स्वास्थ्य में सुधार है। पहले समाचार से निर्माण हुई चिता कुछ अश में कम हुई। सोचता था कि आपसे कब, कहाँ और कैसे मिल सकूँगा। मान्यवर पडित द्वारकाप्रसाद मिश्र से परामर्श करने पर उनकी ओर से यह सूचना मिली कि १६ अगस्त की दोपहर को आपके दर्शन हो सकेंगे। अत मैं अपने शरीर की ओर कुछ दुर्लक्ष्य कर १६ अगस्त को प्रात काल मुबई आऊँगा। इस पत्र को लानेवाले सज्जन को यदि आप समय निर्धारित कर सूचना दे सकें तो बहुत अच्छा होगा। मुबई पहुँचने पर आपको स्मरण-पत्र भेजने का प्रयत्न करूँगा तथा निर्धारित समय फिर निश्चित कराने की चेष्टा करूँगा। आशा है कि भगवान की कृपा से आप १६ अगस्त तक पर्याप्त स्वस्थ होकर मुझे दर्शन दे सकेंगे।

आपसे भेंटकर दूसरे ही दिन मुझे नागपुर लौटना है। मेरे साथ मेरे सहयोगी और सरकार्यवाह श्री दाणी जी रहेंगे और आपके दर्शन करेंगे। आपकी अनुमति रहे।

आपका
मा स गोलवलकर

(११)

२०, बाराखभा रोड,नई दिल्ली
२७ नवबर १६४६

माननीय पडित जवाहरलाल जी नेहरू

सादर प्रणाम।

मैं आज प्रात काल यहाँ पहुँचा। गत बार आपसे मिलने पर आपके अमरीका से लौटने के बाद फिर से मिलने का अनुरोध किया था। यदि

आपको अधिक असुविधाजनक न हो तो किस दिन एवं कब आपसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हो सकता है, इसकी सूचना देने का कष्ट करें। मुझे दो दिन बाद नागपुर लौटना है, अत यदि आप कल या परसों का समय दे सकें तो बडी कृपा होगी।

सकारात्मक उत्तर की प्रतीक्षा में—

आपका विश्वस्त

मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)

(१२) माननीय प्रधानमत्री का उत्तर

नई दिल्ली

२७ नवबर १९४९

प्रिय श्री गोलवलकर,

आपका २७ नवबर का पत्र मिला। ससद सत्र के चालू रहते अत्यधिक व्यस्त होने के कारण, समय मॉंगकर आपने मुझे चिंता में डाल दिया है। हालॉंकि आप मात्र दो दिन यहॉं हैं, मैं २९ नवबर की सुबह ७ बजे आपसे मिल सकता हूँ। क्या आप मुझे मेरे निवास पर मिल सकेंगे?

भवदीय

जवाहरलाल नेहरू

माननीय प्रधानमत्री के २७ नवबर १९४९ के पत्र का श्री गुरुजी द्वारा दिया गया उत्तर—

२०, बाराखभा रोड, नई दिल्ली,

२८ नवबर १९४९

माननीय पडित जवाहरलाल जी नेहरू,

सादर प्रणाम।

आपका २७ नवबर १९४९ का कृपा पत्र मुझे आज प्रात लगभग ९ ३० बजे प्राप्त हुआ। अत्यधिक व्यस्तता के मध्य मिलने का समय देने हेतु मैं अति कृतज्ञ हूँ। कल २९ नवबर १९४९ को प्रात ७ बजे मैं निश्चित ही आपके यहॉं आऊँगा।

आपकी सहृदयता के लिए धन्यवाद।

आपका विश्वस्त

मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)

परिशिष्ट

(१)

(अंग्रेजी दैनिक हितवाद नागपुर के १ अगस्त १९४९ के अंक मे प्रकाशित समाचार)

सरकार को कोई आश्वासन नहीं दिया

नागपुर, ३१ जुलाई। 'कोई समझौता नहीं हुआ और न ही कोई आश्वासन दिया गया'— यह स्पष्ट घोषणा श्री मा स गोलवलकर ने कल सायकाल माउट होटल मे की, जहाँ श्री वी एस फडके, श्री डी पी ओगले, श्री आर के घोटे और श्री डी डी यादव की ओर से उनके स्वागत का आयोजन किया गया था।

श्री मणि द्वारा स्वागत भाषण

'हितवाद' के सपादक श्री ए डी मणि ने स्वागत-भाषण में श्री गोलवलकर तथा सघ के अन्य नेताओं का स्वागत करते हुए कहा कि सन् १९४७ तक केवल काग्रेस ही ऐसा सगठन था, जो देश की सपूर्ण जनता का प्रतिनिधित्व करता था और अग्रेजों के खिलाफ लड रहा था। किंतु अब काग्रेस राष्ट्रीय सगठन नहीं रहा। वह अब केवल एक दल हो गया है। सन् १९४८ में राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर प्रतिबध लगाकर उसने नागरिक स्वतत्रता पर सकट का प्रश्न खडा कर दिया। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ पर लगाया गया यह आरोप कि वह राष्ट्रपिता की हत्या के लिए जिम्मेदार है, बहुत अन्यायपूर्ण था। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ इसमें से विजयी होकर सामने आया है, क्योंकि सरकार आरोप को सिद्ध करने में असफल रही है।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने नागरिक स्वतत्रता के लिए सघर्ष किया और 'हितवाद' ने उसे समर्थन दिया, क्योंकि हमें लगा कि इसमें प्रजातत्र के भविष्य का हित निहित है। श्री मणि ने सरकारी विज्ञप्ति का उल्लेख करते हुए अपने भाषण में पूछा कि श्री गोलवलकर जी ने कोई शर्त स्वीकार की है अथवा कोई आश्वासन दिया है?

श्री गोलवलकर जी ने कहा, उनकी इच्छा सरकारी विज्ञप्ति, जो कि सरकार ने उसकी अपनी दृष्टि से ठीक समझकर जारी की है, के सबध में बोलने की नहीं थी। चूँकि प्रश्न पूछा गया है, तो वे उन सब लोगों को, जो

आपको अधिक असुविधाजनक न हो तो किस दिन एव कब आपसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हो सकता है, इसकी सूचना देने का कष्ट करें। मुझे दो दिन बाद नागपुर लौटना है, अत यदि आप कल या परसों का समय दे सकें तो बडी कृपा होगी।

सकारात्मक उत्तर की प्रतीक्षा में—

आपका विश्वस्त
मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)

(१२) माननीय प्रधानमत्री का उत्तर

नई दिल्ली
२७ नवबर १९४६

प्रिय श्री गोलवलकर,

आपका २७ नवबर का पत्र मिला। ससद सत्र के चालू रहते अत्यधिक व्यस्त होने के कारण, समय मॉगकर आपने मुझे चिन्ता में डाल दिया है। हालाँकि आप मात्र दो दिन यहाँ हैं, मैं २९ नवबर की सुबह ७ बजे आपसे मिल सकता हूँ। क्या आप मुझे मेरे निवास पर मिल सकेंगे?

भवदीय
जवाहरलाल नेहरू

माननीय प्रधानमत्री के २७ नवबर १९४६ के पत्र का श्री गुरुजी द्वारा दिया गया उत्तर—

२०, बाराखभा रोड, नई दिल्ली,
२८ नवबर १९४६

माननीय पडित जवाहरलाल जी नेहरू,

सादर प्रणाम।

आपका २७ नवबर १९४६ का कृपा पत्र मुझे आज प्रात लगभग ९ ३० बजे प्राप्त हुआ। अत्यधिक व्यस्तता के मध्य मिलने का समय देने हेतु मैं अति कृतज्ञ हूँ। कल २९ नवबर १९४६ को प्रात ७ बजे मैं निश्चित ही आपके यहाँ आऊँगा।

आपकी सहृदयता के लिए धन्यवाद।

आपका विश्वस्त
मा स गोलवलकर

(मूल अंग्रेजी)



उससे संबंधित हैं, यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि बातचीत में (सरकार के साथ) उन्होंने निजी हैसियत से हिस्सा नहीं लिया। उन्होंने अपने महान संगठन के प्रति कुछ भी अपमानजनक स्वीकार करने के बजाय अपने जीवन का अंत अधिक अच्छा समझा होता।

श्री गोलवलकर ने घोषणा की कि 'कोई समझौता नहीं हुआ। किसी भी प्रकार की कोई शर्त या वचन नहीं दिया गया।'

(२)

मुंबई महाराष्ट्र विधान सभा मे १४ अक्तूबर १९४९ को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ-विषयक पूछे गए प्रश्नोत्तर की कार्यवाही का विवरण नीचे लिखे अनुसार है—

प्रश्न क्रमांक १५०३ दिनांक २४ ९ ४९ श्री लल्लूभाई माकनजी पटेल (सूरत जिला) द्वारा पूछा गया—

"क्या गृह तथा राजस्व मंत्री महोदय बताने की कृपा करेंगे

(अ) क्या यह सत्य है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर से प्रतिबंध हटा लिया गया?

(ब) यदि ऐसा है तो प्रतिबंध हटाने के कारण क्या हैं?

(स) प्रतिबंध सशर्त हटा है या बिना किसी शर्त के?

(ड) यदि सशर्त हटा है तो वे शर्तें क्या हैं?

(इ) क्या राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेता द्वारा सरकार को कोई आश्वासन दिए गए हैं?

(फ) यदि ऐसा है तो आश्वासन कौन-से हैं?

श्री दिनकर राव ना देसाई प्रति श्री मोरारजी र देसाई का उत्तर

(अ) हॉ

(ब) प्रतिबंध हटा लिया गया, क्योंकि भविष्य में चालू रखना आवश्यक नहीं समझा गया।

(स) बिना किसी शर्त के हटाया गया।

(ड) प्रश्न नहीं उठता।

(इ) नहीं।

(फ) प्रश्न नहीं उठता।



पुनश्च हरि. ॐ

प्रतिबंध समाप्ति के पश्चात् कार्य को फिर से प्रारंभ करने की त्वरित आवश्यकता इस कालखंड में घटी घटनाओं के कारण उपजी कटुता को दूर करने तथा स्वयंसेवकों में एक नए उत्साह का संचार कर कार्य में प्रवृत्त करने के लिए श्री गुरुजी ने तुरंत देश-भर का प्रवास किया। इस प्रवास के कारण संघकार्य पुनः अपनी गति से प्रारंभ हुआ, साथ ही समाज में व्याप्त विषाक्त व अविश्वास का वातावरण भी दूर हुआ। वह मार्गदर्शन आज भी उतना ही प्रेरक है।

---

१ मा विद्विषावहै

(१८ जुलाई १९४९ को नागपुर के स्वयंसेवकों के सम्मुख मोहिते संघस्थान पर प्रतिबंध के बाद दिया गया प्रथम बौद्धिक)

'शाखा का प्रारंभ' यह भाषण का कोई विशेष प्रसंग है, ऐसा नहीं लगता और मेरी मनःस्थिति भी भाषण करने योग्य नहीं है। एकांतप्रिय जीवन की रुचि रहने के बाद भी इस कार्य की प्रेरणा मुझे मिली, उसका उत्तरदायित्व मुझपर आया। कार्यरत रहते हुए ही अकस्मात यह आपत्ति आई। जीवनभर महान तपस्या करते हुए, रक्त की एक-एक बूँद सुखाते हुए तथा आत्मसमर्पण करते हुए आद्य सरसंघचालक जी ने इस कार्य को बढ़ाया था। अब क्या उस कार्य की असफलता का कलंक मेरे माथे पर लगेगा? क्या उस तपस्वी की तपस्या विफल होगी? यही विचार गत १८ मास तक मन को व्यथित किए रहा।

अपने अंतःकरण की एक अन्य भावना आपके सम्मुख रखता हूँ।

अपनी कार्यपद्धति हम सबको पता है। कोई भी स्वयसेवक बना, उससे परिचय हुआ तो उससे ऐसा तादात्म्य हो जाता है कि उसका वियोग, याने अपने प्राण से ही वियोग– जैसी मन की अवस्था हो जाती है। हमने इसका अनुभव किया है।

सपूर्ण भारतवर्ष में अनेक बार भ्रमण कर अनेक स्वयसेवकों के साथ मेरा तादात्म्य हो गया था और उस स्थिति में मुझे जेल की चारदीवारी के अदर बैठना पडा। मैं अकेला था और मेरे सामने थे नित्य के २४ घटे। मैं एक-एक गाँव का स्मरण करता, वहाँ के आत्मीय स्वयसेवक बधु का चेहरा दृष्टि के सम्मुख लाता, जैसे बैठक में मैं उसका परिचय प्राप्त कर रहा हूँ। ऐसा चित्र मन पटल पर अकित करता। परतु मनुष्य की इच्छा तो मूर्त स्वरूप देखने की रहती है। भगवान श्रीकृष्ण के परब्रह्मस्वरूप वर्णन से गोप-गोपी सतुष्ट नहीं हुए। उन्हें तो भगवान का सगुण रूप ही देखना था। वैसे भी अव्यक्त का चितन क्लेशकारक होता है। मेरा अत करण भी क्लेश से भर उठा, परतु भावनाओं के इस सघर्ष में भी मैं अपना आवश्यक कर्तव्य करता रहा।

टूटे अत करण फिर से जुडे

अकस्मात एक दिन बताया गया कि मैं मुक्त हूँ। नागपुर आने तथा सभी छोटे-बडे स्वयसेवकों को मिलने के लिए अत करण आतुर हो उठा। यही विचार मन में उठता था कि स्वयसेवकों के समीप जाऊँगा, इतने दिन दूर रहने के कारण बिखरे हुए अत करण फिर से एकत्र करूँगा। स्वयसेवकों से मिलने में जो आनद आता है, उसको छोड दिया जाए तो मुझे न तो बदीवास का दु ख है और न ही बाहर आने का सुख। शरीर, मन, बुद्धि को पूर्णत व्याप्त करने वाला अपना कार्य फिर से देखूँगा और इतने दिनों तक केवल मजबूत गहरी जड होने के कारण ही जो जीवित रहा, उस सघवृक्ष को पुन पत्तों, फलों और फूलों से लदा देखूँगा, इसी आशा से मैंने बदीवास के बाहर पैर रखा और यही आशा सँजोए मैं आज आपके सम्मुख खडा हूँ।

कार्य प्रतीक्षा कर रहा है

आज पुन कार्य का प्रारभ हो रहा है। निद्रा से जगने पर मनुष्य स्वय को ताजा और उत्साहित अनुभव करता है, हमें उसी उत्साह से कार्य

में जुटना है। अपने विशाल भारतवर्ष के सम्मुख आज अनेक समस्याएं है।
सर्वत्र दु ख, दैन्य, कष्ट दिखाई देते हैं। हम तो दूसरों के सुख में ही सुख की अनुभूति करते हैं। हमारी तो शिक्षा ही है दूसरों के सुख में सुख की अनुभूति करना। एक साधारण व्यक्ति का दैन्य भी मुझसे देखा नहीं जाता और भारत को दु ख-दैन्य से घिरा हुआ देख हम लोगों के अत करण को कितनी पीडा होती होगी? परिश्रमपूर्वक सघकार्य विस्तारित करते हुए इन सारी समस्याओं को निपटाने हेतु अपना कार्य कितना उपयुक्त है, यही हमें देखना है। कारण, समाज में व्याप्त अनेक दु ख केवल सहानुभूतिशून्यता, उदासीनता तथा प्रेम के अभाव के फलस्वरूप निर्माण होते हैं। 'दूसरों के दु ख से शतगुणित दु खी होना और अपना व्यक्तिगत सुख-दु ख भूल जाना यही अपने काय का मूलभूल आधार है।' यह भावना यदि सर्वत्र विस्तारित होती है तो सभी आपत्तियों पर कायाकल्प-रसायन के समान परिणामकारी सिद्ध होगी, इसमें कोई सदेह नहीं।

मा विद्विषावहै

मुझसे अनेक लोगों ने पूछा कि 'बाहर निकलने पर आप क्या करेंगे?' मैंने कहा, 'जो करता आया हूँ, वही करूँगा।' यह प्रश्न भी पूछा गया कि 'अब इस काय की आवश्यकता है क्या?' आवश्यकता न होती तो इतना उद्योग क्यों करते? स्वयसेवकों को कहा जा सकता था कि घर जाओ और मौज करो। परतु कार्य की नितात आवश्यकता है, इसलिए परिश्रम की भी।

इस कार्य का विकास कर इसे तेजस्वी बनाना है। कार्य की शुद्धि हृदय की निर्मलता पर निर्भर होती है। विशुद्ध प्रेमभावना के बिना हृदय पवित्र नहीं रहता। शत्रु हो या मित्र, अपना मत्र 'मा विद्विषावहै' का रहे। बहुत बार बुराई में से भी अच्छाई निकलती है। बहुतों ने इसका प्रयत्न किया कि मुझे क्रोध आए, परतु मुझे किसी के प्रति द्वेष नहीं है। कोई भी मेरा ऐसा नुकसान नहीं कर सकता कि मैं उससे द्वेष करूँ। विशुद्ध भाव अत करण में धारण कर-- भारतवर्ष एक महान राष्ट्र शरीर है और हम उसके अगप्रत्यग है, यही भाव हृदय में रखकर अपने ध्येयनिष्ठ व प्रेमपूर्ण व्यवहार से सबको जीत कर अपना यह महातेजस्वी कार्य खडा करना चाहिए। शरीर के एक अग का दूसरे अग से लवमात्र घर्षण हो गया तो भी उसकी उपेक्षा कर, निश्चयपूर्वक भारतवर्ष के कोने-कोने में सघ-गगा प्रवाहित करें। आज अपने कार्य को पुन प्रारभ करते समय अत करण शुद्ध रखें, इसकी आवश्यकता है।

२ सघ की परीक्षा

(सार्वजनिक समारोह पुणे २४ जुलाई १९४९)

आज का प्रसग मेरे लिए नया है। अपना काम शाति से करते रहना और मान-सम्मान के कार्यक्रम टालते रहना मेरी प्रकृति है। जिस कार्य को करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उसकी शिक्षा भी वैसी ही है। इसलिए इस कार्यक्रम के कारण मैं विचलित हूँ। मुझे भाषा का वैविध्य ज्ञात नहीं और गत डेढ-दो साल से कारावास में स्थानबद्ध रहने के कारण बाह्य जगत् में हो रही घटनाओं की भी पूर्ण जानकारी नहीं है। आपको पता होगा कि शरीर का कोई अवयव अगर काम में न लाया जाए तो वह निष्क्रिय हो जाता है। मेरी अवस्था कुछ उसी प्रकार की हो गई है।

कर्तव्यपूर्ति का समाधान

सघ को ग्रसनेवाले ग्रहण की समाप्ति डेढ वर्ष बाद हुई है। मैं इस घटना को अलग दृष्टि से देखता हूँ। मेरी श्रद्धा है कि सघ पर आया हुआ सकट ईश्वरीय योजना से ही आया था। भगवान भला और बुरा– दोनों करते हैं। मनुष्य उसके हाथ का एक खिलौना मात्र है। दुर्योधन भी ऐसा ही कहता था– 'मैं भला-बुरा दोनों समझता हूँ, पर हृदयासीन ईश्वर जो कहते हैं, वैसा करता हूँ।' प्रत्येक व्यक्ति की ऐसी ही स्थिति रहती है। परमेश्वर ही कर्म कराता है– ऐसी श्रद्धा होने के कारण जो घटनाएँ घटित होती हैं, उनसे दु खी होने का क्या कारण? मैं अपने ही बधुओं पर क्यों क्रोध करूँ, उनसे द्वेष क्यों करूँ? मेरा नुकसान करना उनके सामर्थ्य के बाहर है, अत दूसरों से द्वेष क्यों करें?

प्राचीनतम काल से जो बडे लोग हुए हैं, उन सबको दु ख ही दु ख भोगना पडा। किंचित भी लौकिक सुख नहीं मिला। उन्हें समाधान केवल कर्तव्यपूर्ति में ही मिला। परमोच्च ईश्वरी अवतार प्रभु रामचद्र व भगवान श्रीकृष्ण को भी क्या कम दु ख भोगने पडे? मुझे लगता है कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर जानबूझकर यह सब कराते हैं। मनुष्य सकटों की परीक्षा से अधिक तेजस्वी बनता है।

ऐसे ही परमेश्वर ने अपनी परीक्षा ली। सघ पर आए सकट को देखकर बहुत सारे लोग कहते थे कि 'सघवालों की ध्येयनिष्ठा, कार्यश्रद्धा टिक नहीं सकेगी। वह एक बुलबुला मात्र सिद्ध होगी।' हम लोग प्रतिदिन

ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर, हमें शील दे, धैर्य दे, सच्चरित्र दे। परमेश्वर ने भी ऐसा ही विचार किया होगा कि ये लोग जो माँग रहे हैं, वह देना चाहिए। परमेश्वर ने दिया, पर लेनेवाले की योग्यता ईश्वर को आँकनी थी। अन्यथा उदार दानकर्ता दान देता है, पर भिखारी के फटे हुए वस्त्र से वह गिर जाता है। इसलिए ईश्वर ने सघ की परीक्षा ली। फलनिष्पत्ति आपके सामने है, आपको अलग से बताने की आवश्यकता नहीं। जो होना था, सो हुआ, परतु उसपर गर्व से फूल जाने की आवश्यकता नहीं है। सघ के स्वयसेवकों ने जो आदोलन किया, उसमें सरकारी नियमों का उल्लघन नहीं किया और न ही सरकार का विरोध किया। विरोध करने का कारण भी नहीं था। सरकार हमारी है, हम उसका विरोध क्यों करें, उसका द्वेष क्यों करें?

यह सत्य है कि हमारे और सरकार के मतभेद हैं, पर मतभेद कहाँ नहीं होते? घर में भी मतभिन्नता रहती है। विभिन्नता में एकता का पोषण करना ही प्रजातत्र की कसौटी है। हम इस कसौटी पर खरे उतरे हैं, परतु सरकार का दृष्टिकोण अलग ही था। उसको सघ के आदोलन में कुछ अलग ही दिखा। अत उसे दबाने का प्रयत्न किया गया। आदोलन को दबाने के सरकारी दाँव-पेंच सुनने के बाद ऐसा लगा मानो हम बीसवीं शताब्दी में न रहते हुए दो-तीन सदियों पीछे चले गए हैं, सुल्तानशाही का युग फिर से आ गया है।

बीती ताहि बिसार दे

सघ-बदी शीघ्रातिशीघ्र समाप्त हो— ऐसी जिनकी भावना थी, उन लोगों ने अपने स्वास्थ्य, आयु की चिता न करते हुए जो दौड-धूप की, उसका सकारात्मक परिणाम हुआ। 'केसरी' के सपादक श्री गजाननराव केतकर ने केवल सघ की उपयुक्तता ध्यान में रखते हुए अपने स्वास्थ्य की उपेक्षा कर दिल्ली-नागपुर की अनेक बार यात्रा की। उसी प्रकार पचहत्तर वर्ष की आयु होते हुए भी चेन्नै के श्री वेंकटराम शास्त्री अखड दौड-धूप में व्यस्त रहे। वे कहते थे 'मनुष्य को आजन्म कर्तव्य करते रहना चाहिए, शरीर की क्या कीमत?' उनके ये शब्द सुनकर मेरा हृदय कितना व्यग्र होता था, इसकी आप कल्पना कर सकते हैं। प्रतिबध हटाने में जिन लोगों ने अथक प्रयत्न किए हम उनके प्रेम के योग्य पात्र सिद्ध हुए हैं। हमारी इतनी ही इच्छा है कि राष्ट्ररूपी पवित्र गगा सर्वांगपरिपूर्ण होकर अखड प्रवाहित होती रहे। इसका दायित्व हममें से प्रत्येक पर है। गत डेढ वर्ष में खंडित

हुए कार्य को फिर स्फूर्ति से प्रारभ करें, परतु यह करते हुए किसी के बारे में द्वेष-बुद्धि न रखें। यह कार्य करते समय अपना मन शुद्ध एव पवित्र रखें और गभीरता के साथ परतु तीव्र गति से, प्रतिबधकाल की कमी को दूर करें। प्रकृति पर विजय प्राप्त करना ही मनुष्य की श्रेष्ठता है। प्रकृति के नियमानुसार क्रोध आना स्वाभाविक है, परतु उसे न करने में ही हमारी श्रेष्ठता है। उच्चतम स्थिति प्राप्त करना ही मानवता है। कहा भी गया है– 'बीती ताहि विसार दे, आगे की सुधि ले'।

अखड हिंदू-समाज एक विराट शरीर है। यह चैतन्य का अखड प्रवाह है। हम उस पवित्र प्रवाह के एक बिदु मात्र हैं, ऐसी श्रद्धा रखें। एक ही शरीर के अवयव आपस में लडें, यह नहीं चलेगा। इसलिए राष्ट्र का जीवन सर्वांगपरिपूर्ण करके अखिल जगत् में भारत को सम्मान का स्थान प्राप्त करा देना हमारा ध्येय है।

सघकार्य का सकल्प

पूर्वजों द्वारा दी हुई सास्कृतिक जीवन की विरासत को हम ससार के समक्ष रखें। अभ्युदय और नि श्रेयस– दोनों दृष्टियों से विश्वशाति निर्माण के कार्य में हम जुटें। जिन लोगों ने सघ पर आज तक जो प्रेम किया है, उसे भविष्य में वैसा ही बनाए रखें। जिन लोगों ने सघ के लिए प्रयत्न किए, मैं उनका हार्दिक अभिनदन करता हूँ। जिन लोगों ने सघ का विरोध किया, हमें उनका भी अभिनदन करना चाहिए, क्योंकि उनके हम पर उपकार हैं। उन्होंने हमें बार-बार स्मरण कराया कि सघ अखिल हिंदू-समाज को एकता के सूत्र में बाँधनेवाला सगठन है। सचमुच, विरोधी लोगों ने सघ की स्मृति अखड जागृत रखी, इसलिए हमें उनका सम्मान करना ही चाहिए।

३ पुरस्कार की अपेक्षा नहीं

(पुणे के स्वयसेवकों के सम्मुख २५ जुलाई १९४९)

मैंने निश्चय किया था कि आज यहाँ कुछ भी नहीं बोलूँगा, परतु यहाँ आने के बाद बोलना पड रहा है। गत अनेक दिन हमने वनवास में बिताए हैं। अब यह अध्याय पूर्ण हो गया है। सघकार्य पुन प्रारभ हुआ है।

मेरे अतिरिक्त अन्य असख्य कार्यकर्ता स्थान-स्थान पर कार्य में जुटे है, यह अकारण नहीं है। भारत के निश्चित अभ्युदय हेतु सब कार्यकर्ता कार्यरत हैं।

दिसबर के आसपास १-२ मास सघ का आदोलन चला। उस समय अनेकों को कष्ट झेलने पड़े। लोगों को अलग-अलग प्रकार के कष्ट भोगने पड़े। यह आदोलन इतिहास की अत्यत अभूतपूर्व घटना है। लोगों की सर्वसाधारण अपेक्षा रहती है कि यदि हमने किसी के लिए कुछ आपदाएँ झेली हों, तो उसके फलस्वरूप कुछ न कुछ पारितोषिक मिलना ही चाहिए। यह स्वाभाविक व सहज प्रवृत्ति है, तथापि सघ-कार्यकर्ता किसी प्रकार के पुरस्कार की अपेक्षा नहीं रखते।

जो कष्ट उठाने के लिए तैयार हैं, उसे अलग से पारितोषिक अथवा अधिकार पद देने की अपनी प्रथा नहीं रही और हम नई प्रथा निर्माण करना नहीं चाहते। जो काम करता है, वह अपना कर्तव्य ही पूर्ण करता है, उसे कोई पारितोषिक देने की अपनी परपरा नहीं है।

वास्तव में जो त्यागी लोकसेवक होते हैं, उनके विषय में जनता के हृदय का आदर कभी कम नहीं होता। वह सतत बढता ही रहता है। मैंने कुछ कर दिखाया— ऐसा दर्प जिसको होता है, उसका अध पतन प्रारभ हुआ ऐसा समझना चाहिए। इस प्रवृत्ति के लोगों को कारावास में जाना पडा तो वे समझते हैं 'हमने बहुत बडा काम किया'। किसी भी काम में हाथ डालते समय प्रतिफल की अपेक्षा करना योग्य नहीं। कार्य करने के लिए कटिबद्ध होने पर अच्छी-बुरी परिस्थिति की हम परवाह नहीं करते। वैसी हमारी भावना ही नहीं होती। इस स्वय-स्वीकृत कार्य को हम अपने जीवन में कितना महत्त्व देते हैं, इस आधार पर हमारी परीक्षा होती है।

हमने एक बार कार्य करना प्रारभ किया तो बीच में विराम नहीं। मार्ग में आनेवाली विपदाओ को हम पुष्पमाला के समान स्वीकार करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने स्थान पर कर्तव्यपूर्ति में मग्न रहता है। अपने हृदय का शुद्ध भाव बनाये रखने के लिए हम सहजता से कष्ट उठाते हैं। न्यूनतम कष्ट उठाते हुए साध्य प्राप्त करने की हमारी परपरा नहीं है।

सातत्य ही अपने कार्य का स्वरूप है। कार्यक्रम सदा कार्य बढाने

के लिए ही होते हैं। इससे श्रद्धा व प्रेम नित्य वृद्धिगत होते रहते हैं। किसी भी प्रसग से हमारी एकता कम नहीं होगी। अपने कार्य की तीव्रता और गहराई का प्रत्यक्ष प्रमाण मैंने देखा है। पाँच-पाँच वर्ष सघस्थान पर अनुपस्थित रहनेवालों ने भी आदोलन में भाग लेकर कारावास स्वीकार किया।

ऐसे सहयोगी, जो कुछ समय पूर्व तक अपने साथ थे, पर किसी कारण से अब कार्य से विरक्त हो गए, वे आज किस दृष्टि से अपनी ओर देखते है, इसका एक उदाहरण आपको बताता हूँ। गत आदोलन का विषय लेकर एक गृहस्थ मेरे पास आए। आदोलन में छोटे-बडे सभी स्वयसेवकों ने घोर कष्ट सहन किए थे, उनका वर्णन करते हुए वे कहने लगे कि उस आदोलन में सहभागी न होने के कारण उन्हें सचमुच बहुत दु ख हुआ है।

जो एक बार सघकार्य के मडप के नीचे से गया, वह सघ से दूर नहीं जा सकता। दूर रहने पर भी वे लोग जीर्ण-शीर्ण नहीं होते। हृदयों को एक सूत्र में गूँथकर तैयार की गई मालिका हम सघकार्य द्वारा बनाते हैं। गुरुदक्षिणा में किसी ने केवल पुष्प समर्पित किया अथवा केवल प्रणाम किया, तो भी उस व्यक्ति की योग्यता अशमात्र कम नहीं मानी जाती। प्रत्येक व्यक्ति दक्षिणा जिस किसी स्वरूप में अर्पित करता है, वह उस समय अपना हृदय ही समर्पित करता है, ऐसा हम मानते हैं।

ऐसा कहते हैं कि समाज में कुछ अच्छे और कुछ बुरे लोग रहते हैं, परतु हम ऐसा मानते हैं कि वस्तुत कोई भी बुरा नहीं होता। प्रत्येक को प्रेमरज्जु से बाँधने और कर्तव्यबुद्धि से कार्य प्रवृत्त करने से सब गुणवान सिद्ध होते हैं। राष्ट्र का अत्युत्कृष्ट भवितव्य हमे प्राप्त करना है। उसके लिए व्यक्तियों की भावनाओं, स्वभाव और व्यवहार का सयमपूर्वक नियमन करना पडेगा।

राष्ट्रीय चारित्र्य सपन्न कोटि-कोटि बाधवों को हम एक माला में गूँथ रहे हैं। अपनी भूमिका केवल सघ की शक्ति बढाने की न होकर राष्ट्रशक्ति की वृद्धि करने की है। उच्च समपण वृत्ति से ही यह सभव है। हम राष्ट्र के लिए सर्वस्व समर्पण करने वाले आदश सेवक समाज के सामने प्रस्तुत करते हैं। हम इसकी चिता करते हैं कि समाज पुरुष के सभी अगों की तीव्र गति से पुष्टि कैसे होगी। इसका निरतर ध्यान रखे कि हम आदर्शयुक्त समाज की निर्मिति कर रहे हैं।

४ जगद्गुरु भारत

(सार्वजनिक कार्यक्रम उमरेड, २७ जुलाई १९४९)

आसमान में बादल आते हैं और चले जाते हैं। आते समय कोई दुःखी नहीं होता तथा जाने पर तालियाँ नही पीटता। बिल्कुल यही बात गत डेढ वर्ष में हुई घटनाओं के सदर्भ में कहनी पडेगी। इससे कुछ लोगों को दुःख हुआ होगा तो कुछ को सुख। परतु जिनमें उन घटनाओं को समझने की पात्रता होगी, उन्होंने उन्हें भुलाकर व योग्य सीख लेकर आगे आनेवाली कमियों को सँभालना होगा।

गत डेढ वर्ष में सघ पर हुए आघात यदि विदेशी सस्कृति के लोगों ने किए होते, तो उन्हें चौबीस वर्षो में सघ द्वारा प्राप्त की हुई शक्ति का पता लग जाता, उन्हें छठी का दूध याद आ जाता। पर जब कभी जीभ दाँतों तले आ जाती है, तब हम दाँतों को उखाडकर फेंक नहीं देते। इसलिए अपने ऊपर आघात करनेवाले अपने ही देशवासी बधु होने के कारण गत दुःखदायी घटनाओं को भुलाकर भावी मतभिन्नता को बढने न देना ही अभीष्ट है।

आज जगत् की दृष्टि से हमारी कोई कीमत नहीं है। हर छोटी-मोटी बात के लिए हमें अन्यान्य देशों की ओर देखना पडता है। भीख का कटोरा लेकर प्रत्येक देश के दरवाजों को खटखटाना पडता है।

केवल एक बात में सर्वश्रेष्ठता होने के कारण जगत् का हमारी ओर झुकाव है। वह, याने हमारी मानवहित विकासक आध्यात्मिक विचारधारा। इसी विचारधारा के कारण भूतकाल में हम विश्व के गुरुपद पर आसीन थे तथा मुझे विश्वास है कि भविष्य में भी हम यह गुरुपद अवश्य प्राप्त करेंगे। प्रश्न केवल आज की दुःखद स्थिति का है। यदि हम समस्त भारतवासी आपसी मतभेद भुलाकर एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में खडे रहें, तो इस स्थिति को समाप्त करने में अधिक समय नहीं लगेगा। पारस्परिक प्रेम की शक्ति के आधार पर ही समाज और देश की सुस्थिति निर्भर होती है। उसी से समस्त समस्याओं का समाधान होगा। सघ ने यही शिक्षा आज तक स्वयसेवकों को दी है और आगे भी देता रहेगा।

सघ के स्वयसेवकों ने देश की कठिन परिस्थिति को समझते हुए उचित सयम दिखाया और परिस्थिति के अनुरूप सदाचार का मार्ग

अपनाया। इसका मुझे अतीव आनद है। हम आपसी प्रेम की शक्ति से राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वलतम बनाएँगे और जगत् को अपने तेज से आकर्षित करेंगे।

ॐ ॐ ॐ

५ चरित्र का आदर्श चाहिए

(२८ जुलाई १९४६ नागपुर विद्यापीठ)

कारागृह से बाहर आने पर चारों ओर की परिस्थिति में हुए बदलाव के सदर्भ में मुझे पूछा गया कि अब कार्य की आवश्यकता है क्या? निस्सदेह हमें इस कार्य की आवश्यकता प्रतीत होती है। यदि आवश्यकता न होती तो एक-दो नहीं, हजारों युवकों को अनत कष्ट सहते हुए इस कार्य का प्रसार करने में अपने व्यक्तिगत सुखों व सारी कामनाओं को छोडकर कार्य-प्रसारार्थ प्रवृत्त क्यों किया होता? अनेकों का पारिवारिक जीवन छिन्न-विच्छिन्न हुआ। सभी प्रमुख कार्यकर्ता मानो फकीर बन गए हैं। कौपीन मात्र पहनकर बाहर निकल पडे, उन्हें असीम कष्ट सहन करने पड रहे हैं। उनमें अहोरात्र कार्य करने की लगन है और ध्येय का आकर्षण है। अत करण की सारी पवित्र भावनाएँ सँजोकर अपना जीवन अनाघ्रात पुष्प के समान राष्ट्रपुरुष के सम्मुख अर्पण करने की उनकी प्रवृत्ति है। क्या वह इस कार्य की महान योग्यता और आवश्यकता न जानते हुए कर रहे हैं। यह एक की पूँछ टूट गई है, इसलिए दूसरे की पूँछ तोडने जैसा मामला नहीं है।

आस्वादित, सासारिक जीवन द्वारा निचोडा हुआ उच्छिष्ट पुष्प राष्ट्रपुरुष को समर्पित करना कोई बडी बात नहीं। उसमें राष्ट्रपुरुष का सम्मान नहीं है। जिस जीवन का एक अश भी अन्यत्र व्यतीत न हुआ हो, ऐसा सपूर्ण शुद्ध, पवित्र, अभुक्त जीवनपुष्प राष्ट्रपुरुष के चरणों में समर्पित करें। तब यदि वह फूल सुदर न हो, उसमें सुगध न हो, कदाचित सूख गया हो तब भी चिता नहीं, परतु वह फूल अर्पण करें।

राष्ट्रीय चारित्र्य

मूल प्रश्न यह है कि राष्ट्रीय चरित्र की आवश्यकता क्यों प्रतीत होती है? क्यों इस कार्य को करना चाहिए? समय-समय पर राजनीतिक प्रश्न निर्माण होते हैं, पर उनका तात्कालिक समाधान होते ही वे भुला दिए

जाते हैं। परतु अपने सपूर्ण समाज का राष्ट्रीय चारित्र्य जागृत करना, उसे हमेशा बनाए रखना, यह अखड चलनेवाला जीवित कार्य है। अपना राष्ट्र जगत् के अत तक जीवित रहे— ऐसी हमारी इच्छा है। तब तक यह महत्त्वपूर्ण कार्य भी आवश्यक है। आज हमारे बडे-बडे नेता राष्ट्रीय चारित्र्य के लिए छटपटा रहे हैं। वे अपने सहकारियों की ओर देखते हैं, जनता की ओर देखते हैं, पर चरित्रहीनता देखकर उनका अत करण विदीर्ण होता है। अध पतन की ओर तीव्र गति से दौडने की प्रवृत्ति सर्वत्र दिखाई देती है। सुदृढ चरित्र के बल पर उन्नति करने की प्रवृत्ति कहीं दिखाई नहीं देती। लोग अपने स्वार्थ के लिए हर प्रकार का बुरा कर्म करने को तैयार हैं।

देश के सामने हजारों प्रकार की समस्याएँ हैं, इसमें सदेह नहीं। इन समस्याओं के निराकरण के प्रयत्न भी हो रहे हैं, परतु इन योजनाओं को कार्यान्वित करनेवाले स्वार्थ में लिप्त हैं। इस कारण योजनाएँ यशस्वी नहीं हो पातीं। लेकिन व्यक्तिगत जीवन का कोई महत्त्व नहीं। यदि व्यक्ति नष्ट हुआ तो भी चलेगा, परतु राष्ट्र सुखी और समृद्ध बने, यह राष्ट्रीय चारित्र्य की मूलभूत भावना है। दुर्दैव की बात यह है कि इसी भावना का अपने समाज में अभाव है।

इतिहास का साक्ष्य

राष्ट्रीय चारित्र्य की यह मूलभूत प्रवृत्ति हमारे समाज से गत हजार वर्ष से लुप्त-सी हो गई है। हम कह सकते हैं कि मेरा वही मानापमान, बडप्पन, सुख-दु ख तथा हिताहित राष्ट्रीय चारित्र्य है, जिसमें राष्ट्रहित को प्रमुखता रहे, परतु पृथ्वीराज चौहान से लेकर आज तक के इतिहास का अवलोकन करने पर दिखाई देता है कि स्वार्थ प्रबल रहा, राष्ट्रहित का विचार नहीं किया गया। अप्रामाणिकता और राष्ट्रद्रोह करने में बडे-बडे लोगों को भी लज्जा नहीं आई। राष्ट्र की अधोगति हुई। इतिहास का समालोचन करने पर ध्यान में आएगा कि राष्ट्रीय चारित्र्य का विकास होने पर राष्ट्र वैभवशाली बनता है और राष्ट्रीय चारित्र्य नष्ट होने पर राष्ट्र अध पतन की ओर बढता है।

व्यक्तिगत चारित्र्य और राष्ट्रीय चारित्र्य

प्राय व्यक्तिगत चारित्र्य और राष्ट्रीय चारित्र्य में भ्राति होती है। सत्य बोलना और कथनी व करनी में समानता के व्यक्तिगत सद्गुणों मात्र

से राष्ट्रीय चारित्र्य नहीं बनता। शिवाजी महाराज की महानता का वर्णन करते हुए बहुधा कल्याण के सूबेदार की बहू से शिवाजी द्वारा किए हुए आदरयुक्त व्यवहार के प्रसग का उल्लेख किया जाता है। परतु शिवाजी का 'शिवाजीत्व', अर्थात् उनकी महानता केवल इस बात में ही नहीं है। जिनको हिदू-सस्कृति का थोडा-बहुत ज्ञान है, उन सस्कारों में जिनका पालनपोषण हुआ है, उनके लिए परस्त्री माता के समान होती है। वह शायद सुशिक्षित नहीं होगा, पर इस दृष्टि से विचार किया तो एक साधारण मजदूर भी शिवाजी ही सिद्ध होगा।

केवल व्यक्तिगत चारित्र्य का वर्णन करना भ्रम उत्पन्न करने जैसा है। अपना जीवनसर्वस्व राष्ट्र के लिए अर्पण करने की सिद्धता राष्ट्रीय चारित्र्य का निचोड है। रुपया अगर बाजार में चलाना है तो उसके दोनों पक्ष ठीक चाहिए। राष्ट्र गौरव की वृद्धि के लिए व्यक्तिगत चारित्र्य और राष्ट्रीय चारित्र्य– दोनों की आवश्यकता है।

समाज की स्नेहमयी एकसूत्रता के साक्षात्कार के आधार पर व्यक्ति को अपने जीवन की योजना करनी चाहिए तभी उस राष्ट्र को जगत् में गौरव प्राप्त होगा। उसने अपनी परपरागत सस्कृतिरूप आत्मा की आवाज को सुनना चाहिए। किंतु यह सब राष्ट्रीय चारित्र्य पर निर्भर करता है। अत इस कार्य की सशयातीत आवश्यकता है।

स्वय चरित्र का आदर्श उपस्थित करे

कुछ लोगों का कहना है कि हम समाज में क्या बोलते हैं, कैसा व्यवहार करते हैं– केवल इसपर ध्यान दो। हमारे व्यक्तिगत जीवन से आपको क्या लेना-देना? परतु यह तर्क योग्य नहीं है। वास्तव में उनका व्यक्तिगत जीवन स्वार्थ से भरा होता है। आज बडी-बडी सस्थाओं में भी चरित्रहीनता की बाढ आ गई है। शुद्ध अत करण से सिर ऊँचा कर जनता के सम्मुख खडे रहने का नैतिक साहस नहीं है। आज इतनी भयकर अवस्था है कि इतना मात्र कहने पर 'कम से कम आपने तो चारित्र्यसपन्न रहना चाहिए', एडी से चोटी तक क्रोधाग्नि की ज्वाला भडक उठती है। इसलिए अदर एक और बाहर एक का भेद न करते हुए घर, बाहर, पडोस या समाज के एक घटक– इस भूमिका से व्यवहार करते समय अतर्बाह्य शुद्ध चारित्र्य, राष्ट्र के लिए सर्वस्वार्पण की सिद्धता और प्रेरणा के आदर्श उपस्थित करने की आवश्यकता है।

आज के अन्य हजारों प्रश्नों की अपेक्षा यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। भारतीय समाज के सभी स्तरों पर राष्ट्रीय-चारित्र्य की इस पवित्र गगा को प्रवाहित करने वाले कठिन, परतु श्रेष्ठ कार्य को करने की आवश्यकता है। परतु अज्ञानी और स्वय का हित-अहित न समझनेवाली ऐसी कोटिश जनता के सम्मुख उसके उत्कर्ष के लिए कौन-सा आदर्श रखेंगे? पावित्र्य, ध्येयवाद और राष्ट्रजीवन के लिए परम आवश्यक राष्ट्रीय चारित्र्य की ज्योति उन तक कौन पहुँचा रहा है? सात लाख गाँव हैं। प्रत्येक गाँव में सर्वांगीण चारित्र्य से आदर्शभूत ऐसा एक-एक व्यक्ति जाकर बैठे तथा यह ज्योति जलाए, ऐसी अवस्था आनी चाहिए। आप सुशिक्षित हैं, आपके पास समाज का नेतृत्व है, समाज में आपका शीर्ष स्थान है, इसलिए यहीं से दीन, दु खी, समाज की ओर महान आदर्श की गगा प्रवाहित होने दें। प्रथमत आपके द्वारा चारित्र्य की प्रेरणा और प्रकाश मिलना चाहिए।

सर्वसामान्य की भौतिक उन्नति

सुशिक्षित, बुद्धिमान और समाज का नेतृत्व करनेवाले वर्ग को स्वत के भौतिक उत्कर्ष की चिता छोड देनी चाहिए। किसान और श्रमिकों का उसमें पहला हिस्सा होता है। पुरातनकाल में समाज का मार्गदर्शन करनेवाले, ज्ञानदान करनेवाले लोग विशुद्ध चरित्र की साक्षात् मूर्ति हुआ करते थे। परिवार नहीं, घर-द्वार नहीं, केवल भिक्षा माँगकर, फल-मूल खाकर अथवा कटाई के बाद के खेतों में गिरे हुए अन्न-कणों को बीनकर वे अपना निर्वाह करते थे। स्वार्थ में कण मात्र भी लिप्त नहीं होते थे। केवल पावित्र्य, श्रेष्ठता, समाजहित बुद्धि, उनके आदर्श रहते थे। भौतिक उत्कर्ष की चाह का विचार भी उन्हें स्पर्श नहीं करता था। उनका प्रयास तो यही रहता था कि समाज के अन्य घटकों की सुसपन्नता कैसे रहेगी। समाज राष्ट्र-शरीर का एक बडा हिस्सा होता है। शरीर में मस्तक तो छोटा ही रहता है, परतु वहाँ विचार रहते हैं।

यह योग्य ही है कि समाज का श्रेष्ठ, ज्ञानसपन्न, सुशिक्षित और नेतृत्व करनेवाला वर्ग बहुसख्य समाज की चिता करे। विचार करना और जीवन उदात्त करनेवाले आध्यात्मिक आदर्शो का प्रवाह समाज के सभी स्तरों में पहुँचाना है। उसी प्रकार भौतिक सपन्नता का प्रवाह बहुजन समाज में बहते रहना चाहिए। ये दोनों प्रवाह एकरूप होकर बहने लगेंगे, तभी राष्ट्र का अभ्युदय और नि श्रेयस की दृष्टि से श्रेष्ठता और उत्तम अवस्था प्राप्त होगी।

सघ चरित्र का सर्वोत्तम कारखाना

सघ में चारित्र्य के किताबी पाठ नहीं दिए जाते। यहाँ तो प्रत्यक्ष सजीव आदर्श हैं। चैतन्य युक्त, राष्ट्रार्थ सर्वस्व का त्याग करनेवाली, सारी शक्ति लगाकर समाज की सेवा करनेवाली यह एक महान योजना है। यह एक कारखाना है। मैं आज एक विश्वविद्यालय में खडा हूँ। विश्वविद्यालय केवल ज्ञान देता है। जो ज्ञान चारित्र्य नहीं देता, वह कचरे की टोकरी में फेंकने के लायक है। स्वार्थ को तुच्छ समझकर राष्ट्र के लिए सर्वस्वार्पण करने की प्रवृत्ति जिस ज्ञान से उत्पन्न नहीं होती, वह ज्ञान देनेवाली शिक्षण-प्रणाली व्यर्थ है। आज परिस्थिति कठिन है, परतु निराशाजनक नहीं है। आज शिक्षा ग्रहण करनेवाले छात्र कल समाज में काम करेंगे। केवल शब्दों से नहीं, तो अपनी नि स्वार्थ सेवा द्वारा राष्ट्रीय चारित्र्य के प्रत्यक्ष आदर्श समाज में खडे करेंगे, इस एक अपेक्षा से ही मैं अपने विचार आपके सम्मुख प्रगट कर रहा हूँ।

राष्ट्र की आत्मा सस्कृति

एक अन्य विचार आपके सम्मुख रख रहा हूँ। अपने इस प्राचीन देश की एक सस्कृति है, जिसकी बडे-बडे विद्वान तत्वज्ञानियों ने मीमासा की है। यह परपरागत सस्कृति अपने राष्ट्र की आत्मा है, हजारों वर्षों के इतिहास का वह एक सूत्र है। उसके आधार पर ही अनेकों भीषण सकट आने पर भी यह राष्ट्र जीवित रहा है।

जगत् में बडे-बडे समाजों का उदय हुआ और वे अस्तगत भी हो गए। उनके बारे में 'वे थे', ऐसा भूतकाल वाचक सबोधन करते हैं। ग्रीस, रोम, पर्शिया के बडे-बडे सुसस्कृत समझे जानेवाले समाज लुप्त हो गए, परतु हिंदू-समाज अभी भी जीवित है। इस समाज के सदर्भ में हम वर्तमानकाल वाचक शब्द 'है' का उपयोग कर सकते हैं। इसका कारण है *हमारी सस्कृतिरूपी अमर आत्मा। आप सबकी इच्छा होगी तो— प्रलयकाल तक हिंदू-समाज के लिए 'वर्तमानकाल वाचक' शब्द का प्रयोग कर सकते हैं।*

जगत् के अन्य राष्ट्रों के पास आधिभौतिक सपन्नता है, परतु हम भौतिक विषयों में सर्वथा परावलबी और दीन हैं। हमारे पास अन्न, वस्त्र आवश्यकता के प्रमाण में नहीं है। मशीनरी, औद्योगिक प्रगति आदि की तीव्र कमी है। भौतिक सुख जनता को मिलता नहीं, अवर्णनीय ऐसा महाभयकर दैन्य सर्वत्र फैला हुआ है। यदि जगत् में लोग हमारी स्तुति

करते हैं, तो केवल अपने स्वार्थ के लिए ही। कहा जाता है कि ३०-३२ करोड़ के अपने समाज में हाथ की उँगलियों पर गिनने लायक योग्य व्यक्ति हैं। क्या इनको छोड़कर बाकी सब लोग नगण्य ही हैं? जो लोग स्वयं के संदर्भ में ऐसी भावना व्यक्त करते हैं, उनका इस प्रकार कहना अयोग्यता की परिसीमा ही है। सही मायने में कोई भी 'अपरिहार्य' नहीं है, पर दुर्भाग्य से सामर्थ्य, आत्मविश्वास और धैर्य का लोप हो जाने के कारण एक प्रकार की अंधकारमय अवस्था प्राप्त हुई है।

आज अपने पास भौतिक क्षेत्र में गौरव से सिर ऊँचा करने लायक कुछ भी नहीं है। हर बात में विदेशी मदद माँगनी पड रही है। हमें सिखाइए- ऐसी प्रार्थना करनी पड रही है। शायद हजार वर्षों की गुलामी के कारण ऐसी स्थिति आई होगी। परंतु जगत् में गौरव से अपना मस्तक ऊँचा रखते बने- ऐसी जीवित, आत्मसमर्पण से अक्षुण्ण रक्षित, अटल तत्त्वज्ञान के नींव पर खडी अपनी संस्कृति, हमारे पास है। इस संस्कृति का बलिदान करके कोई भी चीज प्राप्त करने का प्रयत्न राष्ट्र की आहुति देने के समान है। ठंड लगती है, इसलिए कोई पहने हुए वस्त्र को जलाकर उष्णता प्राप्त नहीं करता। अपने समाज-जीवन की आत्मा व नींव अपनी संस्कृति ही है। उसको नष्ट करना आत्महत्या करने जैसा होगा।

हम क्या दे सकते हैं?

संसार में लेन-देन का व्यवहार अखंड चलता रहता है। संसार से हमने भौतिक संपन्नता माँगी तो संसार को हम क्या देंगे? संसार को भौतिक संपन्नता के बदले में उसे 'मनुष्य' बनानेवाली संस्कृति हमारे पास है। हम कह सकते हैं कि आप अब तक मानव जाति की सभ्यता के अत्युत्तम उदाहरण थे। अब हम अपनी संस्कृति का भंडार खोलकर सही मायने में आपको मनुष्य बना देंगे। यही एक व्यवहार संभव है। इसलिए यदि संसार में पूर्ण दिवालिया बनकर खडा न होना हो तो श्रेष्ठ राष्ट्रीय चारित्र्य के आधार पर अपना जीवन तेजस्वी बनाना पडेगा। सारी आधुनिक भौतिक प्रगति आत्मसात करके भी भारतीय संस्कृति का अमृतस्नान संसार को कराते हुए, पशुत्व से मानवता और मानवता से देवत्व की ओर ले जानेवाले अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति करानेवाली शांतिपूर्ण मानवता इस संसार में निर्माण करनी पडेगी, यह अंतिम श्रद्धा ही संघकार्य की विशेषता है।

चारित्र्य और सस्कृति राष्ट्रोन्नति के दो पहिये हैं। उनका सरक्षण और सम्मान करके आधिभौतिक सुख-साधन आत्मसात करके, भारतीय जनसमूह को एक सूत्र में गूँथकर भासमान बाहरी छिन्न-विच्छिन्नता नष्ट करके एकरूप, एकरस और महाशक्तिशाली समाज-जीवन उत्पन्न करना है। वही सारे ससार को सुख-सजीवन देगा। विश्वशाति का पाठ देनेवाली पवित्र भारतीय भावगगा सपूर्ण विश्व में बहेगी। आज के सुशिक्षित विश्वविद्यालयीन विद्यार्थी कल के श्रेष्ठ पुरुष हैं, समाज के भावी नेता हैं। अत इसी भावना से वे कार्य करें– ऐसी अपेक्षा व इच्छा है। चारित्र्यसपन्न होकर, भारतीय सस्कृति का आदर करते हुए वे आगे कदम बढाएँ।

सभी सुबुद्ध विद्यार्थियों के अत करण की ये भावनाएँ मेरे माध्यम से आपने व्यक्त की हैं– ऐसा मैं समझता हूँ, क्योंकि आपने मेरा नहीं, कार्य का सम्मान किया है। इसलिए इन दोनों पहियों की ओर ध्यान देकर, इनपर विश्वास और श्रद्धा रखकर एकसूत्र समाज खडा करने के इस कार्य की ओर आप आत्मीयता से देखेंगे और विश्वशाति की उदात्त प्रेरणा से भारत को विश्व के आध्यात्मिक गुरु की भूमिका में फिर से एक बार खडा करने का कार्य तीव्र गति से पूर्ण करेंगे, यही सुशिक्षित वर्ग से अपेक्षा है।

६ मै व्यक्ति नहीं, सघ का प्रतिनिधि था

(२९ जुलाई १९४९ नागपुर सार्वजनिक समारोह)

लोग यह कहते हैं कि 'अन्य लोगों के सुझावों के लिए सघ ने अपने हृदय के द्वार बद कर लिए हैं', परतु मेरा अनुभव ऐसा नहीं है। कुछ विषयों के सदर्भ में सघ की विचारधारा भिन्न हो सकती है, परतु सघप्रेमी जनों के सुझावों का योग्य विचार करते हुए भारत की सर्वांगीण उन्नति करने की हमारी इच्छा है। इसके लिए उनके अमूल्य सुझावों का जितना सभव होगा, उपयोग अवश्य करेंगे। ऐसा नहीं है कि भारत की उन्नति का केवल एक ही मार्ग है और न हमारा यह आग्रह है कि केवल उसी मार्ग का उपयोग करना चाहिए। मैं इस अभिमान से कोसों दूर हूँ कि 'मैं सर्वज्ञ हूँ । इसलिए मैं सभी सुझावों का अत्यत हर्ष से स्वागत करता हूँ और करता रहूँगा। हम सघ-समर्थकों के ही नहीं, अपितु सघ-विरोधियों के

सुझावों का भी अवश्यमेव विचार करेंगे। संघ-विरोधी छिद्रान्वेषी दृष्टि से सघ को देखते हैं, इसलिए मेरा मानना है कि वे एक प्रकार से सघ की सेवा ही करते हैं। श्री मणि जी के कथनानुसार, विरोधियों ने सघ पर प्रतिबध लगवाकर बहुत बडा उपकार किया है। उनके इस उपकार के लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। कोई ऐसी गलत धारणा न बनाए कि मेरा यह कथन उनका उपहास करने के लिए है। मैं सचमुच निर्मल हृदय व प्रामाणिकता से कह रहा हूँ।

सरकार को लिखित आश्वासन देने के बारे में मेरी इच्छा मौन धारण करने की थी। सरकारी विज्ञप्ति उसकी दृष्टि से लाभदायक है, परतु मैं निश्चयपूर्वक आपसे कहता हूँ कि उस समय मैं 'गोलवलकर' एक व्यक्ति के नाते से नहीं, अपितु एक राष्ट्रव्यापी विशाल सगठन के प्रतिनिधि के रूप में बोल रहा था। जिस सगठन की ओर से मैं बोल रहा था, उसका अपमान होने के पूर्व मैं प्राण त्याग देता, पर उस सगठन का अपमान न होने देता। मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैंने किसी भी प्रकार की स्वीकृति या आश्वासन नहीं दिया है। इस विषय में मुझे इतना ही स्पष्टीकरण देना है कि समझौता करने का अर्थ होता है कि दोनों पक्ष एक-एक कदम पीछे लें। उस दृष्टि से श्रद्धेय शास्त्री जी (श्री टी आर वी शास्त्री) की सूचनानुसार जो सघकार्य में पहले से चलता आ रहा था, उसे लिपिबद्ध करने की अनुमति मैंने दी। श्री शास्त्री जी मेरे पिताजी से एक वर्ष बडे हैं। उनकी प्रतिष्ठा एव ज्ञान का सम्मान करने की भूमिका से मैंने यह अनुमति दी थी, पर समझौते की बातचीत असफल हो गई। यह सुनकर मुझे जितना आनद हुआ, उतना ही आनद प्रतिबध दूर होने पर हुआ। प्रतिबध अपने-आप कैसे हटा, इसमें मैं अधिक कुछ नहीं कह सकता। अपने आप ही दरवाजे खुल गए। जिस सघ पर आप इतना प्रेम करते हैं और जिसकी ओर आशा भरी दृष्टि से देखते है, उस सघ का अपमान होगा– ऐसा एक भी शब्द मेरे मुख से अथवा लेखनी से व्यक्त नहीं हुआ। सरकार ने बदी हटाई, इसलिए मैं उसे धन्यवाद देता हूँ।

ॐ ॐ ॐ

७ न कटुता, न क्रोध

(२१ अगस्त १९४९ दिल्ली)

परमात्मा की कृपा से मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि मैं आप सबका दर्शन कर रहा हूँ। वैसे तो गत अक्तूबर में दिल्ली आया था, किंतु उस समय परिस्थितियों के कारण, जिनका आपको ज्ञान है, किसी भी प्रकार का कार्यक्रम करना और अपने हिंदू-समाज के बधुओं से मिलना सभव नहीं था। इसके बाद ईश्वर की कृपा से कारावास में विश्राम करके और उसी की अनुकपा से मुक्त होकर आज आपके सम्मुख उपस्थित हूँ।

कटुता को भुला दो

डेढ वर्ष का कालखड भिन्न-भिन्न अनुभवों से भरा हुआ है। उसमें कई आह्लादकारक तथा कई दु खकारक हैं। मनुष्य का स्वभाव है कि वह दु ख-दर्द को शीघ्र नहीं भूलता। फिर भी नागपुर में सघकार्य के पुनरारभ के समय मैंने कहा था कि जो कुछ हुआ वह हो गया, अब उसे याद करने से क्या लाभ? यदि याद ही करना है तो सुखकारक बातों को याद करें, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य सदा सुख पाने का ही प्रयत्न करता है। दु खद स्मृतियाँ रखकर अपना दु ख बढाने में क्या लाभ? जिन्होंने बुरा-भला किया, वे कहीं बाहर से नहीं आए। यदि किसी ने विपरीत कहा, विरोध किया, सज्जनता को शोभा न देनेवाली भाषा बोली, तब भी वे हमारे ही हैं। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के भारतीयत्व के पुनरुज्जीवन के मार्ग में बाधाएँ आईं, वे भी अपने लोगों से ही। फिर रोष किससे किया जाए? राष्ट्रजीवन को छिन्न-विच्छिन्न करने वाले चाहे जितनी बार क्रोध करें, किंतु जिसने इस विराट राष्ट्रपुरुष का साक्षात्कार किया है, वह क्रोध धारण नहीं कर सकता।

चारित्र्य आवश्यक

मैंने 'सर्वांगीण उन्नति' शब्द का प्रयोग जानबूझ कर ही किया है। आज पथ व धर्म का गलत अर्थ लगाने, धर्म व समाज व्यवस्था को ठीक से न समझने, और आधुनिक दृष्टि से जीवन की ओर देखने के कारण उत्पन्न राजनीतिक एव आर्थिक पक्षाभिनिवेश से छिन्न-विच्छिन्न समाज का जीवन हमारे सामने है। ऐसा विशृखलित समाज उन्नति नहीं कर सकता। हमारी इच्छा हो सकती है कि हम दुनिया के गुरु बनें। यह हिंदू-परपरा के अनुरूप भी है। किंतु इच्छामात्र से क्या होता है? अग्रेजी की कहावत है—

If wishes were horses, beggars would ride राष्ट्र की उन्नति 'कागज', 'शब्द' अथवा 'सदिच्छा' के आधार पर नहीं हो सकती। कुछ लोग द्रव्य को कार्य का आधार मानते हैं। ऐसे ही एक सज्जन ने कई वर्ष पूर्व मुझसे कहा कि 'यदि आप कार्य करना चाहते हैं, तो रुपया इकट्ठा कीजिए, क्योंकि हर कार्य को Three M s अर्थात् Man Money and Munitions चाहिए।' मैंने उन्हें उत्तर दिया कि 'संघ के सात्विक एवं सांस्कृतिक कार्य में Munitions का कोई स्थान नहीं है। यदि कोई आवश्यक समझता है, तो वह बुद्धिशून्य है। अब बाकी रहा Man और Money इनमें से हमने पहला लिया है, क्योंकि पैसा तो जड वस्तु है। मनुष्य रहने पर पैसा अपने-आप खिंचा चला आएगा। मनुष्य का मतलब अपने स्वार्थ में लीन तथा सुखोपभोग की चिंता करनेवाला दो पैर का पशु नहीं है। यह तो परमात्मा की आध्यात्मिक शक्ति को प्रगट करनेवाला, भौतिक जीवन में ब्रह्म के साक्षात्कार के उच्च आदर्श को प्राप्त करनेवाला शिव का रूप ही है। ऐसे मनुष्य हों, तब काम होगा।

उपस्थित समस्याएँ व्यक्ति के बढ़े हुए स्वार्थ के कारण ही उत्पन्न हुई हैं, क्योंकि वह न तो अपने पडोसियों की चिंता करता है और न राष्ट्र के हानि या लाभ की। भारत के निर्यात-व्यवसायियों ने घटिया माल देकर किस प्रकार अंतर्राष्ट्रीय जगत् में हिंदुस्थान की साख, उसके व्यापार और सम्मान को धक्का पहुँचाया है, इसका समाचार आप लोगों ने अखबारों में पढ़ा ही होगा। अंतर्राष्ट्रीय जीवन में राष्ट्र के गौरव के इस प्रकार के पतन का कारण चारित्र्य का अभाव ही है।

भारतीयत्व का साक्षात्कार

अनेक नेता चारित्र्य के अभाव का अनुभव करते हैं। वे भ्रष्टाचार को दूर करने की सलाह देते हैं, पर इसको दूर कहाँ से किया जाए? इसकी जड पर ही प्रहार करना होगा। जब तक प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव नहीं करता कि भारतवर्ष मेरा है इसकी जीवनधारा से पला हुआ समाज और मैं एक हूँ, तब तक वह समाज के सुख-दुःख की चिंता नहीं कर सकता। आज तो लोगों को समाज के सुख-दुःख का ज्ञान नहीं, उसको जानने की इच्छा नहीं और न दूर करने की ताकत है। इस स्नेहशून्यता को दूर कर हल निकालना पडेगा। समस्याएँ हैं इतना कहने भर से काम नहीं चलेगा। यह दुर्भाग्य का विषय है कि ३०-३५ करोड के भारत में यह कहना पड़े कि आदमी नहीं हैं। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने समस्याओं के इस मूल

कारण को आज से २४ वर्ष पहले अनुभव किया ओर उसको दूर करने के लिए निरतर प्रयत्न करता रहा।

राष्ट्रकार्य की इस नींव को समझकर भारत के करोडों बाधवों में यह राष्ट्रीय भावना ओर राष्ट्रीय चरित्र निर्माण करने का कार्य राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ करता है। 'राष्ट्रीय चारित्र्य' का अर्थ है कि मेरे अदर यह भाव हो कि मैं मरकर भी भारत की प्रतिष्ठा को कम नहीं होने दूँगा। इसमें पक्षाभिनिवेश को कोई स्थान नहीं। पक्ष राष्ट्र से बडा नहीं है। व्यक्ति के मान-सम्मान के लिए कोई स्थान नहीं है, क्योंकि व्यक्ति राष्ट्र का एक छोटा सा घटक है। यहाँ तो एक ही भावना हो, वही एक शील हो कि मैं राष्ट्र की सेवा करूँगा। व्यक्ति या पक्ष के लिए कार्य करना राष्ट्रीय चारित्र्य का द्योतक नहीं है। अपने अत करण की विशालता का ज्ञान करके हम यह निश्चय करें कि देश में एक भी भूखा, निर्वस्त्र अथवा निर्वासित नहीं रहेगा। प्रत्येक सुखी, सपन्न व शिक्षित हो, यही राष्ट्रीय चारित्र्य का अर्थ है।

विरोध से लाभ

आज का यह कार्य भी तो समाज के प्रेम और विरोध दोनों ही के कारण है। विरोधकों ने भी इस कार्य की सेवा की है। उन्होंने अनेकों आक्षेप प्रकट करके हमारे स्वयसेवकों को विचार करने का अवसर दिया। दूसरे, जब हम पर आपत्ति आई और ऐसा वातावरण उत्पन्न हो गया कि स्वतत्र होने पर भी निर्भयतापूर्वक लोगों को सघ के पक्ष में अपने विचार व्यक्त करने की स्वतत्रता नहीं रही, तब लोग कहने लगे कि अब सघ मिट जाएगा। मैंने भी सोचा कि २२ वर्ष की तपस्या और इस सघ के सस्थापक परम पूजनीय डाक्टर साहब, जिन्हें मैं महामानव समझता हूँ, ने जिस पौधे को अपना जीवन देकर बढाया, क्या उसका नाश मेरे ही हाथों से होगा? और लोग सघ का नाम भी भूल जाएँगे? उस समय विरोधियों ने ही दौडकर हमारी सहायता की। उन्होंने विरोध करके जनता को सघ को भूलने नहीं दिया। अत वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं।

अनेक प्रकार की बातों से सहानुभूति का स्रोत लेकर देश के कोने-कोने में फैले हुए हमारे अनेक सहायकों का तो मैं किन शब्दों में आभार मानूँ? सघ के ऊपर सकट आने पर जब उन्होंने देखा कि अब राष्ट्रीय चरित्र निर्माण करनेवाला कोई नहीं, भारत की आत्मा को जगानेवाला कोई नहीं, तब वे सघकार्य की सहायता करने हेतु आगे आए। उनकी कृपा,

प्रेम और परिश्रम से आज की स्थिति पैदा हुई है कि सघ शुद्ध सास्कृतिक दृष्टिकोण से राष्ट्र की सेवा करने के लिए पुन उद्यत है। उनके उपकार सघ पर ही नहीं, सपूर्ण भारतवर्ष पर हैं। उन्होंने राष्ट्र की डूबती नौका को बचाया है।

उनकी इच्छा और भावनाओं के अनुरूप हम सास्कृतिक दृष्टि से सपूर्ण समस्याओं को देखते हुए मनुष्य-निर्माण के कार्य को लेकर भारतवर्ष की उन्नति में अग्रसर होंगे, एक सुसगठित राष्ट्र की शक्ति निर्माण करेंगे। मेरी अन्य लोगों से भी प्रार्थना है कि वे शुद्ध राष्ट्रीय दृष्टिकोण को अपनाएँ तथा अपने प्रेम को सक्रिय रूप दें।

ॐ ॐ ॐ

८ प्रातीय बैठक, दिल्ली

(दिनाक २२ अगस्त १९४९)

डेढ वर्ष के बीते समय में हममें से कुछ को कष्ट हुआ होगा। इस अवधि में इस प्रकार काय के नाते मिलने का अवसर नहीं आया। इस समय हम भूतकाल पर दृष्टिक्षेप कर उस समय होनेवाली घटनाओं और अवस्था का अवलोकन करेंगे तो स्पष्ट होगा कि उस समय अपना कार्य प्रगति के पथ पर चल पडा था। कार्यवृद्धि का अनुभव भी होने लगा था। एकाएक घटनाक्रम ऐसा घटा कि अपने कार्य के बढते हुए पौधे पर बिजली-सी गिर पडी। उस दुर्भाग्यपूर्ण घटना से सघ के बाहर के कुछ लोगों को प्रसन्नता भी हुई होगी। अपने इस पवित्र कार्य को दिन-प्रतिदिन वृद्धिगत होते देख हृदय में अप्रसन्नता धारण करनेवाली प्रवृत्ति दुर्भाग्य से इस देश के कई लोगों में थी। उसने अपना कार्य किया।

अब १८ मास के पश्चात् उस विपरीत परिस्थिति का परिणाम सामान्य-सा ही शेष रहा है। उस भयानक परिस्थिति में से हम अधिक अच्छे होकर निकले हैं, क्योंकि डेढ वर्ष के इस कालखड में, जबकि चारों ओर अधकार, भय और पागलपन व्याप्त था थे कि सघ तो नष्ट हो गया है। फिर भी न तो अपनी शक्ति कार्य के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न हुई और न ही, अद्भुत और अप्रतिम दृढता, मिला।

जैसे-तैसे क्षमा प्राप्त कर जेल से मुक्त होने का प्रयत्न भी देखने में नहीं आया। इसके विपरीत सभी ओर असामान्य धैर्य की प्रवृत्ति दिखाई दी। और दिखाई दिया अपने कार्य तथा ध्येय के लिए दृढता एव विश्वास। कार्य में इस अडिग विश्वास के फलस्वरूप ही प्रतिबध हट कर, वह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति बदली और आज का वातावरण निर्माण हुआ है। समझौते की बातों से न प्रतिबध हट सकता था और न ही समझौते में अपना विश्वास अथवा विचार था।

अपने कार्य की शुद्धता और श्रेष्ठता का विश्वास– यही एकमात्र महान सामर्थ्य है, जिसके बल पर सब कुछ हो सका। उसकी अजेयता का अनुभव आया। साथ ही यह देखने में आया कि बाहर के लोगों में अपने कार्य के लिए कितना सद्भाव अथवा असद्भाव है। हमारे देश की जनता कितनी विवेकहीन और भयभीत हो सकती है तथा शुद्ध सास्कृतिक अधिष्ठान पर रचे गए सगठन की जड में कितनी दृढता हो सकती है, इसका भी अनुभव आया। अपने देश के प्रत्येक व्यक्ति में इस प्रकार की ध्येयप्रबल दृढता उत्पन्न करने का प्रयत्न कितना करना है, यह भी ध्यान में आया।

कर्तव्यात्मक बुद्धि

मैं दो बार जेल हो आया हूँ, ऐसा कहनेवाले कितने ही लोग निर्माण हो गए हैं, किंतु जेल गया था– इसलिए कुछ निराला बन गया हूँ और अब मुझे कुछ विशेष पद अथवा सम्मान मिलना चाहिए, ऐसी भावना रखना गलत होगा। यह सारे कष्ट मैंने किसी पर उपकार करने के लिए सहन नहीं किए थे। अपने जीवन से प्रिय कार्य पर आई बाधा को हटाने के लिए मैंने जो कुछ किया, वह कर्तव्यपालन के लिए था। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भावना मन में नहीं आनी चाहिए। अपने इस शुद्ध सात्विक कार्य की आवश्यकता का हमें विश्वास था और विश्वास था अपनी दृढता तथा पवित्रता पर कि हम इस कार्य पर लगी बाधा को हटाने के लिए आगे बढेंगे। अतत बाधा को हटा भी दिया, किंतु अपने इस कार्य में बाधा आना कोई असाधारण बात नहीं है। हमने अपने काय की आवश्यकता और उसके पुनरुज्जीवन करने के लिए त्याग बलिदान हेतु आह्वान करनेवाले कितने ही भाषण सुने होंगे। मैं तो अपनी नित्य प्रति स्मरण की जानेवाली प्रार्थना की उस पक्ति का निर्देश करूँगा, जिसमें कहा गया है 'श्रुत चैव

यत्कटकाकीर्णमार्गं, स्वय स्वीकृत न सुग कारयेत्'– यह हम भली-भाँति जानते हैं कि मार्ग कटकाकीर्ण है, बाधाओं और कठिनाइयों से पूर्ण है, किंतु परमात्मा से प्रार्थना करके इस कटकाकीर्ण मार्ग को सुगम बनाने के लिए हम आगे बढते जाएँगे। हमारे माग में सब सुख ही सुख है और हम आराम से आगे बढते रहेंगे, हमने ऐसा तो कभी कहा नहीं और न कभी सोचना ही चाहिए। रास्ता कठिन है– यह न भूलते हुए तथा कठिनाई से टक्कर लेते हुए उसको पार करके आगे बढेंगे और इस प्रकार अपने कर्तव्यपालन में एकाध बार कुछ त्याग करने अथवा कष्ट सहन करने का अवसर आया तो अपने हाथ से अपनी पीठ ठोकने की प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिए। यही सोचना चाहिए कि यह स्वाभाविक कर्तव्यपालन था। अपनी तसवीर खिचवाने अथवा छपवाने की भावना को हृदय में कोई स्थान नहीं होना चाहिए। कर्तव्यपालन ही अपनी स्वाभाविक प्रकृति बने। इसी की आवश्यकता है। यदि ऐसा हुआ तो अपने चारों ओर शुद्ध दृष्टि का अनुभव होगा। इस काल में जिन बधुओं ने अपना साथ दिया अथवा जो किसी कारण अपने साथ नहीं आ सके, सबकी ओर हमारी उदार दृष्टि रहे। यह न भूलें कि जो पीछे रह गए थे, उनको भी अपने साथ मिला लेने का काम हमें करना है।

उस अवधि के असद्भाव और पागलपन के कारण कार्य को जो हानि हुई व सगठन का जो तारतम्य टूटा है, उसे शीघ्रातिशीघ्र ठीक करना है।

विपरीत प्रवृत्ति

हममें से जो लोग जेल गए, उनमें अधिकार अथवा विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त करने की इच्छा जागृत हो सकती है, क्योंकि पिछले कुछ समय से जेल जाने को मान-प्रतिष्ठा अथवा पद प्राप्ति का एक प्रमाण पत्र मानने की अभारतीय प्रथा चल पडी है। बडे-बडे श्रेष्ठ पुरुष भी ऐसा सोचते और कहते दिखाई देते हैं कि हम अपने त्याग का उपभोग कर रहे हैं। जेल में काटी अवधि, चाहे वह गलती से ही क्यों न हो, बडी-भारी बचत-निधि हो गई है। उस निधि के अनुसार छोटे-बडे चेक भुनाते हुए लोगों को देखा जा सकता है। यह प्रवृत्ति कभी किसी राष्ट्र के लिए हितकारी नहीं हो सकती। कर्तव्य का पारितोषिक चाहना अथवा माँगना और त्याग के बल पर अधिकार माँगना भारतीय सस्कृति के विरुद्ध है एव अराष्ट्रीय मनोवृत्ति है। राष्ट्र को डुबानेवाली दूसरी कोई भावना इसके समान नहीं हो सकती।

यथार्थवादी दृष्टिकोण

हमें चारों ओर फैली हुई विषमता और असतोष दिखाई देता है। उसके अनेक कारणों में से एक प्रमुख कारण यह भी है कि उपरोक्त प्रकार के योग्यता न रखनेवाले लोग अधिकार प्राप्त किए हुए हैं। किंतु प्रश्न यह है कि यदि किसी ने युद्ध में अत्यत योग्यता और साहस का परिचय दिया है, इसलिए क्या वह शातिकाल में भी किसी विशिष्ट प्रकार की जिम्मेदारी योग्यतापूर्वक निभाने की पात्रता रखता ही होगा? इस साधारण नियम की उपेक्षा कर इस देश में जो नई पद्धति शुरू की गई है, उसके कारण शासन का कारोबार टूटता दिखाई देता है। ससार के दूसरे किसी स्वतत्र देश का ऐसा उदाहरण देखने को नहीं मिलता। इग्लैंड को ही लें– पिछले महायुद्ध में चर्चिल ने कितनी योग्यता और कुशलता का परिचय देते हुए हताश तथा हतबल हुए राष्ट्र को उभारा और उसे विजय दिलवाई। किंतु शातिकाल आते ही उसको प्रधानमत्री का स्थान किसी दूसरे के लिए खाली करना पड़ा। मैं किसी सैनिक अधिकारी का नहीं, वरन् एक प्रधानमत्री का उदाहरण दे रहा हूँ। राष्ट्रीय हिताहित के विवेक से युक्त स्वतत्र राष्ट्र की जागरूक जनता युद्धकाल के एक प्रधानमत्री को भी शातिकाल के लिए उपयुक्त नहीं समझती और युद्ध समाप्त होते ही उसके स्थान पर दूसरे को बिठाती है। स्वतत्र राष्ट्रों की यह दृढमूल धारणा है कि कर्तव्यपालन के लिए किए गए त्याग का पुरस्कार राष्ट्र-हितवर्द्धक नहीं हो सकता।

हमें अपने इस दुर्गुण को दूर करना होगा। हम अपनी दृष्टि तथा हृदय को उदार और विशाल बनाकर देखें कि इस आदोलन में किसी भी कारण से पीछे रह जानेवाले, किंतु शातिकाल में योग्यतापूर्वक यशस्वी कार्य की पात्रता रखनेवाले अपने अनेक सुयोग्य बधु हमसे अलग न रहें। हमारे अदर वह स्वार्थप्रेरित क्षुद्र भावना घुसने न पाए और देश के अन्य बाधव अपने विषय में यह विचार करने लगें कि हम एक नए, परतु राष्ट्र के आत्यतिक हित की भावना से ओतप्रोत दृष्टिकोण से चलने का प्रामाणिक प्रयत्न कर रहे हैं। इस स्वार्थमूलक भावना को मन में स्थान न देते हुए स्वभावगत क्षुद्रता और दुर्बलता से ऊपर उठकर सबके बारे में सोचते हुए आत्मसात करते हुए चलेंगे। हममें से कोई युद्धकाल के लिए योग्य हैं, तो कुछ शातिकाल में योग्य रीति से कार्य करने की पात्रता रखते हैं, क्योंकि यह भी एक सत्य है कि जो लोग शातिपूर्वक परिस्थिति का अवलोकन कर अवसर की राह देखते हैं, वह भी देश की बड़ी सेवा करते हैं। हम उन

सबकी सेवा से अवश्य लाभ उठाएँगे, किसी को छोडकर नहीं चलेंगे।

विरोध का कारण स्वार्थ

मुझे एक और बात कहनी है कि जिन लोगों ने हम पर यह आपत्ति लाई, यदि उनकी मन स्थिति का विचार किया, तो उसके पीछे स्वार्थयुक्त पक्षाभिनिवेश और सघ के वृद्धिंगत कार्य को देखकर उपजा भय दिखाइ देगा। वाल्मीकि ने लिखा है कि भयभीत हुआ प्राणी ही आक्रमण करता है। सामान्यत साँप जैसा भयकर प्राणी भी किसी को अकारण नहीं काटता, परतु अपने पर आक्रमण का भय होते ही वह डसे विना नहीं रहता।

मनुष्य भी एक सामाजिक प्राणी है। आज वह चाहे कितना ही सभ्य और उन्नत होने का दावा करे, किंतु मनुष्य का अत करण आज भी क्षुद्रता और स्वार्थ से परिपूर्ण है। अत जिनके हृदय की क्षुद्रता और कलुषता किसी महान ध्येय के साक्षात्कार से नहीं धुली तथा जिनमें महान सस्कृति के पुण्य सस्कारों का स्पर्श प्राप्त कर विशाल और एकात्मीयता की दृष्टि उत्पन्न नहीं हुई, ऐसे लोग मनुष्यरूपेण मृग ही हैं। वे जब किसी शक्ति को कल्पना से अधिक बढता देखते हैं, तब भय से काँप उठते हैं और भयभीत होकर उस शक्ति के मार्ग में बाधा उपस्थित करते हैं। अपने को यही अनुभव आया है।

चद्रकला के समान दिन-प्रतिदिन वर्धमान सघकार्य, उसके लक्षावधि जनसमूह के कार्यक्रम, अनुशासनयुक्त स्वयसेवकों का विशाल सगठन और सकटकाल में जानपर खेलकर अपने समाज के त्रस्त, सतप्त बाधवों की नि स्वार्थ सेवा की शक्ति का अनुभव क्षुद्र एव स्वार्थी लोगों को अत्यत भयभीत करनेवाला हो गया। उनको लगा कि यदि यह शुद्ध सात्विक शक्ति इसी प्रकार बढती रही, तो अपने त्याग के चेक भुनाने का आनद नष्ट होने की स्थिति आ जाएगी। वे लोग इस पवित्र कार्य के मार्ग में बाधा डालने का बहाना ढूँढ ही रहे थे कि परमात्मा की कृपा से उनको एक अवसर मिल गया, जिसका उन्होंने भरपूर लाभ उठाया।

अनुपम अनुशासन

यह अवसर हमारे लिए भी कुछ कम लाभ का नहीं रहा। हमें अपने कार्य की दृढता को अनुभव करने और कराने का अवसर मिला।

एक आँधी-सी चली और भय का तूफान उठता दिखाई दिया, जो सारे देश को ग्रस्त करना चाहता था, किंतु उस आँधी-तूफान में भी अपने स्वयसेवकों ने जिस सयम, धैर्य एव विश्वास का परिचय दिया, वह सचमुच विलक्षण था। इतना अटूट सयम और धैर्य होगा, इसकी कल्पना उन्हें नहीं थी। यदि धैर्य और सयम का परिचय स्वयसेवकों ने न दिया होता, तो क्या होता– यह कहना मुश्किल है। स्वयसेवकों का वह अनुपम अनुशासन और विश्वास इतना सराहनीय है कि डेढ वर्ष के कालखड में भी अपनी शक्ति कम नहीं हुई। केंद्र से मिली सूचनाओं का पालन सब परिस्थितियों में योग्य रीति से हुआ। शाखा बद करने को कहा, तो समस्त भारतवर्ष में विना किसी अपवाद के शाखाएँ बद हुईं। शुरू करने को कहा तो शुरू हो गईं। आदोलन करने को कहा तो आसेतुहिमाचल अबाध गति से न रुकनेवाला आदोलन हुआ। जब उसे बद करने को कहा तो बद हो गया। जब कार्य प्रारभ करने के लिए कहा, तो अगले दिन समस्त भारतवर्ष में ऐसे कार्य आरभ हो गया, मानो कल सोए थे और आज नींद से जागकर फिर से काम में लगे हैं। ऐसा लगता है, जैसे समस्त भारत में बल्बों का ताना-बाना बुना हो, जिसका एक बटन है। उसे दबाते ही सभी बल्ब जल उठे और उसे उठाते ही सब बुझ गए।

यह सब होते हुए भी कहीं त्वेष नहीं, कोई द्वेष नहीं। सामान्यत जब कोई अपनी निदा व अपमान करता है, तब क्रोध आता है। आना भी चाहिए, क्योंकि अपमान से क्रोधित होना तो पौरुष का लक्षण है। जिसको अपना अपमान होने पर भी क्रोध नहीं आता, वह न तो स्त्री होता है और न पुरुष, कुछ और ही होता है।

क्रोध पौरुष का लक्षण है। और पौरुषयुक्त व्यक्ति को अपमान के प्रसग पर त्वेष आना स्वाभाविक ही है, लेकिन उसपर काबू पा लेना उससे भी श्रेष्ठ है। इस श्रेष्ठता का परिचय अपने कार्य द्वारा मिला है। अपने इसी गुण के कारण पक्षाभिनिवेश से ऊपर उठे हुए नि स्वार्थ दूरदर्शी सज्जनों को अपने कार्य की आवश्यकता और शक्ति का विश्वास हुआ, जिसके फलस्वरूप आज स्वतत्र रूप से कार्य करने का अवसर हमें पुन प्राप्त हुआ है।

नि स्वार्थ चारित्र्य

हमें अपने आत्मसयम के गुण को बनाए रखते हुए भारत में

सबकी सेवा से अवश्य लाभ उठाएँगे, किसी को छोड़कर नहीं चलेंगे।

विरोध का कारण स्वार्थ

मुझे एक और बात कहनी है कि जिन लोगों ने हम पर यह आपत्ति लाई, यदि उनकी मन स्थिति का विचार किया, तो उसके पीछे स्वार्थयुक्त पक्षाभिनिवेश और सघ के वृद्धिगत कार्य को देखकर उपजा भय दिखाई देगा। वाल्मीकि ने लिखा है कि भयभीत हुआ प्राणी ही आक्रमण करता है। सामान्यत साँप जैसा भयकर प्राणी भी किसी को अकारण नहीं काटता, परन्तु अपने पर आक्रमण का भय होते ही वह डसे बिना नहीं रहता।

मनुष्य भी एक सामाजिक प्राणी है। आज वह चाहे कितना ही सभ्य और उन्नत होने का दावा करे, किंतु मनुष्य का अत करण आज भी क्षुद्रता और स्वार्थ से परिपूर्ण है। अत जिनके हृदय की क्षुद्रता और कलुषता किसी महान ध्येय के साक्षात्कार से नहीं धुली तथा जिनमें महान सस्कृति के पुण्य सस्कारों का स्पर्श प्राप्त कर विशाल और एकात्मीयता की दृष्टि उत्पन्न नहीं हुई, ऐसे लोग मनुष्यरूपेण मृग ही हैं। वे जब किसी शक्ति को कल्पना से अधिक बढ़ता देखते हैं, तब भय से काँप उठते हैं और भयभीत होकर उस शक्ति के मार्ग में बाधा उपस्थित करते हैं। अपने का यही अनुभव आया है।

चन्द्रकला के समान दिन-प्रतिदिन वर्धमान सघकार्य, उसके लक्षावधि जनसमूह के कार्यक्रम, अनुशासनयुक्त स्वयसेवकों का विशाल सगठन और सकटकाल में जानपर खेलकर अपने समाज के त्रस्त, सतप्त बाधवों की नि स्वार्थ सेवा की शक्ति का अनुभव क्षुद्र एव स्वार्थी लोगों को अत्यत भयभीत करनेवाला हो गया। उनको लगा कि यदि यह शुद्ध सात्विक शक्ति इसी प्रकार बढ़ती रही, तो अपने त्याग के चेक भुनाने का आनद नष्ट होने की स्थिति आ जाएगी। वे लोग इस पवित्र कार्य के मार्ग में बाधा डालने का बहाना ढूँढ ही रहे थे कि परमात्मा की कृपा से उनको एक अवसर मिल गया, जिसका उन्होंने भरपूर लाभ उठाया।

अनुपम अनुशासन

यह अवसर हमारे लिए भी कुछ कम लाभ का नहीं रहा। हमें अपने कार्य की दृढ़ता को अनुभव करने और कराने का अवसर मिला।

एक आँधी-सी चली और भय का तूफान उठता दिखाई दिया, जो सारे देश को ग्रस्त करना चाहता था, किंतु उस आँधी-तूफान में भी अपने स्वयसेवकों ने जिस सयम, धैर्य एव विश्वास का परिचय दिया, वह सचमुच विलक्षण था। इतना अटूट सयम और धैर्य होगा, इसकी कल्पना उन्हें नहीं थी। यदि धैर्य और सयम का परिचय स्वयसेवकों ने न दिया होता, तो क्या होता- यह कहना मुश्किल है। स्वयसेवकों का वह अनुपम अनुशासन और विश्वास इतना सराहनीय है कि डेढ वर्ष के कालखड में भी अपनी शक्ति कम नहीं हुई। केंद्र से मिली सूचनाओं का पालन सब परिस्थितियों में योग्य रीति से हुआ। शाखा बद करने को कहा, तो समस्त भारतवर्ष में बिना किसी अपवाद के शाखाएँ बद हुई। शुरू करने को कहा तो शुरू हो गई। आदोलन करने को कहा तो आसेतुहिमाचल अबाध गति से न रुकनेवाला आदोलन हुआ। जब उसे बद करने को कहा तो बद हो गया। जब कार्य प्रारभ करने के लिए कहा, तो अगले दिन समस्त भारतवर्ष में ऐसे कार्य आरभ हो गया, मानो कल सोए थे और आज नींद से जागकर फिर से काम में लगे हैं। ऐसा लगता है, जैसे समस्त भारत में बल्वों का ताना-बाना बुना हो, जिसका एक बटन है। उसे दबाते ही सभी बल्ब जल उठे और उसे उठाते ही सब बुझ गए।

यह सब होते हुए भी कहीं त्वेष नहीं, कोई द्वेष नहीं। सामान्यत जब कोई अपनी निदा व अपमान करता है, तब क्रोध आता है। आना भी चाहिए, क्योंकि अपमान से क्रोधित होना तो पौरुष का लक्षण है। जिसको अपना अपमान होने पर भी क्रोध नहीं आता, वह न तो स्त्री होता है और न पुरुष, कुछ और ही होता है।

क्रोध पौरुष का लक्षण है। और पौरुषयुक्त व्यक्ति को अपमान के प्रसग पर त्वेष आना स्वाभाविक ही है, लेकिन उसपर काबू पा लेना उससे भी श्रेष्ठ है। इस श्रेष्ठता का परिचय अपने कार्य द्वारा मिला है। अपने इसी गुण के कारण पक्षाभिनिवेश से ऊपर उठे हुए नि स्वार्थ दूरदर्शी सज्जनों को अपने कार्य की आवश्यकता और शक्ति का विश्वास हुआ, जिसके फलस्वरूप आज स्वतत्र रूप से कार्य करने का अवसर हमें पुन प्राप्त हुआ है।

नि स्वार्थ चारित्र्य

हमें अपने आत्मसयम के गुण को बनाए रखते हुए भारत में

भिन्न-भिन्न प्रणालियों से कार्य करनेवाले सभी लोगों को, चाहे आज वे अपने विरोधी ही हों, साथ लेकर चलना है। इस प्रकार अपनी प्रेममयी उदारता और विशुद्ध राष्ट्रीयता की भावना एव शुद्ध, पवित्र तथा सात्विक दृष्टि की आर्द्रता से सबको व्याप्त कर स्नेहसूत्र में दृढतापूर्वक बाँधते हुए अपने कार्य को बढाने के लिए आबद्ध होकर प्रयत्न करना है। एक बात हम अवश्य स्मरण रखें कि आज देश में परिस्थिति की जो भीषणता है और जो अनेकानेक समस्याएँ विक्षुब्ध किए हुए है, उन सबको शुद्ध राष्ट्रीय और भारतीय दृष्टिकोण से देखने तथा हल करने का विचार तथा सामर्थ्य तथा पात्रता अन्य किसी के पास नहीं है, न हो सकने की सभावना है। यह सब अपने को ही करना पडेगा। यह पहले भी दिखता था और अब तो बिल्कुल स्पष्ट है। किंतु यह सब करने के लिए अत्यत शुद्ध एव नि स्वार्थ तथा चरित्रवान लोगों के बडे समुदाय की आवश्यकता है। उसका निर्माण करना अपनी ही जिम्मेदारी है।

अत रात-दिन एक करके अपने इस चरित्र-निर्माण के कार्य को हम फिर से खडा करें। डेढ वर्ष के कारण हुई क्षति को केवल पूरा ही नहीं करना है, वरन् उससे भी आगे बढाना है। जब तक भारतवर्ष के ग्राम-ग्राम में, घर-घर में अपना कार्य नहीं पहुँचता, तब तक विश्राम का समय नहीं। कम से कम इतना तो हो ही कि भारतवर्ष का प्रत्येक व्यक्ति यह कहने लगे कि मैं सघ को अच्छी प्रकार जानता हूँ और उससे मेरा अच्छा सबध है। ऐसा कहने में वह गौरव और गर्व अनुभव करे।

६ नागरिक अभिनदन

(२२ अगस्त १९४९ रामलीला मैदान दिल्ली)

मेरे लिए यह कुछ नया ही प्रसग है। क्योंकि जब से राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ में प्रविष्ट होने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ, तब से शात और प्रसिद्धिपराड्मुख रहने की इच्छा रखते हुए मैंने व मेरे साथियों ने जीवन व्यतीत किया। किंतु अपने भारत का यह दुर्भाग्य है कि जो कुछ जैसा है, वैसा देखने की दृष्टि बहुत थोडे लोगों में है। इसलिए प्रसिद्धि-पराड्मुखता की वृत्ति से रहने की इच्छा को लोग 'गुप्त कार्य' कहते हैं।

तव में देखा जाए तो किसी भी सभ्य पुरुष को अपने गुणों का अपने मुख से वर्णन करना शोभास्पद नहीं है। किंतु आज देश में ऐसी कुछ चली है कि अपनी प्रशंसा अपने मुख से करनेवाले अच्छे समझे जाते तथा न करनेवालों के संबंध में भ्रम फैलाया जाता है।

जिस भारतवर्ष में अनेक ऋषि-मुनियों ने घर-बार छोड़कर सिद्धिपराङ्मुख होकर वनों तथा पर्वतों की कंदराओं में निवास करते हुए आत्मस्वरूप की प्राप्ति के लिए अहर्निश साधना की, धर्म के अनुकूल शुद्ध परम पवित्र जीवन बिताते हुए मानवता के सर्वश्रेष्ठ गुणों की रक्षा व विकास किया तथा अपना संपूर्ण जीवन समाज तथा राष्ट्र के उत्थान हेतु अर्पण करते हुए मानव-जीवन के महान अस्तित्व को ही सुरक्षित नहीं रखा, का विकास भी किया, उसी देश में, उसी परंपरा के आधार पर वही हमने भी अपनाया है। मानव-समाज के जिस भाग में हम उत्पन्न हुए उसको शक्तिशाली बनाते हुए दिन-प्रतिदिन सुयोग्य नागरिक निर्माण करने के प्राचीन भारतीय मार्ग को ही हमने स्वीकार किया है। अपने इस कार्य के विषय में अनेक प्रकार के भ्रम पैदा किए गए, परंतु इतना सौभाग्य कहिए अथवा कुछ विचित्रता कहिए कि अपने सांस्कृतिक जीवन की प्रणाली न जानने के कारण अनेक व्यक्तियों के द्वारा इस कार्य को 'गुप्त' कहे जाने पर भी इसने प्रगति करते हुए समाज की सेवा की।

आज मेरे अंतःकरण में संकोच पैदा हो रहा है। प्रसिद्धिपराङ्मुखता का दूध वर्षानुवर्ष पीने के पश्चात् आज मैं अपने आपको विचित्र परिस्थिति में पाता हूँ। लोग कहते हैं कि अब अच्छा हो गया। संघ का कार्य खुले रूप में होगा। किंतु संघकार्य में कोई परिवर्तन हुआ है, ऐसा मुझे दिखाई नहीं देता। खुले में कब नहीं होता था? संघकार्य तो उसी प्रकार चल रहा है। इस प्रकार के सत्कार के कार्यक्रम का यह पहला ही अवसर है। मैं इसकी कोई आवश्यकता नहीं समझता, क्योंकि यह प्रतिष्ठा तथा मान-सम्मान शोभा नहीं देता। जिसने अखिल हिंदू-समाज के लिए अपने अंतःकरण में प्रेम का भाव रखा हो, वह किसी के प्रति दुर्भाव क्यों रखेगा? क्या दिल्ली की जनता यह नहीं जानती कि भारत के जिस महापुरुष ने 'भारत एक है' का साक्षात्कार किया, उसने भारतीय राष्ट्रपुरुष की भव्य कल्पना कर संघ की स्थापना की है। इसलिए दिल्ली निवासियों द्वारा आयोजित इस सत्कार कार्यक्रम की कोई आवश्यकता नहीं थी।

सयम का अर्थ गुप्तता नहीं

भारतीय तथा अभारतीय सस्कृतियों का अतर समझ लेना चाहिए। इस बार जब रेल से दिल्ली आ रहा था, तब मेरे एक सहयोगी प्रातीय कार्यकर्ता साथ थे। उनसे इसी विषय में बातचीत चल रही थी। उन्होंने कहा कि अपनी सस्कृति में प्रेम का प्रदर्शन नहीं किया जाता, प्रेम तो हृदय में रहता है। मुझे तो ससार का अनुभव नहीं, किंतु वे ससारी थे।

हिंदू पति-पत्नी का पारस्परिक प्रेमभाव अत्यत पवित्र रहता है, नि स्वार्थ रहता है। पर क्या कभी हमने पाया है कि कोई हिंदू पति-पत्नी अपने प्रेम का प्रदर्शन सडक पर करते हैं? पति किसी बडे कार्य हेतु जाता है, तब पत्नी पूर्ण गरिमा के साथ द्वार के पीछे खडी रहकर अपने साश्रु नयनों से पति को विदा करती है। खुले प्रदर्शन से यह विदाई अधिक प्रभावी अभिव्यक्ति है। इसलिए कोई यह नहीं कहता कि पति-पत्नी का प्रेम गुप्त कार्य है। वह पति से लिपटती नहीं। इसका अर्थ यह नहीं कि उसे पति से प्रेम नहीं है। ऐसा बताया जाता है कि यूरोप या अन्य किसी देश में यदि पति को बाहर जाना पडे तो यह दिखाई देगा कि पत्नी कहीं से दौडकर आएगी, फिर वह रेलवे का प्लेटफार्म ही क्यों नहीं हो, अक्षरश पति के गले पडेगी और कहेगी 'हाय! मैं तुम्हारे बगैर जी नहीं सकती।' सभी देशों में जीवन का यह ढग दिखाई देता है। प्रदर्शन का यह रूप दिखता है, परतु हमारे देश में हमारी सस्कृति सयम सिखाती है। प्रेम भारतीय परपरा का अतर्निहित भाव है, हाव-भाव नहीं।

लेकिन कभी-कभी उस प्रेम का प्रदर्शन भी हो जाए तो बडी बात नहीं। अपना पति यदि बहुत बडे सकट से निकलकर आया हो तो पत्नी दरवाजे पर उसकी आरती उतारती है। विशेष परिस्थिति में पत्नी को सकट से बचाने के लिए पति उसका हाथ पकड लेता है। इस प्रकार कभी-कभी प्रेम का प्रगटीकरण हो जाता है। उसी प्रकार आज आप लोगों ने प्रगट-रूप से प्रेम-प्रदर्शन का यह आयोजन किया है, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। आज इस विकट परिस्थिति में जब भारत की नौका डूब रही है, उसे बचाने के लिए हम अपने हृदय में अधिकाधिक सौहार्द का सचार करें, प्रेम का साक्षात्कार करें। इसलिए मेरी सबसे यही प्रार्थना है कि वे भारतवर्ष की मूलभूत एकता को पहचानें, भारतीय सस्कृति को अपनाएँ। समाज में इतस्तत भूले बधुओं को एकत्र कर देश को अवनति की ओर ले जानेवाली सभी राष्ट्रघाती शक्तियों को तोड कर उन्नति की सद्‌शक्ति को प्रगट करें।

रिवर्तित परिस्थिति

यह सत्य है कि आज परिस्थिति में परिवर्तन हो गया है, किंतु सिसे हमारी जिम्मेदारी बहुत अधिक बढ गई है। पहले जब यहाँ अंग्रेज थे, । देश पर आक्रमण होने पर उनकी सेनाएँ रक्षा करने के लिए तत्पर ती थीं। अंग्रेजों तथा अमरीका में मित्रता होने के कारण गत युद्ध में मरीका अपनी सेना लेकर तुरत यहाँ आ गया था। अब यह स्थिति नहीं बाहर से सहायता की आशा करना व्यर्थ है। भारत को अपने सहारे ही खडा रहना पडेगा। कोई इसकी सहायता के लिए नहीं आएगा। यदि प्रयत्न करेंगे तो श्रेष्ठ राष्ट्रजीवन प्राप्त करेंगे, किंतु भारत एक तिसपन्न राष्ट्र के रूप में स्वावलंबी बन कर खडा नहीं हुआ तो इस घर्षमय युग में 'जीवो जीवस्य जीवनम्' के सिद्धांत के अनुसार शीघ्र ही ट हो जाएगा।

आज संसार के सभी क्षेत्रों में जीवन के लिए संघर्ष चल रहा है। स्कृतिक क्षेत्र में भी संघर्ष चल रहा है। इसलिए भारत के सांस्कृतिक क्षेत्र कार्य करने की आवश्यकता है। यदि हमने यह प्रयत्न नहीं किया तो देश अवस्था ही बदल जाएगी। यह संभव है कि यहाँ दो पैर पर चलनेवाले था अपना पेट भरनेवाले लोग रहेंगे, किंतु तब भारत, भारतवर्ष नहीं रह एगा। भारतीयत्व से पतित हुए को भारतवर्ष कौन कहेगा?

लोग कहते हैं कि आज देश में खाने-पीने की समस्या है। यह क है, किंतु संस्कृति की समस्या अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। खाने की मस्या तो कल हल हो जाएगी। किंतु भारतीय संस्कृति से शून्य होने पर केवल पेट भरने को शेष रह जाता है। संस्कृति देश का जीवन है और वन से शून्य व्यक्ति तो मुर्दा है। ऐसे मुर्दों का क्या करना? मृत मनुष्य । यदि सर्वश्रेष्ठ भोज्य पदार्थ भी खिलाया जाए तो क्या लाभ? उसे तो ला देना ही अच्छा है, अन्यथा रोग फैलाएगा। इस अवस्था में हमें इसके लाज का विचार करना चाहिए।

वतंत्र राष्ट्र-प्रतिभा

कुछ लोग कहते हैं कि दुनिया ने बहुत प्रगति की है। चारों ओर गति होने के कारण दुनिया छोटी हो गई है। इसलिए अब हमें भिन्न रीति विचार करना चाहिए, अपने जीवन के विषय में दूसरा क्या कहेगा, यह चार कर काम करना चाहिए। ऐसा बडे-बडे राजनीतिज्ञ भी कहते हैं,

किंतु इसका मतलब क्या है? यह तो बुद्धि की परतन्त्रता है। इसमें अपने राष्ट्रजीवन की स्वतंत्र प्रतिभा कहाँ है? मगर संघ में भारतीयत्व के आधार पर स्वतंत्र प्रतिभा का निर्माण होता है। यदि दुनिया छोटी हो गई है और अपनी स्वतंत्र प्रतिभा के आधार पर जीवन बिताना संसार के अन्यान्य व्यक्तियों को उचित नहीं लगता तो भी विश्वास से अपने मार्ग पर अटल रहने को आत्मविश्वास कहते हैं। यदि मैं दुनिया का अनुकरण करूँ तो स्वयं की प्रतिभा कहाँ रही? ऐसी अनुकरणप्रियता से तो भारत तबाह होगा।

पहले देश पर आक्रमण होने में समय लगता था, क्योंकि यातायात के साधन कम थे। अतः प्रतिरक्षा की तैयारी करने के लिए समय मिल जाता था। अब यातायात के तीव्र गति साधनों के कारण छोटी बनी दुनिया में कोई भी देश थोड़े ही समय में किसी भी देश पर दल-बल के साथ आक्रमण करने के लिए पहुँच सकता है। दुनिया के छोटे हो जाने का केवल यही अर्थ है कि आने वाला खतरा अब शीघ्र आ सकता है। अतः हमें राष्ट्रजीवन को वर्धमान करने का दिन-रात प्रयत्न करना पड़ेगा। झूठी लज्जा का शिकार बनकर हम अपना सब कुछ खो रहे हैं। दुनिया छोटी हो गई है, किंतु अंतःकरण तो बड़े नहीं हुए। संसार में सभी उदारचेता लोग हैं, ऐसा समझना भारी भूल है। आज यातायात के साधन मिल जाने पर दुनिया के लोगों का हृदयगत स्वार्थ और अधिक बढ़ गया है। सारे संसार पर शासन करने की इच्छा करनेवाले दुनिया में हैं। सर्वसाधारण व्यवहार में दुनिया को सज्जन मानना भयंकर भूल है।

इसलिए चौबीसों घंटे सबसे प्रेम करते हुए भी रक्षा के लिए सदा सतर्क रहें। सबसे प्रेम करनेवाला व्यक्ति भी बाहर जाते समय घर में ताला लगाकर जाता है। आज दुनिया छोटी हो गई तो क्या द्वार खोलकर चले जाना चाहिए? नहीं, यदि चोर कल दूर रहता था तो आज वह पड़ोस में ही आ गया है। अतः अब तक यदि एक ताला डालकर जाता था, तो अब दो ताले डालने का विचार करना उचित होगा। अतः नित्य जागरूक रहकर अपनी प्रतिभा को सदा-सर्वदा स्वतंत्र रखें। अपने जीवन को जाज्वल्यमान एवं प्रखर करें। समस्याएँ अत्यंत भीषण रूप में हमारे सामने खड़ी हैं। साधारण व्यक्ति 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' का पाठ नहीं करता। वह तो अपने लुटते घर को बचाने का उपाय चाहता है।

तारतम्यता का अभाव

आज वास्तव में तारतम्यता का अभाव है। हम क्या करें, क्या न करें, यह ज्ञात नहीं। अपने स्वत्व को नष्ट करना उदारता समझी जाती है। परपरा का त्याग करना, अर्थात् दुनिया का भला करना है, इस प्रकार की नासमझी की धारणाएँ व्याप्त हैं। तारतम्यता के अभाव में वस्तुस्थिति ठीक-ठीक दिखाई नहीं देती। क्या करें, क्या न करें? छोटी दुनिया का मतलब क्या है? बडी दुनिया का मतलब क्या है? प्रगतिशीलता का मतलब क्या है? अपने देश के अतिश्रेष्ठ बुद्धिमानों को बहुत ऊँची बातें ही दिखाई देती हैं, किंतु हम सब तो बिल्कुल साधारण बुद्धि के मनुष्य हैं। सामान्य नागरिक भी इसी प्रकार साधारण बुद्धि का है। उनके सम्मुख तो इस समय यह प्रश्न ही भीषण रूप से खडा है कि भारतीयत्व की रक्षा कैसे हो।

भारत, भारत ही रहेगा

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ को आज अनेक व्यक्ति प्रेम करते हैं। मेरा एक ही कथन है कि जो अपने पर प्रेम करे, उसके प्रेम की पात्रता अपने में बनाए रखने का प्रयत्न सदा करना चाहिए। लोगों के द्वारा राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के प्रतिनिधि इस नाते मेरे सम्मान में यह कार्यक्रम वास्तव में सघकार्य का ही आदर है। इसको सब दृष्टि से यशस्वी, सर्वप्रिय तथा सर्वव्यापी बनाने का स्वयसेवक भरसक प्रयत्न करेंगे।

अपना कार्य व्यापक और सर्वप्रिय कैसे बन सकता है? कार्य की प्रणाली में किन बातों का ध्यान दें, इस विषय में असमजस पैदा नहीं होने देना चाहिए। लोगों ने इस विषय में मुझसे बातचीत की है। सभी अपने-अपने सुझाव देते हैं। सुझावों का हमने सदा आदर किया है। किंतु कार्यकर्ताओं ने जब मुझसे पूछा कि इन सुझावों का क्या करें? तब मैंने कहा कि इनको परस्पर साथ रखो, ध्यान में आएगा कि सारे सुझाव एक-दूसरे के विरोधी हैं। तब किसके अनुसार चलें? इसलिए कार्य जैसा चल रहा है, वैसे ही चलने दें, क्योंकि यदि हम किसी एक की बात मानेंगे, तो दूसरा नाराज होगा। अत हमारे अनुभव के अनुसार जो प्रयोग अभी तक सफल सिद्ध हुआ है, उसे ही हम आगे भी चलाएँगे।

समाज के अग-प्रत्यग में घुसकर समाज की दुर्बलताओं को नष्ट करते हुए एक प्रखर राष्ट्रजीवन का निर्माण सघ द्वारा हो रहा है। अत मैं

प्रार्थना करता हूँ कि आप साल दो साल हमारे इस प्रयोग को देख लीजिए। यदि गत १८ मास का खड न पडता, तो सभवत मैं आपसे इतनी प्रतीक्षा करने के लिए नहीं कहता। अपने बधुओं के प्रेम के आधार पर हम आगे बढेंगे। भारतवर्ष, भारतवर्ष ही रहेगा। वह भारतीय सस्कृति को लेकर और शक्तिशाली तथा विजयी बनेगा। भारत की अतरात्मा की अपेक्षा को पूर्ण करने के लिए प्रत्येक बाल, तरुण तथा प्रौढ स्वयसेवक अपने जीवन का एक-एक क्षण, एक-एक श्वास इस कार्य में लगाएगा ऐसा आप विश्वास रखें। अत में मैं यही कहूँगा कि जो प्रेम आप लोगों ने प्रदर्शित किया है, उसके लिए मैं योग्य पात्र बन सकूँ, यही मेरी भगवान से प्रार्थना है।

१० शातचित्त से काम करना हमारी रीति

(अमृतसर २८ अगस्त १९४९)

स्वागत का यह अनुभव मेरे लिए एकदम नया है। अपने ध्येय की पूर्ति के लिए हम प्रकट रीति से बहुत दिनों से कार्य कर रहे हैं। पर हमने आत्मश्लाघा नहीं की और न ही अपने कार्य के ढोल पीटे। शातचित्त से काम करना ही हमारी रीति है। राष्ट्रजीवन में एक नई बातें आ रही हैं। सामान्य मनुष्य भी आवेदनपत्र में अपने गुणों का वर्णन करता है। यह विचार विदेशी है। यह व्यापार का एक अग है, स्वय का एक प्रकार का विज्ञापन है। यदि व्यक्ति ऐसा कहने लगे कि विज्ञापन द्वारा बिक्री होनेवाली वस्तुओं में से मैं भी एक हूँ, तो यह उसका अध पतन है, परतु आजकल सार्वजनिक कार्य की यही शिष्टसम्मत नीति है और जो उसे नहीं अपनाता, वह भयकर षड्यत्र करनेवाला माना जाता है। वैसे, देखा जाए तो सघ के उत्सव प्रारभ से ही मनाए जाते हैं, उसके निमत्रण-पत्र सर्वसामान्य को दिए जाते हैं, परतु वृत्त-पत्र को वृत्तात नहीं भेजे जाते। वृत्त-पत्र में नितात असत्य बातें छपकर आती हों, तो उसपर विश्वास कैसे करें?

मनुष्य पर कभी-कभी पागलपन सवार हो जाता है और तब वह चित्र-विचित्र क्रियाएँ करता है। सघ के स्वयसेवकों को बदीगृह में डालना इसी का परिचायक है। उस समय एक वृत्त-पत्र ने मेरे बारे में लिखा कि मैं व्यक्तिगत रूप से गाँधी-हत्या का दोषी हूँ। फिर लिखा कि इस सबध में

एक दाढीवाले व लबे बाल रखनेवाले व्यक्ति को बदी बनाया गया है। मैंने सोचा– 'होगा कोई।' बाद में ७-८ फरवरी को पढा कि गाँधी-हत्या में मेरा प्रत्यक्ष सहभाग है। मुबई में अभियुक्त की पहचान के लिए जो परेड हुई, उसके लिए मुझे नागपुर से विमान द्वारा मुबई ले जाया गया और उस शिनाख्त परेड में मदनलाल ने मुझे पहचान लिया, जबकि मुझे नागपुर बदीगृह से कहीं भी नहीं ले जाया गया। फिर भी वृत्त-पत्र में यह सब कुछ छपा। यह है वृत्त-पत्र की नीति। इसलिए हम इनसे दूर ही रहना चाहते हैं।

लेकिन मेरे जीवन में ऐसा कुछ परिवर्तन होगा, इसकी मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी, क्योंकि मेरी शिक्षा स्वधर्म के अनुकूल हुई और जिस महापुरुष ने सघ प्रारभ किया, वे तो इन सब बातों को त्याज्य मानते थे। उनके कुछ मित्रों ने उन्हें पकडकर एक-दो फोटो खिचवाए। अपने ऋषि मनु या चाणक्य आदि के चित्र नहीं मिलेंगे। अपने डाक्टर जी इन महर्षियों के समान थे।

आजकल बिना काम किए भी समाचार-पत्र में बहुत कुछ छपकर आता है, वहीं कितना भी काम करो, कुछ छपता नहीं। हमने कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया। समाचार-पत्र छापें या न छापें, सन् १९४७ का इतिहास लोग पढेंगे, तब भयकर आँधी में भी अविचल चित्त से काय में लीन स्वयसेवकों का गौरव उन्हें दिखाई देगा।

११ यह हमारी परीक्षा थी

(लखनऊ १ सितबर १९४६)

पहले मैं अपने सघकार्य हेतु जैसे आता था, वैसे ही आज भी आया हूँ, परतु आपने मेरे प्रति जो भाव और प्रेम व्यक्त किया है, मेरे लिए सर्वथा नवीन है। मैंने तो ऐसा सकल्प किया था कि ईश्वर की प्रेरणा से भारतीय प्राचीन राष्ट्रजीवन का दीप और उसकी आत्मा अर्थात् अपनी सस्कृति की सेवा तथा अध्ययन कर उसी पर अधिष्ठित अपने इस विशाल हिंदू-समाज को एक सूत्र में गूँथते हुए चुपचाप इस चित्र से ओझल हो जाऊँगा, ताकि लोगों को पता तक न चले।

आपने प्रेम से अभिभूत होकर इस विशाल कार्यक्रम का आयोजन

किया है, वह किसी एक व्यक्ति के लिए नहीं तो सिद्धांतों के लिए है। महान सघकार्य का प्रतिनिधि, उसके लाखों स्वयसेवकों की भावनाओं का प्रवक्ता, इस नाते आपने मुझ पर जो प्रेमवर्षा की है, वह केवल सघ के सिद्धांतों पर आपके प्रगाढ विश्वास का द्योतक है। यह स्वाभाविक भी है। यह विशाल भारतवर्ष, इसकी प्राचीन भारतीय सस्कृति और इसका प्राचीन तथा अभिजात समाज-जीवन, इसपर समय-समय पर अनेक विपदाएं आई, परतु इस समाज ने उनमें से सहज भाव से मार्ग निकाला। इस विशाल कार्यक्रम से यही भाव पुन प्रकट हो रहा है।

बीसवीं शताब्दी में जब चारों ओर भौतिकता का साम्राज्य दिखाई देता है, उस समय तत्त्वज्ञान का भूखा, आध्यात्मिक जीवन का अधिष्ठाता यह हिंदू-समाज जब व्याकुल होकर इधर-उधर झॉकने लगा तो उसे पता चला कि भारतीय जीवन के सुदृढ पैरों पर खडा एक कार्य विद्यमान है। भारतीय जीवन के शुद्ध सास्कृतिक प्रवाह को गतिमान करनेवाला कार्य राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का ही है, यह बात लोगों की समझ में सहज आ गई।

सकटकालीन विरोध-भाव त्यागो

इस प्रकार सेवावृत्ति, अपनी सस्कृति का उज्ज्वल अभिमान, उससे उत्पन्न प्रेम, प्रेम से उत्पन्न अध्ययन की इच्छा, उससे सहज निर्मित सस्कृति का ज्ञान और उस ज्ञान को आत्मसात करने पर उत्पन्न होनेवाला मधुर व्यवहार निर्माण करने का कार्य सघ गत २४ वर्षों से कर रहा हे। ईश्वर की कृपा से यह कार्य बढा तथा जनता का स्नेहपात्र बना। कठिनाइयॉं आई और गई। मैं तो समझता हूँ कि भगवान ने हमारी परीक्षा ली। जब उसे लगा कि हमारी परीक्षा पूरी हुई है, तब सकट अपने आप दूर हो गए। उसने परिस्थिति में परिवर्तन कर दिया। अभी हाल की घटनाओं की ओर देखने का हमारा यही दृष्टिकोण है। इसलिए जब सघ पर प्रतिबध लगाया गया, तब न तो हम बहुत दु खी हुए और न ही उसके हटने पर कोई आनदोत्सव मनाया। जो भाव उस समय था, वही आज भी है। सब प्रकार के पक्षाभिनिवेश और सस्था विषयक दुराग्रहों का त्यागकर हम काम करते रहे हैं। हमने सदैव ही अपने समाज-बधुओं को अपना समझा। हमने आत्मीयता में कोई अतर निर्माण नहीं होने दिया। इसलिए मेरी आग्रहपूर्वक प्रार्थना है कि कष्ट और सकटकाल में कोई विरोधी भावना मन में निर्माण हुई होगी, तो उसका त्याग कर अपने अत करण विशुद्ध प्रेम से भर दें।

अत करण में शुद्ध भावना रखना और 'श्वानवत् गुर्गुरायते' के समान अपने ही लोगों के प्रति अत करण में घृणा रखना हमें शोभा नहीं देता। हृदय की विशालता ही मनुष्यत्व है। हृदय के शुद्ध भावना से ओतप्रोत करने हेतु दु खदायक तथा क्रोध निर्माण करनेवाले सब प्रसगों को मन से निकाल देना चाहिए। विपत्तिकाल में स्वयसेवकों का सयम, आपत्तियों को हॅसते-हॅसते झेलने की प्रवृत्ति, उनकी ध्येयनिष्ठा और उसी प्रकार समाज से प्राप्त अनाहूत सहायता और विश्वास को ही अपने हृदय में धारण करें। इसी से अपना जीवन श्रेष्ठ हो सकेगा। अपने कार्य पर अपनी श्रद्धा बढेगी और वह पूर्ण करने का निश्चय वृद्धिगत होगा। देशातर्गत सभी पक्षों का एक समान अधिष्ठान तैयार करना अति आवश्यक कार्य है। अपने अत करण में सबके लिए प्रेम, सद्भाव और सहकार्य की वृत्ति निर्माण होनी चाहिए। यह वृत्ति ही सभी प्रश्नों का एकमात्र उत्तर है। यह पेनिसिलीन के समान दिव्य औषधि है।

एक कोटि बधुओं का प्रश्न

देश-विभाजन के बाद अपने एक करोड बधु भारत आए, वे निराश्रित हैं। हमारी ही गलतियों के कारण जिनका सर्वनाश हुआ, जिन्हें विविध आपत्तियों को झेलना पडा, ऐसे हमारे ही देश के अपने बधुओं को 'शरणार्थी', 'निवासित',—ऐसा सबोधन करके हम उन्हें अपने से दूर, अलग एक वर्ग मानते हैं—यह एक अत्यत लज्जाजनक घटना है। असहाय अवस्था में, अपने ही बधुओं के पास जा रहे हैं, इस कल्पना से वे हमारे प्रात में आए, परतु हम उन्हें अपने बीच में आत्मसात न कर सके। उल्टे उनकी सुव्यवस्था को देश के सामने एक कठिन प्रश्न के रूप में प्रस्तुत किया। हम पैंतीस कोटि लोग एक कोटि बधुओं को अपने बीच समाहित न कर सके, उधर विश्व कल्याण की लबी बातें बहुत ही उत्तम रीति से कहते हैं। सपूर्ण ससार पर बधुत्व का अधिकार जतानेवाले हम अपने ही बधुओं को निर्वासित या शरणार्थी मानते हैं, यह कितनी बडी विडबना है। यह हमारी उन्नति का लक्षण है या अवनति का? यदि हमें अपने बधुओं का अभिमान होता, तो यह दृश्य देखने की स्थिति कभी न आती। अभी तो उनके भोजन-पानी की व्यवस्था तक नहीं हो सकी है। क्या यह दु ख की बात नहीं है कि इन एक करोड बधुओं की व्यवस्था भारत की ३५ करोड जनता नहीं कर सकी? इसका केवल एक ही कारण है कि उनकी व्यथा किसी के

अत करण को स्पर्श नहीं कर रही। आत्मीयता और सहानुभूति के अभाव का ही यह परिणाम है। यह सपूर्ण राष्ट्र मेरा है और इसके किसी भी व्यक्ति पर आई विपत्ति का निराकरण करना मेरा कर्तव्य है– यह भावना ही लुप्त हो गई है।

अभी तक अन्न-वस्त्र देकर शासन ने इन एक करोड लोगों को सँभाला है, पर वह और कितने दिन उन्हें सँभाल पाएगा? इस प्रकार केवल दान पर जीवनयापन करने से कितना नैतिक पतन होगा? ऐसे एक करोड लोगों की नीतिमत्ता यदि नष्ट हो जाती है, तो वह राष्ट्र का कितना नुकसान है। ये सभी घटनाएँ अपनी आँखों के सामने घट रही हैं, पर हम लोग उस ओर ध्यान नहीं देते।

चारों ओर व्यक्तिगत, पक्षगत भास्वार्थ या विचाराधारा का अभिनिवेश ही दिखाई देता है। परतु सपूर्ण राष्ट्र मेरा है और उसके हर व्यक्ति के दु ख-निवारण का मैं प्रयास करूँगा, इस उदात्त भावना का पूर्णतया अभाव है। सघ यही भावना निर्माण करने की इच्छा रखता है। भावी राष्ट्रजीवन के लिए यह बात कितनी आवश्यक है, इसका अनुमान तो हम सहज लगा सकते हैं।

राष्ट्रीय चरित्र से ओतप्रोत एव अनुशासनबद्ध सगठन निर्माण करने की इच्छा सभी के अत करण में होने से आपके मन में हमारे प्रति प्रेम प्रकट हुआ। यह प्रेम यद्यपि अच्छा है और हमारे हृदय भी प्रेम के लिए लालायित हैं। हमारी किसी से भी विरोध की इच्छा नहीं है। वैसे ही कोई हमारा विरोध न करे, यह हमारी इच्छा है। आत्मीयता और एकात्मता हमारा स्थायी भाव है, परतु यह प्रेम कार्यरूप में भी प्रकट होना चाहिए। इसलिए इस कार्य का महत्त्व समझकर कार्यकर्ताओं के कधे से कधा मिलाकर विशुद्ध राष्ट्रीय भावना का प्रकटीकरण करें। जिससे भारत का भाग्योदय होकर अपने पूर्वजों के कथनानुसार–

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन
स्व स्व चरित्र शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवा ।।
(मनुस्मृति २ २०)

यह स्थान उसे प्राप्त हो व भारत को जगद्गुरु मानकर सब लोग उसके चरणों के पास बैठकर जीवन सफल बनाने हेतु चारित्र्य एव धर्म का शिक्षण लें। इसलिए मैं ऐसी प्रार्थना करता हूँ कि हम चरित्र-निर्माण के इस

पवित्र कार्य को सदैव करते रहें। आप मेरी प्रार्थना सुनेंगे और उसे कार्यान्वित करेंगे, ऐसा मुझे विश्वास है।

ॐ ॐ ॐ

१२ विश्व कल्याणकारी हिंदू-संस्कृति

(४ सितंबर १९४९ पटना)

अनेक वर्षों बाद इस इतिहासप्रसिद्ध नगर में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। समाज के निर्माण के लिए आप सबको एकत्रित देखकर हृदय में प्रसन्नता अनुभव कर रहा हूँ। मैं आशा करता हूँ कि अपने प्राचीन गौरव का स्मरण करते हुए अत्यंत गौरवशाली पाटलिपुत्र नाम की यह नगरी अपना नाम सार्थक करेगी। जब भारत छिन्न-विच्छिन्न और दुर्बल हुआ था, उस समय इसी भूमि से भारतीयत्व की एक प्रखर ज्योति निर्माण हुई, जिसने इसी भूमि से हिंदू-समाज का प्रबल प्रवाह प्रवाहित किया था। उसने समग्र भारत को प्रकाशमान कर सर्वत्र एकता की भावना जगाई।

इस प्रांत में भारतीयत्व का प्रेम विपुल प्रमाण में अस्तित्व में है। प्रवास करते समय एक बार मेरी भेंट एक साधु से हुई। वे साग्रह बोले– 'यदि आप हिंदू संगठन करके भारतीयत्व का प्रवाह फिर से गतिमान करना चाहते हों, तो बिहार जाइए।' वह ऐसा इसलिए बोले क्योंकि बिहार में भारतीयत्व की जितनी तीव्र भावना है, आचार-विचार में भारतीयत्व की चमक जिस प्रमाण में दिखाई देती है, उतनी वह अन्यत्र दिखाई नहीं देती। बिहार के भारतीयत्व के इस अभिमान को भूलना सहज नहीं है।

गत डेढ़ वर्ष में जो अप्रिय घटनाएँ हुई हैं, उनके विषय में न बोलना ही योग्य होगा। वे घटनाएँ भारतीयत्व को कलंक लगानेवाली हैं। उनके कारण भारत का गौरव किंचित भी नहीं बढ़ा। अप्रिय घटनाओं को भूलना कठिन होते हुए भी भूल जाना ही श्रेयस्कर है। अपने लोगों द्वारा दिए गए कष्ट हम फूल जैसे मानें। उन अप्रिय घटनाओं को हृदय से निकालकर देश और समाज की सेवा को अपना कर्तव्य मानकर जिस उद्देश्य से हम सबने कार्य किया, उसी पवित्र ध्येय और कर्तव्य से प्रेरणा लेकर भविष्य के कार्य की चिंता करें।

पिछले डेढ़ वर्ष में हिंसा हुई। संघ के विरुद्ध अपप्रचार किया गया।

झूठ-मूठ के समाचार छापे गए। बेसिर-पैर के आरोप लगाने वाली पुस्तकें भी प्रकाशित की गईं। अहिसा के पुजारी का नाम लेकर हिसात्मक कृत्य किए गए। फिर भी सब अपने ही हैं, ऐसा मानकर हम उनके दुष्कर्म भूल जाएँ। ईश्वर से प्रार्थना करें– 'हे परमेश्वर! ये अज्ञानी हैं, इन्हें क्षमा कर।' ऐसा भाव प्रकट करने का सौभाग्य सघ के स्वयसेवकों को प्राप्त हुआ है।

शुद्ध अत करण से मानव का कल्याण करना ही भारतीय सस्कृति है। भारतीय सस्कृति में किसी के भी द्वेष या ईर्ष्या के लिए स्थान नहीं है। इसलिए इस सस्कृति की वृद्धि के कारण या इसके अनुसार आचरण करनेवालों से किचित भी डरने का कारण नहीं है।

१३ व्यक्ति केवल स्वार्थी नहीं होता

(८ सितबर १९४९ कोलकाता)

भारतवर्ष के अन्य स्थानों पर भ्रमण करते हुए अपने बधुओं से बातचीत में कहा करता हूँ कि मैं तीन-चौथाई बगाली हूँ। यह कोई मुँहदेखी बात नहीं कर रहा। वस्तुत मैं अधिकाशत बगाली हूँ। इसी प्रात में मेरा पुनर्जन्म हुआ है। यहाँ आकर मेरी आत्मा को अत्यत आनद प्राप्त होता है। वैसे तो भारतवर्ष में सभी स्थान मेरे लिए आनददायक हैं, परतु यहाँ आकर मुझे विशिष्ट आनद का अनुभव होता है।

यह प्रात तो उन महान साधकों की जन्मभूमि है, जिन्होंने परमात्मा का साक्षात्कार किया और सिहगर्जना करते हुए सपूर्ण विश्व में भारतीय सस्कृति का डका बजाया। उन महापुरुषों ने भौतिकता के मद में भारतवर्ष को दलित, पिछडा व अज्ञानी बताने वालों की आत्मश्लाघा को चूर-चूर कर उन्हें हताभिमान किया। उनसे अपनी सिहगर्जना में कहा– 'अरे, विश्व के प्रगतिशील देशो! भारत अज्ञानाधकार में नहीं है। अज्ञानी तो आप हो। आपको अभी बहुत कुछ सीखना है। आप लोगों ने तो खाने और पीने के अलावा और कुछ सीखा ही नहीं। ओ शारीरिक भोगों में डूबे हुए देशो! तुम्हें सपूर्ण प्राणिमात्र में उस परमात्मा के अश का साक्षात्कार करने का अनुभव नहीं है। जब आपके पूर्वज पकाकर खाना तक नहीं जानते थे,

उससे सहस्रावधि शताब्दियों पूर्व ही भारत ने ऐसी महान आत्माएँ पैदा कीं, जिन्होंने प्राणिमात्र में अपनत्व का दर्शन किया और जीवन के उच्चतम सिद्धातों का सृजन करते हुए नर से नारायण पद को प्राप्त किया। वह भारतीय सस्कृति विश्व की आध्यात्मिक गुरु है। जिस पवित्र सस्कृति के पावनतम सदेशों द्वारा ससार में शाति स्थापित हुई और आज भी विश्वशाति स्थापित होकर रहेगी।' ऐसी महान आत्माओं को जन्म देने का श्रेय इस प्रात को है। उस महान पुरुष पूज्यपाद स्वामी श्री विवेकानद जी के गुरुबधु स्वामी श्री अखडानद जी के चरणों में बैठकर यहाँ ही भारतीय ज्ञान की शिक्षा मैंने प्राप्त की। इसलिए यह भूमि मेरे लिए एक विशेष आनद का स्थान है।

आज स्वार्थ का बोलबाला भले ही दिखाई देता हो, पर सभी ग्रथों में ऐसा वर्णन है कि कोई भी व्यक्ति परिपूर्ण रूप से स्वार्थी नहीं हो सकता। हर व्यक्ति के अत करण में प्रेम कुछ न कुछ अश में रहता ही है। व्यक्ति-व्यक्ति के प्रति जो प्रेम हो जाता है, वह कोइ रोटी-कपडे के कारण नहीं होता। वह तो अन्य व्यक्तियों में अपनी ही आत्मा के निवास के अनुभव के कारण होता है। उपनिषदों ने 'ईशावास्यमिद सर्व यत्किञ्च जगतयाञ्जगत। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध कस्यस्विद्धनम्।' (ईशावास्योपनिषद् १) का भाव हमारे सामने रखा है।

अत 'आत्मा का आत्मा के प्रति प्रेम' उसमें अपने आपको अनुभव करने के कारण है। सारे समाज का दु ख मेरा दु ख है यह भाव इस स्वाभाविक आत्म स्वभाव के कारण पैदा हो सकता है। अत समाज में ऐसी आत्मीयता का, एकत्व का भाव निर्माण करना और एक चारित्र्यसपन्न, सुसगठित सामर्थ्य निर्माण करना आज की परिस्थिति के लिए आवश्यक है।

भारतीय सस्कृति के जागरण के इस कार्य पर आपत्ति आई थी, पर वह आप लोगों की कृपा से दूर हो गई है। यह कार्य केवल सघ का ही है, ऐसा मानना निरा अभिमान होगा। यह हम सबका है।
आज के प्रसग पर इतना ही कहूँगा और आप लोगों ने मुझ जैसे अति सामान्य व्यक्ति के प्रति यह प्रेम भाव प्रकट किया, इसके लिए आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

१४ कार्य के प्रति अडिग विश्वास

(८ सितंबर १९४९ कोलकाता)

आज आपके सामने कुछ बातें रखना आवश्यक समझता हूँ। हमारे कार्य में गत १८ माह तक रहे अंधकार के बाद हम सफलतापूर्वक पुनः कार्य प्रारंभ कर रहे हैं। आज जो उत्साह दिखाई दिया, जो नारे लगाए गए, उससे हमें यह गलत धारणा नहीं बनानी है कि अपना कार्य बहुत बढ गया है। अपने देश के विस्तार को देखते हुए अपना संगठन और अधिक प्रभावी एवं सर्वसमावेशक बनाना आवश्यक है। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं कि आज जो उत्तेजना दिखाई दे रही है, वह मिथ्या है। परंतु यदि यह सत्य है तो उसका प्रतिबिंब अपने कार्यविस्तार में दिखाई देना चाहिए, अन्यथा यह नारे अपने लिए घातक सिद्ध हो सकते हैं।

१८ माह की निष्क्रियता के काल में हमने कुछ अन्य प्रश्नों पर ध्यान केंद्रित किया था, परंतु अब हमें अपने सुनिश्चित ध्येय पर ध्यान केंद्रित करना है। हमें स्मरण रखना है कि हमारी चली आ रही कार्यपद्धति से ही दृढनिश्चयी, निःस्वार्थी, सच्चे देशभक्तों की अत्यंत अनुशासित मालिका प्राप्त हुई, जिसने रीढ का काम किया। वह पुरानी कार्यपद्धति, वह संगठन, उससे उत्पन्न केंद्रीभूत सुदृढ कार्यशक्ति ही हमारे भावी योजना का आधार है। इस मूल शक्ति के आधार पर ही हम भविष्य में कोई भी योजना हाथ में लेकर उसे प्रत्यक्ष में लाने के लिए आवश्यक कृतिशीलता खडी कर सकते हैं। तात्कालिक उत्तेजना, प्रेरणा, भावविवशता अपने कार्य के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकती है। दैनंदिन शाखा के सीधे-सादे कार्यक्रम, जिनसे चारित्र्य-निर्माण होता है, किसी भी परिस्थिति में अनिवार्य हैं। उन्हीं पर अपना ध्यान, अपनी सारी शक्ति केंद्रित होनी चाहिए।

१८ मास के प्रतिबंध काल में आपने भविष्य की विविध योजनाएँ बनाई होंगी। कारावास में विचार करने के अलावा हम कुछ कर भी नहीं सकते थे। किसी भी कार्यकर्ता के लिए चिंतन और बुद्धिजन्य ज्ञान आवश्यक है। चिंतन के बाद एकमत से हम इसी निर्णय पर आए हैं कि किसी भी योजना या कार्यक्रम की यशस्विता का आधार 'मनुष्य-शक्ति' ही है, पर यह मनुष्य-शक्ति किसी भीड के कारण नहीं, अपितु अति सुसंगठित अनुशासित, चारित्र्यसंपन्न कार्यकर्ताओं द्वारा उत्पन्न होती है।

इसलिए मैं फिर से आग्रहपूर्वक कहता हूँ कि 'मनुष्य-निर्माण' ही

सभी कार्यों का आधार है। यह बात यदि हम ठीक प्रकार से समझ लें, तो हमें अपनी स्थिति शीघ्र ही अधिकाधिक सुसगठित तथा दृढ करने की आवश्यकता प्रतीत होगी। अपने कार्य में स्थिरता आए बिना हम आगे नही बढ सकते। बगाल यह सीमावर्ती प्रात है। यहाँ सच्चे देशभक्त, ध्येयनिष्ठ, दृढ, अनुशासित स्वयसेवकों की शक्ति की आवश्यकता है।

हमें अपना अधूरा कार्य पूर्ण करना है। समय अत्यत मूल्यवान है। जितना विलब होगा, उतना ही हम खो देंगे। अठारह महीनों के कार्य की क्षति की पूर्ति करने में विलब न हो। प्रतिबध के पूर्वकाल की स्थिति शीघ्रातिशीघ्र आनी चाहिए। कोई भी कार्य दुविधाग्रस्त मन से न करें। सघ के इतिहास का स्मरण करें। सघ प्रारभ हुआ, तब क्या था? धन नहीं, समथक नहीं, सहानुभूति दशानेवाले भी नहीं थे। ऐसी अत्यत प्रतिकूल परिस्थिति में अपना कार्य बढा, क्योंकि दृढ निश्चय था। वही दृढ निश्चय और प्रबल इच्छाशक्ति आज भी आवश्यक है। हमें अपना कर्तव्यपालन करते हुए सगठन को इतना व्यापक बनाना है कि हम अपने समाज के सभी प्रश्नों का समाधान कर सकें।

मैं इसके बाद आऊँगा तो मुझे यहाँ का कार्य प्रगति-पथ पर है, यह देखने का सौभाग्य प्राप्त हो– यही इच्छा है। ☙☙☙

१५ सबके प्रति स्नेह-भावना

(१२ सितबर १९४९ को प्रवास के दौरान महू रेलवे स्टेशन के बाहर मच बनाकर श्री गुरुजी का स्वागत किया गया था। उस अवसर पर श्री गुरुजी ने सक्षिप्त उद्बोधन दिया)

यह प्रसग कुछ बोलने या कहने का नहीं है। फिर भी प्रात काल के समय अपने प्रतिदिन के आवश्यक कार्यों को छोडकर आप यहाँ सघ के प्रति हार्दिक स्नेह के आकर्षण से आए हैं, उसके लिए मैं सघ की ओर से आपको धन्यवाद देता हूँ। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के स्वयसेवक बधुओं के हृदय में तो विशुद्ध प्रेम-भावना है। सयम तथा सहिष्णुता का भाव तो हमारे कार्य का प्रधान गुण रहा है। इसलिए आज तक होनेवाले अनेक विरोधों को आप सभी ने सहन किया। वस्तुत यही आप सबके लिए एक अभिनदन-पत्र है। यह स्नेह-भावना सबमें वैसी ही बनी रहे, यही मेरी कामना है।

☙☙☙

१६ अपने हृदय को शुद्ध रखें

(१२ सितबर १९४९ इंदौर)

मुझे इस प्रात में आए हुए बहुत समय बीत गया। यद्यपि हृदय में बहुत इच्छा थी कि भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों पर अपने साथ कधे से कधा लगाकर काम करनेवाले छोटे-बडे सभी स्वयसेवकों से मिलूँ, परतु परिस्थिति से विवश अपनी इच्छा पूर्ण करने में असमर्थ रहा। आज मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि मैं मध्यभारत के स्वयसेवकों तथा नागरिकों के दर्शन कर रहा हूँ। इस विलब का कारण सभी को विदित है। मेरा और मेरे साथियों का पिछला डेढ वर्ष अकर्मण्यता में ही बीता है। इस अकर्मण्यता के कारणों के विषय में मैं कुछ नहीं कहता, क्योंकि वह अब इतिहास हो गया है। ईश्वर की कृपा से उस सकटमयी अवस्था से अपना सघ बाहर निकल आया है और अपना शुद्ध सास्कृतिक कार्य फिर से भारतवासी भाइयों को दिखाई देने लगा है।

इस डेढ वर्ष के कई अनुभव हैं। कुछ हृदय के अदर दु खद स्मृतियाँ जागृत कर सकते हैं और कुछ ऐसी भी घटनाएँ हैं जिनसे सुख प्राप्त होता है। कितनी ही घटनाएँ हुई हैं– असत्य प्रचार, मिथ्या भाषण, शारीरिक दृष्टि से स्वयसेवकों पर प्रत्यक्ष आघात, अनेक मित्रों की आर्थिक हानि तथा कारावास आदि। ऐसी अनेक घटनाएँ हैं, जो मनुष्य को दु ख दे सकती हैं। एक तो सघ जैसे पवित्र कार्य पर प्रतिबध लगाया गया। कुछ स्थानों पर ऐसे-ऐसे अमानुषिक अत्याचार हुए कि जीवित बालक तक अग्नि में डाल दिए गए। ऐसे कार्य सुसस्कृत कहलानेवाले समाज व राष्ट्र को कहाँ तक शोभा देते होंगे, लोग स्वय ही सोचें। उसके बाद सत्याग्रह प्रारभ हुआ, तब अपने स्वयसेवकों को कारावास व अनेक यातनाओं को भुगतना पडा। उस समय भी कुछ क्षेत्रों में ऐसे आचरण हुए, जिनको देखकर विचार करना पडता है कि हम लोग बीसवीं शताब्दी में रहते हैं या सदियों पहले के उस युग में, जब किसी प्रकार की न्याय-व्यवस्था थी ही नहीं। कुछ (सरकारी) अधिकारियों ने अति उत्साह में यातनाओं का जो क्रम चलाया, उसके कारण कई अच्छे नवयुवक स्वयसेवक इस ससार से चल बसे। यह बात उन्हें कहाँ तक शोभा देगी, मैं कह नहीं सकता। अगर कोई इसका इतिहास सुनेगा तो उसे इन दु खद घटनाओं का स्मरण कर निश्चित ही लज्जा का अनुभव होगा।

मैंने इस समय जो भ्रमण प्रारंभ किया है, वह इस दृढ निश्चय के कारण ही किया है कि अपने सभी बांधवों के हृदय में से दु:ख देनेवाली, क्रोध उत्पन्न करनेवाली उक्त स्मृतियों को सदा के लिए मिटा दूँ, जिससे क्षण-भर के लिए भी इस बात का स्मरण न हो कि अपने विषय में कुछ विपरीत घटनाएँ हुई हैं, दु:ख व कष्ट हुआ है। यद्यपि उनके परिणाम आज भी भुगतने पड रहे हैं, फिर भी हम अपने हृदय को शुद्ध रखें। विरोध, क्रोध, विद्वेष, घृणा आदि भावनाएँ तुच्छ हैं। इनका शिकार हम न बनें और मेरी इस भावना व धारणा को अपने बंधुओं तक पहुँचाने का प्रयास करें। प्रवास का प्रमुख लक्ष्य यही है।

जब हम देखते हैं कि अपने चारों ओर सत्य और मिथ्या-- दोनों प्रकार की बातें अपनाकर कुछ लोग उन्हें हमेशा जागृत रखवाने की चेष्टा कर रहे हैं, ऐसी अवस्था में भी हृदय के अंदर कोई विपरीत स्मृति न रहे, ऐसा कहता हुआ मैं भ्रमण करता हूँ। उसके दो कारण हैं। एक कारण तो यह है कि मनुष्य का हृदय, मनुष्य की स्मृति आखिर कितनी बातें अपनी स्मृति में रख सकेगी। वह भूलता ही है। मानस-शास्त्र का कहना है कि अच्छी स्मरणशक्ति वह होती है, जो भूलने योग्य बातों को भुला दे और स्मरण रखने योग्य बातों को ध्यान में रखे, अर्थात् जो अयोग्य बातें हों, उन्हें भूलना, उनका तिरस्कार पूर्वक विस्मरण करना उत्कृष्ट स्मृति का एक लक्षण है।

दूसरा यह कि शरीर पर हुआ घाव तो मिट जाता है, उसका दर्द भी दूर हो जाता है, परंतु उसका चिह्न बना ही रहता है, जो हमेशा उस घाव का स्मरण कराता रहता है। उसी प्रकार स्मृतियों को सदा के लिए अपने मन में रखने की प्रवृत्ति सर्वसाधारण में होती है, परंतु उत्कृष्ट स्मृति का जो लक्षण बताया, वह केवल इसीलिए कि मनुष्य साधारण से ऊपर उठकर अपनी सच्ची मनुष्यता प्रकट कर सके। आघात का तुरंत प्रतिकार करना निकृष्ट भावना है, जो जड वस्तुओं में भी दिखाई देती है, किंतु सोच-समझकर चलनेवाला, जिसके मन में होश है, उसको ही मनुष्य कहना चाहिए। इसलिए इस प्रकार की अतीव दु:ख की स्मृतियों को, विद्रोह उत्पन्न करनेवाली बातों को अपने स्मृति-पटल से साफ कर देना ही सुसंस्कृत मनुष्य का लक्षण है।

अच्छी स्मृतियाँ उसी मनुष्य के हृदय में रह सकती हैं, जिसका हृदय मनुष्यता के आधार पर ऊँचा उठा हुआ है। केवल उसी मनुष्य में यह

पात्रता हो सकती है कि वह सभी प्रकार की अप्रियता, आघात एव अन्यायों को भुला सके। हृदय की ऐसी विशालता, इस प्रकार की भव्यता या श्रेष्ठत्व सघ के प्रत्येक स्वयसेवक के हृदय में जागृत हो तथा भारत की सर्वसामान्य जनता में भी यह उच्चता आनी चाहिए। मेरे जैसा मनुष्य भगवान से यही माँगता है कि हे प्रभो! हमें ऐसा आशीर्वाद दो कि हम अपने परस्पर में हुए व्यवहार में होनेवाले छोटे-मोटे अन्याय, अपराध या गलती को सहज ही भुलाकर हृदय में केवल अच्छी बातों को रखने की क्षमता प्राप्त कर सकें, प्रेम बढा सकें, अप्रियता व कटुता को मिटा सकें, क्योंकि अपने भारत का भविष्यकाल इसी से उज्ज्वल हो सकता है।

१७ डेढ वर्ष की कार्य क्षति पूर्ण करे

(१३ सितबर १९४९ को इदौर तथा प्रात के स्वयसेवको के सम्मुख दिया गया उद्बोधन)

आपके सामने कुछ अधिक या अलग से कहने की कोई आवश्यकता नहीं है। कल सार्वजनिक कार्यक्रम में जो कुछ कहा, वही पर्याप्त है। अपनी कार्यपद्धति की तो यह एक विशेषता है कि जो कुछ भी हम स्वयसेवकों को कहते हैं, वही जनता को कहते हैं। बाहर कुछ और भीतर कुछ कहने की पद्धति से हम लोग अभी अपरिचित ही हैं। एक बार परम पूजनीय डाक्टर साहब के पास कुछ सज्जन आए थे। उनमें से एक स्वयसेवक भी थे। उन्होंने डाक्टर साहब से कहा, 'डाक्टर जी, मैं तो स्वयसेवक हूँ। कम से कम मुझे तो अपने दिल की बात बताइए।' डाक्टर जी ने कहा– 'भाई, यहाँ तो जो कुछ है, प्रकट में है। अप्रकट अथवा गुप्त कुछ भी नहीं।'

विश्राम पूर्ण हो चुका

विगत डेढ वर्ष के विश्राम के पश्चात् प्रत्येक स्वयसेवक ने स्वाभाविक रीति से स्वय को अधिक स्वस्थ व सशक्त अनुभव करना चाहिए। इन १८ महीनों में हम सभी को बडा आराम मिला है। रोज सुबह उठने, भागने, दौडने आदि झझटों से एकदम छुट्टी मिली। खूब विश्राम हुआ, लेकिन अब विश्राम पूर्ण हो चुका है और हमारा कार्य पुन प्रारभ हुआ है।

कार्य करते समय जो सकट आते हैं, उन्हें निर्भीकता से सहन करना ही श्रेष्ठ पुरुषों का लक्षण होता है। हमारे यहॉ के अवतारी महापुरुषों का जीवन-चरित्र देखने पर हमें पता चलता है कि उनका तो सपूर्ण जीवन ही कष्टमय था। सत्पथ पर चलने पर तो सकटों का सामना करना ही पडता है। अतएव यह सोचना कि कार्य करते समय सकट नहीं भोगने होंगे, गलत है। हमने यह कटकाकीर्ण पथ अनजाने में अथवा किसी के बहकावे में आकर स्वीकार नहीं किया। हम अपनी प्रार्थना में प्रतिदिन 'स्वय स्वीकृतम्' शब्द का प्रयोग करते हैं। इसलिए पथ पर चलते समय कॉंटे लगें, सकट आएँ, तब मन में किसी के प्रति कोई दुर्भावना उत्पन्न नहीं होनी चाहिए। यदि हम स्वयसेवकों के व्यवहार का यह रूप रहा, तो निश्चित ही हमारा भविष्य अधिक उज्ज्वल बनेगा। इसी प्रकार हृदय की विशालता बढाते हुए अपना कार्य करते रहे, तो विश्वास रखिए कि अपना मार्ग अधिक सुलभ होगा तथा उसकी प्रगति भी होगी।

त्याग अथवा श्रेष्ठ काय का कभी ढोल नहीं पीटा जाता। साथ ही प्रतिफल चाहना और मॉंगना तो व्यापार के समान है। ससार में कई मनुष्य गुप्तदान करते हैं। वे दान देते हैं, पर अपना नाम प्रकट नहीं करते। व्यापार में भी धन दिया जाता है और दान में भी। कृति एक ही है, किंतु दोनों में अतर है। दान निरपेक्ष और नि स्वार्थ जीवन की श्रेष्ठता का परिचायक है, मगर व्यापार तो स्वार्थवश किया जाता है। राष्ट्र-कार्य वणिक वृत्ति से नहीं किया जा सकता। अतएव फल के प्रति निरपेक्ष रहने की शिक्षा हमें अपने मन को देनी चाहिए।

आज हमारे चारों ओर का वायुमडल विपरीत भावों से भरा पडा है। जो कोई आज त्याग करता है या जिसने पहले कभी त्याग किया है, उसके बदले में आज प्रतिफल चाहता है। इसके कारण ही ईर्ष्या, स्वार्थप्रियता और वृथा अहकार की भावना चारों ओर फैल रही है। किंतु ऐसी स्थिति तो ठीक नहीं है।

प्रत्येक व्यक्ति के कार्य करने के भिन्न-भिन्न क्षेत्र होते हैं। एक व्यक्ति, जिसका उपयोग किसी एक क्षेत्र में पूर्णतया लाभदायक होता है, दूसरे क्षेत्र में उपयोगी सिद्ध होगा ही, यह बात असम्भव है। युद्ध में सबसे आगे लडनेवाला सिपाही शरीर पर पचास घाव खा लेने के बाद यदि कहे कि उसे राष्ट्र का प्रधानमत्री बना दिया जाए तो यह उचित नहीं होगा।

सैनिक और प्रधानमत्री के गुण और कर्तव्य भिन्न-भिन्न होते हैं। अतएव प्रत्येक को अपने मन में यह विचार करना चाहिए कि सबसे बडा अधिकार सेवा का अधिकार है। हम सब एकाग्र होकर अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार अपने समाज की सेवा कर सकें, इससे बढकर और कौन-सा सौभाग्य हो सकता है? जिस व्यक्ति में जितनी अधिक कार्यक्षमता होगी, उतनी अधिक राष्ट्र के प्रति उसकी उपयोगिता होगी। कालेज में एक लडका अच्छा विद्यार्थी होता है और दूसरा अच्छा खिलाडी। दोनों की योग्यताएँ भिन्न हैं। यदि वे अपने-अपने क्षेत्र से परे कार्य करें, तो कोई भी सफल नहीं होगा।

भगवान श्रीकृष्ण के चरित्र में हमें ये सब बातें स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। मथुरा में कस, चाणूर आदि दैत्यों को मारकर यदि भगवान चाहते तो स्वय ही राजा बन सकते थे, किंतु उन्होंने ऐसा न कर वयोवृद्ध उग्रसेन को राजा बनाया। हमारी सस्कृति ऐसे ही नि स्वार्थ कार्य करना सिखाती है, त्याग या सेवा का प्रतिफल लेना नहीं और भगवान श्रीकृष्ण तो स्वय हमारी इस पुण्य सस्कृति के प्रणेता हैं। हमें अपने सामने उन्हीं का आदर्श रखना चाहिए। हम सब अपने क्षेत्र में योग्यता के साथ कार्य करें।

पिछले दिनों समाजसेवा के भाँति-भाँति के विचार अपने कई स्वयसेवक बधुओं के मस्तिष्क में आए, मैं इस पर अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करता हूँ। हम इसी प्रकार विचार करें कि समाज में कौन-कौन सी योजनाएँ बनाई जा सकती हैं। सब बातों का विचार करना अत्यत आवश्यक है। योजना बनाना तो सरल है, पर उसे पूरा कौन करेगा? सघ प्रारभ होने के पूर्व भी देशोद्धार की बहुत सी योजनाएँ बन चुकी थीं, किंतु उनमें से अधिकाश अधूरी ही रहीं। योजनाओं को पूर्ण करने के लिए सगठन चाहिए और वह केवल तर्क अथवा बुद्धिवाद से नहीं होता। सेवा की शुद्ध भावना तथा उज्ज्वल चरित्र लेकर यदि मनुष्य कार्य करने की ओर अग्रसर न हो तो योजनाएँ कागज में ही रह जाती हैं। अतएव देश के विभिन्न व्यक्तियों को एकसूत्र में गूँथकर चारित्र्यसपन्न, सच्चे राष्ट्रसेवकों को एकत्र कर भारतव्यापी विशाल शक्तिशाली सगठन बनाकर समाज की सभी समस्याओं का हल निकाल सकते हैं। देश की इसी आवश्यकता को समझकर अब हम अपने कार्य का विस्तार करने में जुटें।

१८ सांस्कृतिक जीवनधारा को अखंड रखें

(१३ सितंबर १९४९ को इंदौर की स्वागत समिति के सदस्यों की ओर से आयोजित चायपान के कार्यक्रम में निमंत्रित सभ्रांत नागरिकों के सम्मुख रखे विचार)

जिस क्षण मुझे इस पवित्र कार्यक्षेत्र में आकर कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, तब से मैं परमात्मा से यही प्रार्थना करता हूँ कि ईश्वर मुझे सेवा करने का जितना भी अवसर दे, जितनी भी सेवा वह मेरे हाथ से होने देना चाहे, होने दे। फिर भी उसके लिए मान-सम्मान अथवा प्रसिद्धि प्राप्त न हो। किंतु आजकल का समय ऐसा है कि अपना विचार कुछ भी रहे, मगर इस प्रकार के कार्यक्रम रास्ते में आ ही जाते हैं। यह तो आप सभी महानुभावों की कृपा है, जो आप इस प्रकार अपना अगाध स्नेह हमें प्रदान करते हैं।

सम्मान मेरा नहीं, संघकार्य का

साधारण रीति से मेरी यह धारणा है कि लाखों व्यक्तियों में से एकाध व्यक्ति ही ऐसा होता है, जो स्वयं बड़ा रहता है। बाकी तो कार्य की महत्ता के कारण ही व्यक्ति को बड़प्पन प्राप्त होता है। आपके द्वारा आज का यह स्वागत मेरे कार्य का ही स्वागत है, ऐसा मैं समझता हूँ।

एक अत्यंत श्रेष्ठ और महान तपस्वी व्यक्ति द्वारा इस शुभ कार्य का प्रारंभ हुआ। तपस्या और कर्तृत्व का उनमें एक अपूर्व समन्वय था। लोग उनके विषय में प्रायः कुछ नहीं जानते, कारण कि वे स्वयं प्रसिद्धिपराङ्मुख रहना चाहते थे। कैसा भीमकाय पुरुष था वह। किंतु इस कार्य के लिए उन्होंने अपने-आपको होम कर दिया। इस कार्य की पूर्ति के लिए उन्होंने न तो निज का परिवार बनाया और न ऐसे संबंधियों के लिए कुछ कमाया जो उनपर अवलंबित थे। उच्च शिक्षा प्राप्त की, किंतु उसका उपयोग स्वतः के लिए नहीं किया। ऐसे महान पुरुष विरले ही होते हैं। उसी महात्मा के पुण्यमय जीवन के कारण यह पवित्र कार्य इतनी वृद्धि को प्राप्त हो सका। इस कार्य की प्रगति के लिए सज्जन लोग मुझे धन्यवाद देते हैं, किंतु संघ का यह विशाल कार्य केवल परम पूजनीय डाक्टर जी की तपश्चर्या का ही परिणाम है।

इसलिए जब कभी भी स्वागतादि का ऐसा कोई प्रसंग आता है तो

हृदय बड़ा विकल हो जाता है। मैं सोचता हूँ यह जो कुछ भी है, उस परम शक्ति का है और इसे मैं उसे ही समर्पित करता हूँ। हमारे यहाँ कई ऐसे भी मंदिर होते हैं, जहाँ पूजा का अधिकार भक्त को नहीं, केवल पुजारी को होता है। भक्त पूजा की सारी सामग्री पुजारी को दे देता है। पुजारी उसकी ओर से ही भगवान का पूजन संपन्न करता है। मेरी भी ठीक यही स्थिति है। देवता और भक्त के बीच में एक मध्यस्थ मात्र हूँ।

समाज का सहयोग

मैं अनुभव कर रहा हूँ कि ऐसे सभी सज्जनों, जो श्रेष्ठ व अनुभवी हैं, का प्रेम और सौहार्द अपने इस कार्य के प्रति बढ़ता ही जा रहा है। दो महीने पहले ऐसा भययुक्त वातावरण था कि संघ का नाम लेना भी संकट समझा जाता था। लोग सोचते थे कि न जाने क्या हो जाएगा? संघ की उस समय की स्थिति ठीक सन् १९१०-१९१५ के उस क्रांतिकारी पक्ष जैसी हो गई थी, जो अंग्रेजों को भगाने के लिए शस्त्रास्त्रों से क्रांति करने का कार्य करता था। फल यह होता था कि जो क्रांतिकारी पकड़े जाते थे, उनके संबंधियों पर भी संकट आता था। सरकार उन्हें भाँति-भाँति के कष्ट देती थी। लोग अपने आपको क्रांतिकारी का रिश्तेदार बताने से डरते थे, अपना संबंध छिपाते थे। संघ के संबंध में भी उसी घटना की पुनरावृत्ति हुई। परंतु ऐसी विषम स्थिति में भी कई सज्जनों ने अपने मन में यह भाव रखा कि संघ के साथ जो कुछ किया जा रहा है, वह बिल्कुल अयोग्य व अन्यायपूर्ण है।

ऐसा अनेक लोगों का कहना है कि सन् १९४७ में इस प्रांत में स्वयंसेवकों ने महत् कार्य किया। एक श्रेष्ठ सज्जन ने मुझसे कहा कि यदि स्वयंसेवक न होते तो उनकी व हजारों लोगों की प्राण-रक्षा न हो पाती। लेकिन अब वही व्यक्ति मुझसे मिलने में भी डरते हैं।

समाचार-पत्र उन दिनों ऐसे कई समाचार छाप देते थे जो बिल्कुल ही बेसिर-पैर के होते थे। ऐसा ही एक संवाद मेरे विषय में छपा था कि गाँधी जी की हत्या के षड्यंत्र में मेरा हाथ है। एक अभियुक्त मदनलाल ने मेरी शिनाख्त भी की। परंतु हितवाद समाचार पत्र ने ऐसी ही गलत खबरों के प्रकाशन के विरुद्ध एक अग्रलेख लिखा, जिसमें संपादक महोदय ने बड़े जोरदार शब्दों में लिखा कि इस प्रकार का मिथ्या प्रचार तत्काल बंद होना चाहिए। उसी प्रकार श्री टी आर वेंकटराम शास्त्री, पुणे के श्री केतकर, दिल्ली के श्री मौलिचंद्र शर्मा जैसे सज्जनों ने अपना सद्भाव

प्रदर्शित किया तथा सघ पर हुए अन्याय के निराकरण के लिए प्रयास किए। मैंने यह बात आपके सामने केवल यही बताने के लिए कही है कि सकट के समय में भी देश के नागरिकों ने सघ के प्रति अपना प्रकट-अप्रकट प्रेम व्यक्त किया।

परपरागत जीवन-प्रणाली का महत्त्व

यदि आप सपूर्ण विश्व के इतिहास पर दृष्टिपात करेंगे तो आप देखेंगे कि ऐसे अनेक राष्ट्र, जो अपना लक्ष्य भुलाकर लक्ष्यहीन हो चुके थे, अपनी परपरागत जीवन-प्रणाली को बिसार चुके थे, नष्ट हो गए। दुनिया के मानचित्र में आज उनका कहीं ठिकाना नहीं। अपने पडोसी चीन को ही लें। चीन की रत्न-प्रसवता गत शताब्दियों में क्षीण हो गई। आज चीन के जो राष्ट्रीय नेता हैं, वे ईसाई हैं, अर्थात् चीन की जीवनधारा को समझकर उसका नेतृत्व करनेवाले व्यक्ति नहीं। यही कारण है कि वहाँ आपसी सघर्ष दिखाई दे रहा है। किंतु इसके विपरीत जिन राष्ट्रों के सामने एक ध्रुव लक्ष्य रहा, वे सैंकडों सकटों को सहकर भी आज जीवित हैं। हमारी इस भूमि ने, हमारे इस समाज ने आज तक जितने सकट सहे, उतने ससार में किसी ने भी नहीं सहे, किंतु हम आज भी जीवित हैं।

सृष्टि के प्रारभकाल से ही अखिल मानव-हितों को दृष्टि में रखते हुए हमारे पूर्वजों ने उस महान तत्त्वज्ञान का विकास किया है, जिसके द्वारा हमने न केवल अपने जीवन में एकात्मता की प्रतिष्ठा की, बल्कि सपूर्ण विश्व में एकात्मता लाने की भावना प्रकट की और आज भी गिरी हुई स्थिति में हमारे इस महान तत्त्वज्ञान का झडा फहरानेवाले कई श्रेष्ठ पुरुष हमारी इस रत्नगर्भा वसुधरा ने दिए हैं। जब हम ससार को 'आत्मा वाऽऽरे द्रष्टव्य श्रोतव्य मन्तव्य ' का श्रेष्ठ तत्त्वज्ञान सिखाने की क्षमता प्राप्त कर चुके थे, तब यूरोप के मनुष्य जगलियों के समान नगे-भूखे दौडा करते थे। यूरोपीय समाज के इतिहास में तो ऐसे सकट आए ही नहीं, उनके विकास का इतिहास तो केवल १५०० वर्ष का इतिहास है।

सघ सास्कृतिक उत्कर्ष का प्रयास

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या अन्य देशों के समान हम भी डूब जाएँगे? जिस देश ने सर्वप्रथम प्राणिमात्र में परमात्म तत्त्व का साक्षात्कार किया, हर एक वस्तु में ईश्वर का आभास देखा तथा सदैव विश्वशाति की

कामना प्रकट की, उस देश को आज कुछ ग्लानि आई हुई भले ही दिखती हो, पर अपने ऋषियों के स्वप्न को पूर्ण करने का भाव अभी भी विद्यमान है। प्राचीन ऋषियों का सदेश हमारी सस्कृति की चिरतन थाती है। हमारी इसी जीवनधारा का नाम सस्कृति है। राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के रूप में हमने इसी विशाल एव अति कठिन कार्य को प्रारभ किया है। ३५ करोड के इसी व्यापक समाज में परिवर्तन करने का प्रयास काफी समय लेगा, इसमें कोई सदेह नहीं। किंतु हमारा विश्वास है कि हमारा प्रारभ योग्य दिशा में हुआ है।

आज हमारे देश में अनेक सस्थाएँ काम करती हैं। वे हम लोगों को तो सकीर्ण और साप्रदायिक कहती हैं, किंतु इन सस्थाओं में ऐसे कई लोग मिलेंगे जो प्रात और प्रातीयता के लिए देश में कोलाहल मचाने से नहीं चूकते।

हमारे लिए प्रातीयता का कोई झगडा नहीं। देश के कण-कण का हम पर अधिकार है ओर हमारा उसपर अधिकार है। जैसा गुजरात मेरा है, वैसा ही वह दूसरों का भी है। महाराणा प्रताप पर केवल राजपूतों का ही अधिकार नहीं है, हम सब भारतवासियों का है। नागपुर, जो सघ का केंद्र-स्थान है, वहाँ के मुख्य कार्यवाह एक मारवाडी हैं। उन्हें यह पद मारवाडी होने के कारण नहीं, वरन् उनकी योग्यता के कारण प्राप्त हुआ है। सघ के सभी प्रमुख कार्यकर्ता केवल महाराष्ट्रीय हैं, यह आरोप भी बिल्कुल गलत है।

हमारे ऋषियों ने एकात्मता स्थापित करने के लिए, उसकी अनुभूति करने के लिए कुभ ओर सिहस्थ जैसे मेलों की व्यवस्था की। सघ इसी एकात्मता का साकार चित्र सपूर्ण भारतवर्ष में देखना चाहता है। देश में एकात्मता और बधुभाव के इस प्रेममय जीवन के निर्माण के उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए आज सघ के हजारों कार्यकर्ता अपना घर-बार छोडकर कार्य करते हैं।

मैं आप लोगों से प्रार्थना करूँगा कि आप लोग प्रेम और आत्मीयता को प्रत्यक्ष सहयोग में परिणत करें। प्रत्यक्ष एकात्मता का एक दिन यह परिणाम होगा कि एक ऐसी महान शक्ति उत्पन्न होगी, जो समाज का योग्य मार्गदर्शन कर सकेगी और तब मानव-धर्म का ज्ञान प्राप्त करने के लिए विश्व को भी हमारी शरण में आना पडेगा।

ऌ ऌ ऌ

१६ जनता राष्ट्र की रीढ

(विशाखापत्तनम २६ अक्तूबर १९४९)

आपके इस नगर में पिछली बार तीन वर्ष पूर्व आया था। सामान्यत मेरी यह इच्छा रहती है कि प्रतिवर्ष प्रत्येक प्रांत के केंद्र स्थान में कम से कम एक बार अवश्य हो आऊँ। पर यह साधारण सी इच्छा भी पिछले दो वर्षों में मैं पूर्ण नहीं कर पाया। अब पुन इस स्थिति में हूँ कि देश में इधर-उधर जाकर अपने मित्रों के साथ मिल सकूँ, कार्य कर सकूँ।

देश के सामान्य-जनों से कई सुझाव मिले हैं, उनके मतानुसार अब इस कार्य की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए फिर से एक बार सपूर्ण देश का प्रवास कर मैं यह देखना चाहता था कि क्या देश की परिस्थिति में इतना परिवर्तन हुआ है कि लोगों के सुझाव को ग्राह्य माना जाए? उनका एक तर्क यह भी था कि हमें अपनी ही सरकार ने कारागार में डाला। जो एक गभीर बात है। चूकि सरकार को देश की जनता के हित में कार्य करना होता है और वह मानती है कि अब ऐसे सगठन की आवश्यकता नहीं है। समाज की सारी आवश्यकताएँ स्वय सरकार पूर्ण करेगी। मुझे इस बारे में कोई संदेह नहीं कि सरकार सब कुछ करने में सक्षम है, पर सरकार निश्चित रूप से भगवान तो है नहीं। केवल परमात्मा ही एक साथ अनेक कार्य कर सकता है। सरकार तो मानवनिर्मित और मानव-सचालित है। वह समाज से प्राप्त बल के आधार पर ही कुछ कर सकती है। इसके साथ ही प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि सरकार पर ही सारा भार न डाले।

हमारे कार्य के सबध में एक गलत धारणा यह बनी हुई है कि राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ देशव्यापी विशाल सगठन किसी समुदाय विशेष के विरोध में खडा कर रहा है। इस भ्रमपूर्ण धारणा के कारण ही ऐसे लोग कहते हैं कि अब तो अपना देश स्वतत्र है, इसलिए एक-दूसरे का विरोध करने अथवा एक-दूसरे से भयभीत होने का कोई कारण नहीं है। अत अब सघ की भी कोई आवश्यकता नहीं है। परतु हमारा कार्य किसी का विरोध या शत्रुता करने के लिए प्रारभ नहीं हुआ। वस्तुत यह पवित्र कार्य तो अनेक कारणों से छिन्न-विच्छिन्न हुए हिंदू-समाज को सगठित कर एक सूत्र में बाँधने का है। यह हमारा सकारात्मक पहलू है। जब तक यह समाज विभाजित रहेगा, तब तक इस कार्य की आवश्यकता बनी रहेगी, यह समझने की आवश्यकता है।

इस देश का आधार-स्तभ है यहाँ का समाज। यह समाज ही इस भूमि की सारी शक्ति है। अत इस देश का सम्मान बढाने का दायित्व इसी समाज पर है। हमें ऐसा कार्य करना है कि सपूर्ण विश्व की नजरें हम पर स्थिर हों। हमें जनता को एक सगठित सपूर्ण इकाई के रूप में खडा करना है। यह आवश्यक है कि यह एकीकरण बाह्य दृष्टि से नहीं, भावात्मक हो। जब तक हम यह अनुभव नहीं करते कि हम एक ही राष्ट्रीय जीवन-प्रवाह के घटक हैं, तब तक यह एकत्रीकरण का कार्य जारी रखना है।

इस भूमि पर जब विदेशियों की सत्ता थी, उस समय भी दुनिया के विद्वान हमारी महान सास्कृतिक पृष्ठभूमि और यहाँ के दर्शन का महत्व मान्य करते थे। उस समय भी स्वामी विवेकानद जैसे महान व्यक्ति ने इग्लैंड अमरीका और यूरोपीय राष्ट्रों में जाकर इसी दर्शन तथा सास्कृतिक पृष्ठभूमि के बल पर देश की महानता सिद्ध की। इस एक चीज के आधार पर हम विश्व को कह सकते हैं कि 'हम तुम्हारे गुरु हैं। तुम्हें हमारे पास आकर शिक्षा ग्रहण करनी होगी।' इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए अपनी कमियों को दूर करना होगा, पर हम यदि नकल में ही विश्वास करते रहे तो दुनिया को क्या दे सकेंगे? पश्चिमी देशों की नकल से हम अपनी बात का औचित्य कैसे सिद्ध कर सकेंगे?

२० मैं निमित्त मात्र हूँ

(मुबई ६ नवबर १९४९)

आपके द्वारा आयोजित इस समारोह से मेरे मन में सकोच उत्पन्न हुआ है। मेरे लिए यह समारोह क्यों आयोजित किया गया यही मेरी समझ में नहीं आया। जिस सस्था में मैं काम करता हूँ उसकी प्रगति मेरे कारण हुई है— ऐसा मैं नहीं मानता, क्योंकि ऐसा मानना एक अहकार है। मेरे सहयोगी भी कभी-कभी स्नेहवश कहते हैं कि मुझ पर सघ का कार्य निर्भर है। मेरा स्वय का शरीर तो क्षीण है। रेल का डिब्बा ही मेरा घर है। कभी नींद का पता नहीं रहता। खाना-पीना भी नहीं के बराबर। ऐसी स्थिति में यह शरीर थक कर कभी भी समाप्त हो सकता है।

डा हेडगेवार जी का ऐसा ही आ। भयानक

दरिद्रता का सामना करना पडा था। मैंने स्वय उनका वह दारिद्र्य देखा है। समाज में स्वार्थशून्य राष्ट्रभक्ति उत्पन्न कर उसके अनुसार जीवन बितानेवालों की सुसूत्र सगठना खडी किए बिना कुछ हो नहीं सकता– इस प्रखर भावना से सघ की स्थापना कर उसके लिए उन्होंने सन् १९२५ से १९४० तक अहोरात्र परिश्रम किए। कहने का मतलब यह कि उनका वज्रप्राय शरीर नष्ट हो गया। उनका तेज मृत्यु के बाद भी कायम था। किसी समाधिस्थ योगी के समान उनका चेहरा दीप्तिमान, शात था। जब उनके समान प्रचड शरीर भी नष्ट हो गया, तब मेरे समान दुर्बल की भी वही अवस्था हुई तो क्या आश्चर्य?

कार्य तो अपनी पवित्रता से चलता है, कार्यकर्ताओं की तपश्चर्या के कारण प्रगति करता है। मैं तो ऐसे कार्यकर्ताओं का केवल प्रतिनिधि मात्र हूँ। इस सम्मान को मैं इसी दृष्टि से देखता हूँ। उनका प्रतिनिधि होने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं ऐसा मानता हूँ कि उनपर आपके स्नेह का यह प्रकट रूप है, इसीलिए मैं इस सम्मान को स्वीकार करता हूँ। राष्ट्रोन्नति के लिए पोषक ऐसे कार्य की परपरा प्रारभ करनेवाली यह सस्था जनता की ही है। वह सभी का पितृधन है। यह भारत देश है। इसके कोटि-कोटि पुत्र हैं। उन सबपर इस देश का अधिकार है। इस देश का सपूर्ण चित्र आँखों के सामने रखकर हम चल रहे हैं।

२१ लोगों का प्रेम हमारी शक्ति

(८ नवबर १९४९ राजकोट)

जैसे-जैसे अपना प्रभाव बढता गया, उसके साथ-साथ अपने विषय में ईर्ष्या भी बढी। जिस समय अपने स्वयसेवक प्राणों की बाजी लगाकर लोगों की रक्षा कर रहे थे, उसी समय हमारे विरुद्ध निपट झूठा प्रचार प्रारभ हुआ। कुछ दलों ने यह कहना प्रारभ किया कि सघवालों ने ही पजाब में हत्या-सत्र शुरू किया। अगर ये सघवाले न होते तो सर्वत्र शाति रहती। एक प्रकार से उनका कहना ठीक है। बिल्कुल शाति रहती, क्योंकि अगर सघ न होता तो सारे लोग भेड-बकरी की तरह मारे गए होते। यह अपप्रचार करनेवाले स्वय को देशभक्त कहलाते हैं। वास्तविक बात तो यह

है कि उन्हें भय हुआ कि यदि संघकार्य बढ़ा और प्रभावी हुआ तो अपना स्थान कैसे टिकेगा?

यह अपप्रचार विफल होने के बाद उन्होंने कहना प्रारंभ किया कि ये संघवाले जबरदस्ती सत्ता हस्तगत करेंगे। ये लोग अत्याचारी, धर्मांध, गुप्त काम करनेवाले और धोखेबाज हैं। बार-बार इस प्रकार के प्रचार से बकरी को कुत्ता समझनेवाले ब्राह्मण के समान लोगों की मनःस्थिति हो गई। अंत में उस ब्राह्मण के समान नेता ऐसा मानने लगे कि सचमुच में संघ भयंकर और धोखा देनेवाला है। तभी उन्हें एक मौका मिला और उन्होंने संघ पर प्रतिबंध लगा दिया।

वे लोग यह बात भली-भाँति जानते थे कि प्रतिबंध लगाते समय संघ पर जो आरोप लगाए गए थे, वे सब असत्य थे। लेकिन आज तक उन्हीं असत्य आरोपों को दुहराया जाता है। उसका केवल एक ही कारण है। मनुष्य आदतों का दास होता है, वह आदत से मजबूर होता है।

हरिश्चंद्र बड़े सत्यवादी थे और कर्ण प्रख्यात दानी थे, परंतु उसके लिए उन्हें कितने कष्ट सहन करने पड़े? हमने भी विचार किया कि अब कष्ट सहन करते हुए हमें आंदोलन करना चाहिए। अपना आंदोलन क्या था? तो शाखा फिर से प्रारंभ करना, प्रतिबंध समाप्त करने के लिए उच्च स्वर से माँग करना और यह सब शांतिपूर्ण मार्ग से करना, क्योंकि सरकार अपनी ही होने के कारण हम न्याय की माँग कर सकते हैं, पर उससे लड़ाई नहीं कर सकते।

श्री दाणी जी ने आदेश दिया और जादू की छड़ी घुमाने के समान संघकार्य पूर्ववत् प्रारंभ हुआ। लोगों ने विचार किया कि गुजरात-सौराष्ट्र में तो यह आंदोलन नहीं होगा, क्योंकि यहाँ संघकार्य छोटे प्रमाण में है, परंतु यहाँ भी स्वयंसेवकों ने जिस उत्साह से संघकार्य का पुनरारंभ किया, वह सचमुच में अतीव प्रशंसनीय था। परमेश्वर की कृपा से हमें यश प्राप्त हुआ और अपना संघ सभी आरोपों से मुक्त हुआ। अनेक संघानुकूल नागरिकों के अंतःकरण की गलत धारणाएँ दूर हुई। आज संघ की ऐसी स्थिति है कि सब लोग संघ को एक महान शक्ति समझकर संघ से प्रेम करने लगे हैं। लोगों का यह प्रेम आगामी शक्ति का प्रतीक है।

अपने कार्य पर अपना प्रेम और अपने अनुशासन इत्यादि गुणों के कारण यश मिला और सत्यवादी तथा प्रामाणिक लोगों का स्नेह-संपादन

कर सके। यह गुण वृद्धिगत करते हुए, लोकसग्रह अधिकाधिक गति से करने का हमने निश्चय किया है। यही आपके समक्ष कथन करने के लिए मैं यहॉ आया हूँ।

२२ प्रशसा का विष

(मदुरै १७ दिसबर १९४९)

जब कभी इस प्रकार के अवसर आते हैं, मैं कुछ अस्वस्थ सा हो जाता हूँ। मन में यह सीख गहरे तक पैठी हुई है कि मनुष्य को अपनी सपूर्ण शक्ति समाज के लिए समर्पित करनी चाहिए, न कि अपने नाम के लिए। परमात्मा की कृपा से मैं ऐसे व्यक्तियों के सपर्क में आया, जो वास्तव में महान थे। मैंने ऐसे लोगों का साक्षात्कार किया है, जिन्होंने सपूर्ण जीवन को पूर्ण श्रद्धा-भक्ति से समर्पित कर दिया था। उनके चरणों में बैठकर यह भाव ग्रहण करने का सौभाग्य मुझे मिला कि जनसेवा तथा जनकल्याण के लिए कार्य करने का व्रत लेनेवाले को प्रसिद्धि से दूर रहना चाहिए। इसी कारण जब प्रसिद्धि का, सम्मान का, कार्य के प्रदर्शन का, ऐसा अवसर आता है, तब मैं असहज हो जाता हूँ, क्योंकि भयकर विष पचाना एक बार सहज है, पर सम्मान ओर प्रसिद्धि के मोह पर विजय पाना कठिन है।

मेरे मन में यह विचार आया कि इसे व्यक्तिश क्यों लें? लेटर-बॉक्स के समान कार्य करें। उसमें पत्र डाले जाते हैं। कुछ महत्त्वपूर्ण भी होते हैं। पर लेटर-बॉक्स को उनसे क्या लेना देना? वह तो एक माध्यम है, जिसके द्वारा पत्र उचित स्थान पर पहुँच जाता है। इसी प्रकार यह जो सम्मान आदि दिया गया, मैं उस कार्य को समर्पित करता हूँ, जो करने का मुझे सौभाग्य मिला, जिसका मैं प्रतिनिधित्व करता हूँ।

विष पचनीय, पर प्रशसा नहीं

भगवान शकर ने इस जगत् को बचाने के लिए कालकूट का प्राशन किया था। उसे पचा लिया। उनपर उसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। सृष्टि की रक्षा हुई, लेकिन वही भगवान स्तुति को पचा नहीं सके। भस्मासुर द्वारा की गई स्तुति से प्रसन्न होकर उसे वरदान दे दिया। जब भगवान की ऐसी स्थिति होती है, तब साधारण व्यक्ति की बात ही क्या? तात्पर्य यह है कि

स्तुति-वर्षा मानव के विकास के मार्ग का एक अत्यंत भीषण अवरोध है। मेरी उस परमपिता से प्रार्थना है कि मुझे इस स्तुतिगान से बचाए। यह जितनी आकर्षक व मोहमयी है, उतनी ही मारक भी है।

परमात्मा की कृपा से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य के संपर्क में आने का मुझे सौभाग्य मिला। यह ऐसा कार्य है, जो बगैर किसी शोर-शराबे अथवा विज्ञापन से पूरी तरह दूर रहकर शांतिपूर्वक करना है। आप सभी जानते होंगे कि हमारा कार्य, जो विस्तृत रूप से देशभर में चल रहा है, उसके पीछे संघ-संस्थापक का यही समर्पण भाव था। वे चिकित्साशास्त्र का अध्ययन कर उपाधि प्राप्त कर चुके थे। उन्होंने अपनी उन्नति के लिए उसे व्यवसाय के रूप में स्वीकार नहीं किया, अपितु अपने बंधुओं की उन्नति के लिए चौबीसों घंटे प्राणपण से जूझते रहे।

निःस्वार्थ सेवाभाव का अर्थ केवल समाजसेवा ही नहीं है। इसका अर्थ यह भी है कि व्यक्ति अपने नाम की प्रसिद्धि या मान-सम्मान के लिए काम नहीं करता। उसके लिए प्रयत्न भी नहीं करता। वह तो इन सारी बातों से दूर रहता है।

हम अपने संघ का कार्य कोई प्रसिद्धि किए बगैर करते हैं। अपने सार्वजनिक कार्यक्रमों की हमने कभी चिंता नहीं की, पर हमसे सहानुभूति रखनेवाले कुछ समाचार-पत्रों ने हमारे कार्यक्रमों को प्रसिद्धि दी। हम वक्तव्य जारी नहीं करते। सामाजिक कार्य की गतिविधियों को प्रस्तुत करने की औपचारिकता हम नहीं मानते। अपने संस्कारों के अनुसार हम शांतिपूर्वक अपना कार्य करते रहते हैं। हमारे संस्कार हमें इस स्तुति तथा सम्मान से दूर रहकर जनसेवा करने के लिए उद्यत करते हैं। हमारे कार्य का यह स्वभाव ही बन चुका है।

गलत दृष्टिकोण के गलत निष्कर्ष

दुर्भाग्य से हमारे इस शांतिपूर्ण, संयमित व्यवहार को हमारी गुप्त कार्यवाही समझा जाने लगा। आपमें से कई लोग जानते होंगे कि हमपर कुछ आरोप लगाए गए। इनमें एक है गुप्त रूप से कार्य करना। यह समझने की कोशिश नहीं की गई कि शांतिपूर्वक किए जानेवाले कार्य और भूमिगत रहकर किए जानेवाले कार्य में अंतर है। दुर्भाग्यवश देश में इस भूमि की संस्कृति के विपरीत वातावरण है। यही माना जा रहा है कि बाहरी देशों से आई कार्यपद्धति ही सही है। जिस कार्य में भारतीयत्व की गंध हो, उससे

दूर रहना चाहिए। इसी कारण हमारे कार्य को गलत ढग से देखा गया।

आज का यह सम्मान इस कार्य का सम्मान है, मेरा नहीं। मैं तो एक निमित्त मात्र हूँ। आजकल लोग यह कहने के आदी हो रहे हैं कि फला व्यक्ति का रहना जरूरी है। उसका स्थान दूसरा नहीं ले सकता। यदि वास्तव में यह स्थिति है तो मैं कहूँगा कि जनता के बीच जागृति के कार्य की जो चर्चा हम करते हैं, वह व्यर्थ है। ६०-७० वर्ष के कार्य के बाद भी एक व्यक्ति के ईद-गिर्द कार्य को घिरा पाते हों तो कहना होगा कि सारा देश अज्ञान में डूबा है।

जनता की महानता एक-दो या एकाध दर्जन व्यक्तियों की महत्ता में ही सीमित नहीं रहती। वे तो महानता के सूचक होते हैं कि व्यक्ति कितना महान बन सकता है। वे केवल इसका सकेत देते हैं, जनता को महान नहीं बनाते। आचार्य शकर आए, बुद्ध समान महान व्यक्ति अवतरित हुए, शिवाजी, अशोक समान महान योद्धा हुए। वर्तमान काल में लोकमान्य तिलक, महात्मा गॉधी जैसे व्यक्ति हो गए। ये असाधारण व्यक्ति इसी बात के प्रतीक रहे हैं कि व्यक्ति कितना ऊँचा उठ सकता है।

हमे यह स्पष्ट करना होगा कि यहॉ निवास करने वाले अहिदू का एक राष्ट्रधर्म अर्थात् राष्ट्रीय उत्तरदायित्व है, एक समाजधर्म अर्थात् समाज के प्रति कर्तव्यभाव है एक कुलधर्म अर्थात् अपने पूर्वजो के प्रति कर्तव्यभाव है। केवल व्यक्तिगत धर्म व्यक्तिगत निष्ठा का पथ अपनी अध्यात्मिक प्रेरणा के अनुरूप चुनने मे वह स्वतत्र है। वह किसी भी पथ जो उसकी आध्यात्मिक भूख को शात करे को स्वीकार कर सकता है। शेष के लिए उसे राष्ट्रीय धारा के साथ एक होकर रहना ही चाहिए। यही वास्तविक एकीकरण है।

— श्री गुरुजी

स्तुति-चर्चा मानव के विकास के मार्ग का ए
मेरी उस परमपिता से प्रार्थना है कि मुझे
जितनी आकर्षक व मोहमयी है, उतनी ही

परमात्मा की कृपा से राष्ट्रीय स्वय
आने का मुझे सौभाग्य मिला। यह ऐसा का
अथवा विज्ञापन से पूरी तरह दूर रहकर
जानते होंगे कि हमारा कार्य, जो विस्तृत
उसके पीछे सघ-सस्थापक का यही समर्प
अध्ययन कर उपाधि प्राप्त कर चुके थे।
व्यवसाय के रूप में स्वीकार नहीं किया
के लिए चौबीसों घटे प्राणपण से जूझते

नि स्वार्थ सेवाभाव का अर्थ ये
अर्थ यह भी है कि व्यक्ति अपने नाम
काम नहीं करता। उसके लिए प्रयत्न
बातों से दूर रहता है।

हम अपने सघ का कार्य को
सार्वजनिक कार्यक्रमों की हमने कभी
रखनेवाले कुछ समाचार-पत्रों ने ह
वक्तव्य जारी नहीं करते। सामाजिक
की औपचारिकता हम नहीं मानते
शातिपूर्वक अपना कार्य करते रहते हैं
सम्मान से दूर रहकर जनसेवा करने
का यह स्वभाव ही बन चुका है।

गलत दृष्टिकोण के गलत निष्कर्ष

दुर्भाग्य से हमारे इस शातिपूर्ण, स
कार्यवाही समझा जाने लगा। आपमें से कई
कुछ आरोप लगाए गए। इनमें एक है गुप्त रूप
की कोशिश नहीं की गई कि शातिपूर्वक किए जाने
रहकर किए जानेवाले कार्य में अतर है। दुर्भाग्यवश
सस्कृति के विपरीत वातावरण है। यही माना जा रहा
से आई कार्यपद्धति ही सही है। जिस कार्य में भारतीयत्व

युद्धस्व भारत

भाग - १

(चीन व पाकिस्तान से युद्ध और बाँग्लादेश-मुक्ति के लिए हुए संघर्ष के समय श्री गुरुजी का मार्गदर्शन)

१ चीन - भारत युद्ध

(२ फरवरी १९६० को मुंबई मे चीनी आक्रमण के संबंध मे महाराष्ट्र के पत्रकारो के साथ वार्तालाप)

प्रश्न आप सर्वत्र भ्रमण करते हैं। उत्तर भारत का भी भ्रमण किया होगा। हाल ही में चीन ने उस भाग में जो आक्रमण किया है, उसकी उधर के लोगों पर क्या प्रतिक्रिया हुई?

उत्तर हाँ, आज यह एक समस्या है। लेकिन मेरी समझ में यह नहीं आ रहा कि आप लोगों को चीन द्वारा किए गए आक्रमण का समाचार इतनी देर से क्यों मिला? जबकि मुझे तो इसका समाचार ४-५ वर्ष पूर्व ही प्राप्त हो गया था। उस समय मैंने सार्वजनिक भाषणों में उसका उल्लेख भी किया था। तब कोलकाता के एक दैनिक पत्र के संपादक ने लिखा था कि 'यह गैर-जिम्मेदारी से ऐसी बातें करते हैं। यदि ऐसा होता तो क्या सरकार को यह पता नहीं लगता?' अब आक्रमण का समाचार आने पर उसने कहा कि आपका कहना ही ठीक था।

दुःख की बात यह है कि आज भी यह आक्रमण जारी है। पं नेहरू ने कहा था कि ऐसी परिस्थिति में कोई भी वार्ता नहीं की जाएगी, परंतु वार्ता करने की उनके मन की तैयारी प्रकट हो रही है। पहले का निर्णय बदल चुका है और अब चाऊ-एन-लाई से



युध्यस्व भारत

भाग - १

(चीन व पाकिस्तान से युद्ध और बाँग्लादेश-मुक्ति के लिए हुए संघर्ष के समय श्री गुरुजी का मार्गदर्शन)

---

१ चीन - भारत युद्ध

(२ फरवरी १६६० को मुंबई में चीनी आक्रमण के संबंध में महाराष्ट्र के पत्रकारों के साथ वार्तालाप)

प्रश्न आप सर्वत्र भ्रमण करते हैं। उत्तर भारत का भी भ्रमण किया होगा। हाल ही में चीन ने उस भाग में जो आक्रमण किया है, उसकी उधर के लोगों पर क्या प्रतिक्रिया हुई?

उत्तर हाँ, आज यह एक समस्या है। लेकिन मेरी समझ में यह नहीं आ रहा कि आप लोगों को चीन द्वारा किए गए आक्रमण का समाचार इतनी देर से क्यों मिला? जबकि मुझे तो इसका समाचार ४-५ वर्ष पूर्व ही प्राप्त हो गया था। उस समय मैंने सार्वजनिक भाषणों में उसका उल्लेख भी किया था। तब कोलकाता के एक दैनिक पत्र के संपादक ने लिखा था कि 'यह गैर-जिम्मेदारी से ऐसी बातें करते हैं। यदि ऐसा होता तो क्या सरकार को यह पता नहीं लगता?' अब आक्रमण का समाचार आने पर उसने कहा कि आपका कहना ही ठीक था।

दुःख की बात यह है कि आज भी यह आक्रमण जारी है। पं. नेहरू ने कहा था कि ऐसी परिस्थिति में कोई भी वार्ता नहीं की जाएगी, परंतु वार्ता करने की उनके मन की तैयारी प्रकट हो रही है। पहले का निर्णय बदल चुका है और अब चाऊ-एन-लाई से

... ने की बात लगभग पक्की हो चुकी है। यह सब अत्यंत ... हैं। वे आक्रमण करते जाएँ और हम सब अपमान ... वार्ता किया करें, यह ठीक नहीं।

... के प्रथम प्रस्ताव को स्वीकार करने का अर्थ है कि हम ... पीछे हट जाएँ, अर्थात् आप अपना प्रदेश छोडकर चले ... आपके प्रदेश से पाँच मील पीछे हट जाएँगे, याने वे तो ... में कायम ही रहेंगे।

... पूर्व जब आपने इस बात का रहस्योद्घाटन किया था, ... क्या आपसे सरकार ने कुछ पूछा था या आपने स्वयं ही ... या था?

... की आवश्यकता ही क्या थी? उसी अवधि में ... निकलने वाले मासिक *'कल्याण'* में *श्री मिरजकर* ने ... लिखा था कि कैलाश व मानसरोवर की यात्रा करते ... की चौकियाँ पडती हैं और उन चौकियों पर ... सामान की तलाशी लेने के पश्चात् ही उन्हें आगे ... है।

... में यह प्रकाशित हुआ था कि प नेहरू को भी ... या था?

... के क्षेत्र में बना हुआ मार्ग काफी पहले ही तैयार ... संभवत यह सन् १९५०-५१ में बनाया गया था। सन् ... भारी वाहनों का यातायात हो गया, ... यह बात आई। मैंने उसी स ... था कि ... पर है। तब लोगों ने उसपर ... । ... कि भूटान के भू-भाग को ...

... है।

...

... यह

... की दशा

... है।

... थे।

हुआ

आदि सब कुछ है, पर क्या उसमें कहीं भी यह ध्वनित होता है कि चीन का आक्रमण होने की अवस्था में वे भारत का साथ देंगे? उससे ऐसा प्रकट नहीं होता। यह स्वाभाविक भी है। आज तो उनके मन्त्रिमडल में ही चीन के कुछ मित्र विद्यमान हैं। ऐसी कोई भी बात न बोलने के लिए उनका प्रधानमत्री पर दबाव है और वह दबाव निरतर बढता जा रहा है। उस देश (नेपाल) में भिन्न प्रकार से चीनियों की घुसपैठ जारी है। ऐसी अवस्था में उनके सामने यह प्रश्न है कि जो स्वय अपने ही भू-भाग की रक्षा नहीं कर सकते, क्या उनके ऊपर आश्रित रहा जाए? ऐसी अवस्था में चीन की शरण में जाने में ही वे अपनी भलाई सोचते हैं। यदि ऐसा हुआ तो तराई प्रदेश पार कर चीन को प्रत्यक्ष भारत के मैदानी क्षेत्र में उतरने में कितनी देर लगेगी?

प्रश्न चीन व ब्रह्मदेश का समझौता हुआ है। बर्मा (म्यामार), इडोनेशिया आदि देशों से इस प्रकार की वार्ता और समझौते करने में चीन का मतव्य क्या हो सकता है?

उत्तर चीन का प्रयत्न बर्मा व अन्य देशों से समझौता कर भारत को अकेला कर देने का है। वास्तविक रूप से इसके पूर्व भी चीन और बर्मा की हुई वार्ता असफल रही थी। मैकमोहन रेखा को अमान्य करके बर्मा के कुछ ग्राम चीन को सौंपने की बात करने पर ही तत्कालीन म्यामार के प्रधानमत्री को त्यागपत्र देना पडा था। अब प्रत्यक्षत क्या वार्ता हुई यह तो मुझे नहीं मालूम, लेकिन ऐसा कहते हैं कि उसमें पचशील का भी उल्लेख है। अब 'पचशील' तो शिष्टाचार का शब्द मात्र रह गया हे। यदि यह बात सत्य निकलती है, तभी इसे लिया जाए, अन्यथा निकाल दिया जाए।

आज सर्वत्र यही भाषा बोली जा रही है कि सरक्षणक्षम होने के लिए पहले देश की आर्थिक अवस्था सुधारनी चाहिए। उसके लिए तृतीय पचवर्षीय योजना को सफल करना चाहिए, परतु आर्थिक स्थिति सुधारने से सरक्षण-क्षमता बढती ही है, ऐसी बात तो नहीं। सकट भी कम नहीं होते। उल्टे इस आवेश में अपने मन में अव्यवस्था उत्पन्न होती है।

प्रश्न चीन के आक्रमण का सामना कैसे किया जा सकेगा? क्या आपको ऐसा लगता है कि वार्ता के लिए कोई गुजाइश ही नहीं है?

वार्ता करने की बात लगभग पक्की हो चुकी है। यह सब अत्यंत अपमानजनक हैं। वे आक्रमण करते जाएँ और हम सब अपमान सहन कर वार्ता किया करें, यह ठीक नहीं।

चीन के प्रथम प्रस्ताव को स्वीकार करने का अर्थ है कि हम दोनों ५ मील पीछे हट जाएँ, अर्थात् आप अपना प्रदेश छोडकर चले जाइए, हम आपके प्रदेश से पाँच मील पीछे हट जाएँगे, याने वे तो हमारी भूमि में कायम ही रहेंगे।

प्रश्न चार-पाँच वर्ष पूर्व जब आपने इस बात का रहस्योद्घाटन किया था, उस समय क्या आपसे सरकार ने कुछ पूछा था या आपने स्वयं ही उसे कुछ बताया था?

उत्तर नहीं। मेरे बताने की आवश्यकता ही क्या थी? उसी अवधि में *गोरखपुर से निकलने वाले मासिक 'कल्याण' में श्री मिरजकर* ने एक लेख में लिखा था कि कैलाश व मानसरोवर की यात्रा करते समय रास्ते में चीन की चौकियाँ पडती हैं और उन चौकियों पर यात्रियों के संपूर्ण सामान की तलाशी लेने के पश्चात् ही उन्हें आगे जाने दिया जाता है।

प्रश्न समाचार-पत्रों में तो यह प्रकाशित हुआ था कि पं. नेहरू को भी वहाँ पर रोका गया था?

उत्तर वास्तव में लद्दाख के क्षेत्र में बना हुआ मार्ग काफी पहले ही तैयार हो चुका था। संभवत: वह सन् १९५०-५१ में बनाया गया था। सन् १९५४ में उसपर भारी वाहनों का यातायात चालू हो गया, तब हमारे ध्यान में यह बात आई। मैंने उसी समय कहा था कि चीन की आँख लद्दाख पर है। तब लोगों ने उसपर ध्यान नहीं दिया। अब भी मैंने कहा है कि भूटान के भू-भाग को उदरस्थ करने के लिए चीन प्रयत्नशील है।

प्रश्न उदरस्थ का अर्थ?

उत्तर उदरस्थ का अर्थ यह है कि दबाव की नीति से उसे हडप लेना। चीनी आक्रमण की दशा में वहाँ के लोग चीन की शरण में जाने की बात सोचने लगे हैं। नेपाल की भी वही अवस्था है। अभी-अभी वहाँ के प्रधानमंत्री आए थे। उनका भाषण एवं पं. नेहरू के साथ उनका संयुक्त वक्तव्य प्रकाशित हुआ है। उसमें आर्थिक मदद, पंचशील-घोषणा

आदि सब कुछ है, पर क्या उसमें कहीं भी यह ध्वनित होता है कि चीन का आक्रमण होने की अवस्था में वे भारत का साथ देंगे? उससे ऐसा प्रकट नहीं होता। यह स्वाभाविक भी है। आज तो उनके मन्त्रिमडल में ही चीन के कुछ मित्र विद्यमान हैं। ऐसी कोई भी बात न बोलने के लिए उनका प्रधानमत्री पर दबाव है और वह दबाव निरतर बढता जा रहा है। उस देश (नेपाल) में भिन्न प्रकार से चीनियों की घुसपैठ जारी है। ऐसी अवस्था में उनके सामने यह प्रश्न है कि जो स्वय अपने ही भू-भाग की रक्षा नहीं कर सकते, क्या उनके ऊपर आश्रित रहा जाए? ऐसी अवस्था में चीन की शरण में जाने में ही वे अपनी भलाई सोचते हैं। यदि ऐसा हुआ तो तराई प्रदेश पार कर चीन को प्रत्यक्ष भारत के मैदानी क्षेत्र में उतरने में कितनी देर लगेगी?

प्रश्न चीन व ब्रह्मदेश का समझौता हुआ है। वर्मा (म्यामार), इडोनेशिया आदि देशों से इस प्रकार की वार्ता और समझौते करने में चीन का मतव्य क्या हो सकता है?

उत्तर चीन का प्रयत्न बर्मा व अन्य देशों से समझौता कर भारत को अकेला कर देने का है। वास्तविक रूप से इसके पूर्व भी चीन और बर्मा की हुई वार्ता असफल रही थी। मैकमोहन रेखा को अमान्य करके बर्मा के कुछ ग्राम चीन को सौंपने की बात करने पर ही तत्कालीन म्यामार के प्रधानमत्री को त्यागपत्र देना पडा था। अब प्रत्यक्षत क्या वार्ता हुई यह तो मुझे नहीं मालूम, लेकिन ऐसा कहते हैं कि उसमें पचशील का भी उल्लेख है। अब 'पचशील' तो शिष्टाचार का शब्द मात्र रह गया है। यदि यह बात सत्य निकलती है, तभी इसे लिया जाए, अन्यथा निकाल दिया जाए।

आज सर्वत्र यही भाषा बोली जा रही है कि सरक्षणक्षम होने के लिए पहले देश की आर्थिक अवस्था सुधारनी चाहिए। उसके लिए तृतीय पचवर्षीय योजना को सफल करना चाहिए, परतु आर्थिक स्थिति सुधारने से सरक्षण-क्षमता बढती ही है, ऐसी बात तो नहीं। सकट भी कम नहीं होते। उल्टे इस आवेश में अपने मन में अव्यवस्था उत्पन्न होती है।

प्रश्न चीन के आक्रमण का सामना कैसे किया जा सकेगा? क्या आपको ऐसा लगता है कि वार्ता के लिए कोई गुजाइश ही नहीं है?

उत्तर राजनीति में वार्ता का भी मार्ग र ले तो वार्ता करने में क्या हर्ज है?
का आधार चाहिए, तभी वार्ता क्या तो तिब्बत पर अधिकार छोडने
का शत्रु को अनुभव हो सके, बात तो यह है कि भारत ने प्रारंभ

प्रश्न यदि चीन अपनी सीमा मान्य च स्वीकार कर भारी गलती की है।

उत्तर कुछ भी नहीं, पर यदि ऐसा प्रधानमंत्री ने सर्वत्र तिब्बत चीन का
जैसा ही नहीं क्या? दुर्दैव की र उसकी स्वायत्तता को अस्वीकार
में ही तिब्बत पर चीन का प्रभु ऐसा नहीं कहा। उन्होंने तो संधि
अब तक के हुए पत्र-व्यवहार रखी थी। हम लोगों ने ही उसे
भूभाग है, ऐसा ही उल्लेख यदि ठीक प्रकार से बात की जाती
किया है। अंग्रेजों ने भी कभी आती। इसीलिए आचार्य कृपलानी ने
करके वहाँ पर अपनी सेना तिब्बत पर किए गए बलात्कार जैसे
वापस बुला लिया। प्रारंभ में ही जन्म हुआ है'।
तो सेना हटाने की नौबत नहीं ग देकर ठीक किया या गलत?
बिलकुल ठीक ही कहा है कि । आतिथ्य भारत का परंपरागत धर्म
जघन्य पाप में से पंचशील का के प्रश्न पर कितना सहयोग देना

प्रश्न भारत ने दलाई लामा को शर र अंतर्राष्ट्रीय दबाव डालने में किस

उत्तर उसमें तो कोई गलती नहीं हुई य विचार करना चाहिए था। इसके
है, पर बाद में दलाई लामा य के विचारार्थ पेश होने पर हमने
चाहिए, इसका उपयोग चीन प
प्रकार किया जा सकेगा, इसक ख्रुश्चेव बाराशिलोव आदि रूसी
विपरीत राष्ट्र-संघ में इस विष आ रहे हैं। चीन व रूस की मित्रता
उसका विरोध किया। चलाने के लिए ही तो ये नेता यहाँ
ने भी यह नहीं कहा कि 'चीन

अब इस अवस्था में भाग्यपूर्ण है। ऐसा ही कहा गया है,
नेतागण एक-एक करके भारत ने ही ये प्रश्न उत्पन्न हुए हैं। इसमें
है। अत भारत पर अपना जादू वार्ता से ही इस प्रश्न का निपटारा
नहीं आते? इनमें से किसी क्रमण का तो कहीं भी उल्लेख है ही
आक्रमणकारी है। यह अत्यंत दुःख नहीं कहा।
कि 'सीमा-संबंधी गलतफहमी र
विशेष कुछ नहीं है। आपस की
कर लेना चाहिए'। चीन के आक्र
नहीं। उन्होंने उसे अतिक्रमण

सरकार पहले से ही सीमा के प्रश्न
वास्तविक रूप से भारत सव हो रहा है। अपनी सीमाओं
पर उदासीन रही है, इसलिए यह । इसके विपरीत अपने प्रधानमत्री
के सबध में हमें सजग रहना होगाका तक नहीं उपजता, सब कुछ
कहते हैं कि वहाँ तो घास का तिही मीमा के सबध में ये उद्गार
वर्फमय ही है, इत्यादि । अपनी इच भूमि के बारे में भी इस प्रकार
कितने दु खद हैं। स्वदेश की एक ना अपने देश का प्रत्यक्ष अपमान
की बात करना अनुचित है। यह ।
है।
ने क्या लगानी चाहिए?

प्रश्न चीन से वाता ही करनी हो तो श पर ही कोई वार्ता हो सकती है,

उत्तर प्रथम आक्रमण वापस लो, यह होने बताना चाहिए। वास्तव में इस
अन्यथा नहीं, यह स्पष्ट रूप से न्यता नहीं रहती, अन्यथा सधि
प्रकार की सधियों को कोई विशेष से हथिया लिया होता? सधियों
होते हुए भी चीन ने तिब्बत को ते हैं। ससार उसे नहीं मानता।
को हम अनावश्यक महत्त्व प्रदान कअनुसार ससार व्यवहार करता है।
जो स्वार्थ के लिए पोपक हो, उसी के के उपदेशों के कारण?

प्रश्न ऐसा क्यों होता है? क्या गाँधीवाद ।? अग्रेजों के समय तिब्बत में

उत्तर गाँधीवाद से भी हिसा टल सकी क्या सेना हटा लेने से क्या हिसा
सेना रहती थी। अब हम लोगों द्वार
टल सकी? मण को सेना की सहायता से

प्रश्न जनरल करिअप्पा कहते हैं कि आक्र वैसा क्यों नहीं करते? जनरल
समाप्त करना चाहिए। फिर प नेहरू कल्पना नहीं है, ऐसा कहना
करिअप्पा को आज की परिस्थिति की
ठीक होगा क्या? । भी हम लोगों के साथ यही

उत्तर यह सत्य नहीं है। विभाजन के समय कि विभाजन कदापि स्वीकार
हुआ था। उस समय हमने कहा था ने दीजिए। चाहे तो एक बार
न करें। यदि मारपीट भी होती है तो हपड जाएँगे मुसलमान। परतु
जमकर सघर्ष हो जाने दीजिए। ठडे ', भगवान ही जाने।
उन्होंने माना नहीं। ऐसा क्यों होता है गपत्र क्यों दिया था?

प्रश्न कुछ काल पूर्व जनरल थिमैय्या ने त्या कुछ अलग कल्पना है, पर

उत्तर जनरल थिमैय्या की सेना के बारे में के उपयोग में लाने की चचा
आजकल तो सेना को रचनात्मक कार्यों

चल रही है। सुरक्षा के बारे में अपने रक्षा मन्त्री की कल्पना ही निराली है। उसमें से जनरल थिमैय्या प्रकरण उत्पन्न हुआ है।

प्रश्न पं. नेहरू को यह सब स्वीकार्य नहीं। फिर क्या किया जाए?

उत्तर जनशक्ति जगाकर उसे सतर्क रखने की आवश्यकता है। अपमान कभी भी सहन नहीं करेंगे, यह भाव जनता में जगाना होगा। राज्य-शासन तो सामयिक शक्ति है, जन-शक्ति ही स्थायी हुआ करती है। यह जन-शक्ति यदि जागृत रही तो पं. नेहरू भी उसके विरुद्ध नहीं जा सकेंगे। वे हमारा कहना मान्य करेंगे।

प्रश्न ऐसा करने के लिए कौन-सा मार्ग स्वीकार करना चाहिए– हिंसात्मक या अहिंसात्मक?

उत्तर यह प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता, क्योंकि लोग संगठित रूप से खड़े हैं, इतना दर्शनमात्र पर्याप्त है।

प्रश्न राज्यशासन पर अधिकार हुए बिना ऐसी शक्ति खड़ी हो सकती है क्या?

उत्तर हाँ, यह संभव है। ऐसे अनेक उदाहरण भी हैं। रूस और फ्रांस की क्रांति के उदाहरण अपने सामने हैं। जन-शक्ति के कारण ही वे संभव हो सकी थीं।

प्रश्न यह सब कुछ होते हुए भी यदि सरकार अपने कर्तव्य का ठीक प्रकार से निर्वाह नहीं करती, तब संघ क्या करेगा? हम लोगों को क्या करना चाहिए?

उत्तर राज्यकर्ता यदि ठीक प्रकार से नहीं चलते, तब हमें जनशक्ति जागृत करनी चाहिए। कभी-कभी आक्रमण के सम्मुख राज्यसत्ता हतप्रभ हो जाती है। वह यदि टिक नहीं सकती तो जनता को संघर्ष के लिए सिद्ध रहना चाहिए। युद्ध में अच्छे-बुरे सभी प्रसंग आते रहते हैं। मान लीजिए कि कोई गड़बड़ ही हो जाए तब क्या होगा? इसलिए केवल राज्य-शक्ति पर आश्रित रहकर काम नहीं होगा।

सच पूछा जाए तो सरकार को दृढ़तापूर्वक खड़ा होना चाहिए। यदि वैसा नहीं होता तो जनता इस बात के लिए दबाव डालकर स्पष्ट रूप से कहे कि आक्रमण वापस लिए बिना किसी भी प्रकार की समझौता वार्ता न हो। अपनी ढुलमुल नीति त्याग कर

आक्रमण का दृढतापूर्वक सामना करने के लिए यदि राजशक्ति तत्पर होती है, तभी जनता उसके साथ खडी हो।

प्रश्न चीन के आक्रमण के विरुद्ध आपने कौन-सा कार्यक्रम अपनाया है?

उत्तर हम केवल कार्यक्रमों की योजना नहीं करते, क्योंकि वे तथा उनसे उत्पन्न उत्साह भी तात्कालिक ही रहता है। अभी कुछ दिन पूर्व मोर्चे बने, भाषण दिए गए और पुतले जलाने के कार्यक्रम हुए। अब सब वातावरण ठडा पड गया है। अत उसके लिए स्थायी सगठित शक्ति खडी करनी होगी।

प्रश्न यदि सरकार ने चीनी आक्रमण को समाप्त करने का निश्चय किया तो क्या आप उसे सहयोग देंगे?

उत्तर अवश्य। हमने ऐसी घोषणा भी की है। अन्य सभी दल सहयोग देंगे। केवल एक ही दल विरोध करेगा, वह है साम्यवादी दल।

२ शासन से सहकार्य का आह्वान

(सन् १९६२ मे चीन के साथ युद्ध छिड जाने पर २६ अक्तूबर १९६२ को नागरिको और विशेष रूप से स्वयसेवको से इस वक्तव्य द्वारा आह्वान किया गया था)

देश की सुरक्षा के प्रति अक्षम्य दुर्लक्ष्य

जिस आपत्ति की सभावना देखकर गत कई वर्षो से हम लोग समस्त देशवासियों को चेतावनी देने का स्वकर्तव्य कर रहे थे, वह अब स्पष्ट रूप से जनसाधारण के सम्मुख आ खडी हुई है। इस चेतावनी की ओर आज तक सबने दुर्लक्ष्य किया। शासन ने भी ध्यान न देकर अत्यत घातक पग उठाना ही उचित समझा। तिब्बत का चीन को समर्पण कर शत्रु को अपने द्वार पर बुलाना तथा अपनी रक्षा की प्राकृतिक प्राचीर हिमाचल के अचल में बेरोक-टोक चीन के प्रवेश को मान्यता देकर अपनी दुर्गम सीमा की उपयुक्तता समाप्त करना, उस अभेद्य क्षेत्र को शत्रु का दुर्गम आश्रय-स्थान एव आक्रमण-प्रक्षेप का गढ बनने देना, भारत के अभिन्न हृदय आत्मीय नेपाल, सिक्किम, भूटान को पूर्णतया विरोधक नहीं तो

उदासीन बना सकनेवाली अनिष्ट नीति पर चलते रहना आदि नीतियाँ कितनी घातक सिद्ध हुई हैं तथा हो रही हैं, यह अब सुस्पष्ट हो चुका है। सीमा-सुरक्षा का समुचित प्रबध भी नहीं रहा। जागतिक एशियाई सद्भाव एव भ्रातृभाव की मृगमरीचिका पर भ्रात चित्त से विश्वास रखकर यह सर्वोच्च कर्तव्य उपेक्षित तथा दुर्लक्षित रहने दिया गया। देश की सुरक्षा का यह दुलक्ष्य अक्षम्य है।

अभेद्य शक्ति के रूप मे खडे हो

किंतु अब प्रबल शत्रु देश की सीमा में घुस आया है। इस समय पुरानी भूलों को दोहराते रहकर आपस में टीका-टिप्पणी या छींटा-कसी करना बहुत भारी भूल होगी। अब सब राष्ट्रभक्तों को छोटे-मोटे आपसी मतभेद भुलाकर, कधे से कधा मिलाकर एक अभेद्य शक्ति के रूप में खडा होना अनिवार्य है।

हमें शत्रु को परास्त कर सीमा-पार धकेलकर, सीमा को नित्य सुसरक्षित रखने के लिए अपने पूर्ण बल को प्रयुक्त करना होगा। प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश के सैनिक बल का सहयोगी एव पृष्ठपोपक बनने के लिए अपनी सपूर्ण शक्ति को काम में लाना आवश्यक है। प्रत्येक मनुष्य सैनिक नहीं बन सकता, न बनने की आवश्यकता है, तथापि शासन के आह्वान पर सक्षम शरीर के सब व्यक्तियों को सेना के विभिन्न विभागों में काम करने के लिए पर्याप्त सख्या में तत्परता से आगे आने के लिए सिद्ध रहना आवश्यक है। सर्वसाधारण समाज को अपने-अपने कर्तव्यों में पूरी लगन से जुटे रहकर सुरक्षा हेतु सब आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन में लगे रहना है। इस समय उद्योगपतियों एव व्यापारियों को लाभ की ओर दृष्टि न देकर राष्ट्ररक्षा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपनी बुद्धि तथा सपत्ति बिना हिचक लगानी चाहिए। अनुचित सग्रह-वृत्ति उसके परिणामस्वरूप वस्तुओं के मूल्य अवास्तविक रूप से बढना और जनता को जीवनोपयोगी वस्तुओं के अभाव का दु ख देकर उनकी कार्यप्रेरणा एव क्षमता को चोट पहुँचाना देश के प्रति बडा अपराध होगा। सब क्षेत्रों में काम करनेवाले कर्मचारी, श्रमिक तज्ञ आदि को अपनी बुद्धि शक्ति को पूर्ण रूप से उपयोग में लाना होगा। मालिक-मजदूर आदि सघर्ष करने का यह समय नहीं है। इस समय आलस्य, तद्रा आदि त्याग कर अपनी पूर्ण शक्ति व उत्साह काम में लगाकर उत्पादन बढाना, देश को अधिकाधिक मात्रा में स्वयनिर्भर करना श्रेष्ठ कर्तव्य है।

गियो से सावधान

यदि इस अवसर पर अवैध लाभ उठाकर उद्योगपतियों ने श्रमिकों
ा से अनुचित लाभ लेने की चेष्टा की तो भी झगडा, हडताल आदि
का अवलव न करते हुए समझौते से ही काम लेना होगा और कार्य
रोध न पडने देने के कर्तव्य का परिपालन करना होगा। सद्य
ति का खिचाव कम होते ही अन्यायकारियों से पूरा हिसाब चुकता
कते हैं, जनता को नैतिक दवाव से तथा शासन को अपनी शक्ति
म का शोषण न हो, श्रमिक सतुष्ट रह कर सोत्साह काम में जुटे
इस हेतु अत्यधिक सतर्कता बरतनी चाहिए। इस सकटकालीन
में अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए कई तत्त्व श्रमिकों को
र हडताल आदि करवाने की चेष्टा करें, यह सभव है। ये चेष्टाएँ
सहायता करनेवाली ही होंगी और उससे देश की सुरक्षा, स्वतत्रता
मान को भारी ठेस पहुँचेगी। इस असदिग्ध सत्य को पहचानकर सारे
एव श्रमिक वधु शाति तथा सुव्यवस्था भग करनेवाले, राष्ट्र
में बाधा डालनेवाले तत्त्वों से सावधान रहकर उन्हें अपने पास
भी न देने की जागरूकता रखें।

अनेक राष्ट्रविघातक तत्त्वों द्वारा इस नाजुक अवस्था का लाभ
भिन्न-भिन्न प्रकार की विनाशकारी गतिविधियों में सलग्न होने की
वना है। इनसे सावधान रहना आवश्यक है। सतर्क रहकर ऐसी सब
घटनाओं को प्रारभ में ही दवाने के लिए जनता का शासन को पूरा
प्राप्त होना चाहिए। विध्वसक कार्यवाहियाँ होने की सभावना नहीं,
नना उचित नही हैं। इधर वहुत ध्यान रखकर, ये न हो सकें, ऐसा
रना आवश्यक है। ग्राम-ग्राम में, नगरों के हर मोहल्ले में स्वयस्फूर्ति
ठेत होकर अहोरात्र इस ओर ध्यान देना, शाति तथा सुव्यवस्था
खना हम सवका कर्तव्य है।

और साहस दिखाएँ

सबसे महत्त्व का काम जनसाधारण को भयग्रस्तता, घवराहट,
वचाना है। ऐसी अनिष्ट चेष्टा कोई करे तो उसे तुरत रोकना
सकट बडा है, यह सत्य है। इसी कारण जनता का मन सतुलन,
पर विश्वास, सहकारिता तथा सकट पर निश्चय से विजय पाकर
ध्वजा जगत् में अधिकाधिक ऊँची उठाने का दृढ विश्वास उससे

भी बडा होना चाहिए।

भारत की चिरजीवी निष्ठा सर्वश्रुत है। सहस्राधिक वर्षों के भीषण आक्रमणों को परास्त कर, राष्ट्र को स्वाधीन करनेवाले देशभक्तों के लिए इस वर्तमान आक्रमण को पराभूत करना सरल है। राष्ट्र में घुसी हुई स्वार्थपरता, चारित्र्यहीनता, पदलोलुपता, लोभ, मोह, भाषादि विवाद को इस अग्नि-परीक्षा में भस्म कर विशुद्ध, सबल, उन्नत, तेजस्वी एव चिरयौवनयुक्त राष्ट्र के प्रकट होने के लिए श्रीभगवान की कृपा से ही यह धर्मयुद्ध उपस्थित हुआ है। इसके पूर्व भी इसी हेतु ऐसी ही कुछ आपदाओं से हम लोग गुजर चुके हैं। इस परीक्षा की घडी में भी हम पूर्वापेक्षा अधिक उज्ज्वल बनकर जगत् के सम्मुख खडे होंगे, इसमें रचमात्र भी संदेह नहीं है। इतनी विशाल, सर्वसामग्री की पूर्ति करनेवाली वसुधरा भारतमाता, ४५ करोड निष्ठावान उसकी सतान, गत दो महायुद्धों में अग्रेजों के लिए कठिन से कठिन प्राकृतिक परिस्थितियों में जर्मनी, जापान जैसे दु साहसी प्रबल शत्रुओं को परास्त करनेवाली अपनी उत्कृष्ट सेना अव मातृभूमि के, राष्ट्र के स्वाभाविक उत्कट प्रेम से प्रेरित होकर अपने सर्वस्व की बाजी लगाकर जूझने हेतु खडी है। यह सब अनुकूल होने पर सपूर्ण यश के सबध में सदेह रह ही नहीं सकता ।

श्रम, कर्तव्यनिष्ठा, सर्वस्वार्पण की सिद्धता, धैर्य, वीरता जीवन में उतारकर यावत्काल परिश्रम करने के लिए आबालवृद्ध सबको कटिबद्ध रहना चाहिए। यही सब देश-बधुओं से प्रार्थना है, आह्वान है।

।। भारत माता की जय।।

३ वक्तव्य

(चीन के साथ युद्धरत परिस्थिति मे ५ नवबर १९६२ को नागपुर से दिए गए इस वक्तव्य मे तिब्बत की मुक्ति और नेपाल से मधुर सबधो की आवश्यकता प्रतिपादित कर विदेश नीति मे सुयोग्य परिवर्तन का सुझाव दिया था)

शत्रु का प्रतिकार करने के स्थान पर सरकार निराशापूर्ण वक्तव्य दे रही है। वह पराजय पर पराजय झेल रही है और बुरी तरह असफल रही है। सरकार के मतानुसार और भी बुरे दिन आने अभी शेष हैं।

देशवासियों को मार्ग नहीं दीख रहा। कम से कम यह नीति राष्ट्र में आत्मविश्वास जागृत नहीं कर सकती, जिसे जगाना प्राथमिक एव अनिवार्य दायित्व है।

सरकार का यह स्पष्टीकरण कि रणक्षेत्र में चीनी सैनिकों की सख्या वहुत अधिक है एव उनके शस्त्रास्त्र श्रेष्ठ हैं। यह अत्यत उपहासास्पद विश्लेषण है। युद्ध क्षेत्र में यह तो होना ही था। हम अब तक क्या कर रहे थे?

सत्ताधिष्ठित पुरुषों का कथन है कि भौगोलिक परिस्थिति हमारे विपरीत है, किंतु इस नवीन ऐतिहासिक भौगोलिक परिस्थिति के लिए उत्तरदायी कौन है? तिव्वत पर कभी हमारा प्रभाव था। हमने उसे चीन को उदरस्थ कर जाने दिया। यदि आज भौगोलिक परिस्थितियाँ विपरीत हैं तो उसके लिए पूर्ण रूप से दोषी अपनी सरकार है।

तिव्वत पर चीन का अधिराज्यत्व स्वीकार करना हमारी वहुत बडी भूल थी। अब, जबकि चीन ने पचशील सधि को अस्वीकृत कर दिया है और वह हमारी सीमाओं का अतिक्रमण कर रहा है, हमें तिब्वत को स्वाधीन कराने का प्रयास करना चाहिए।

इस कथन का कोई अर्थ नहीं है कि हम केवल अपनी रक्षा करेंगे। हमें युद्ध का विस्तार शत्रु के प्रदेश में करना चाहिए। चीन के साथ सम्मानजनक एव औचित्यपूर्ण सधि उस समय तक सभव नहीं है, जब तक चीन का कुछ प्रदेश हमारे अपने अधिकार में न हो। चीन अन्य कोई तर्क नहीं समझता।

हम शस्त्रास्त्र-उत्पादन में आत्मनिर्भर बनने तक प्रतीक्षा नहीं कर सकते। हमें शस्त्रास्त्रों की, वे जहॉ से भी उपलव्ध हो सकें, प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। मैं नहीं समझता कि इस विकराल सकट की घडी में मित्र देश हमारे द्वारा आधुनिकतम शस्त्रास्त्रों को क्रय करने में वाधक सिद्ध होंगे।

यदि जर्मनी प्रथम महायुद्ध के कुछ ही समय पूर्व ब्रिटेन से वदूकों को बडी सख्या में क्रय कर सकता है और फ्रास द्वितीय महायुद्ध के पहले जर्मनी के हाथ टैंक बेच सकता है, तो हम अपनी इच्छानुसार शस्त्रास्त्र क्यों नहीं क्रय कर सकते? आखिर कठिनाई क्या है? कठिनाई यही है कि हम वास्तविक शक्ति की तुलना में लबी-चौडी वार्ताओं को अधिक महत्त्व देते हैं।

उत्कल विधानसभा ने एक प्रस्ताव स्वीकार कर केंद्र एवं राज्यों में सयुक्त सरकारों के गठन का सुझाव दिया है। किंतु यदि श्री मेनन सरकार से अलग हो जाएँ और प्रधानमंत्री का पद अपने पास रखकर श्री प. नेहरू कम से कम दो वर्ष के लिए पृष्ठभूमि में रहना स्वीकार कर लें, तो स्थिति नियत्रण में आ सकती है। आज देश को सुदृढ एव दूरदर्शी नेतृत्व की आवश्यकता है। नेतृत्व ऐसा चाहिए जो राष्ट्र को प्रेरणा दे सके।

पाकिस्तान वर्तमान सकटपूर्ण स्थिति से लाभ उठाने की सोच सकता है। मुझे इसमें सशय है कि अमरीका उसे नियत्रित कर सकेगा। अमरीका के स्वय वियृता में उलझे होने के कारण क्या विश्व के इस भाग की चिंता करने का अवकाश भी उसे होगा?

यदि स्थिति बिगडी तो देश में विद्यमान कम्युनिस्ट तत्त्व भी उससे लाभ उठाने का प्रयत्न करेंगे। फिर भी कम्युनिस्ट पार्टी पर प्रतिबध लगाने की आवश्यकता नहीं है। हाँ, हमें उनकी गतिविधियों को सतर्कता के साथ देखते रहना चाहिए ताकि वे गडबड न कर सकें। प्रतिबध लगाने से तो वे भूमिगत हो जाएँगे, जिससे उन्हें शहीद होने का गौरव प्राप्त होगा। द्रविड मुनेत्र कषगम से किसी सकट की आशका नहीं है। वे हमारे अपने अश हैं तथा उन्हें मार्ग पर लाया जा सकता है।

सयुक्त राष्ट्र सघ का द्वार खटखटाना उचित नहीं है। हमें अपने सामर्थ्य पर भरोसा करना होगा। राष्ट्र सघ न्याय नहीं दे सकता, वह तो सौदेबाजी किया करता है।

नेपाल के साथ शीघ्रातिशीघ्र मधुर एव प्रगाढ सबध प्रस्थापित करना भारत सरकार के लिए आवश्यक है। यदि चीन से कम्युनिस्ट तानाशाही के बावजूद 'भाई-भाई' का नारा चल सकता है, तो नेपाल के साथ मधुर सबधों के लिए वहाँ लोकतान्त्रिक व्यवस्था क्यों अपरिहार्य होनी चाहिए? यह दायित्व हमारा कैसे है? नेपाल-नरेश के साथ सौहार्दपूर्ण सबध प्रस्थापित करना कठिन नहीं है। अतत वे हमारे अपने अश हैं। हिंदू होने के कारण उनकी जडें यहीं है। यदि हम इसमें विफल रहे तो हमारी कठिनाइयाँ और बढेंगी।

सरकार एव उसके शीर्षस्थ नेताओं को जनमानस में आत्मविश्वास एव साहस उत्पन्न कर उसका मनोबल बढाना चाहिए। देश के युवावर्ग को इस प्रकार प्रशिक्षित करना चाहिए, जिससे वे सुरक्षा की द्वितीय पक्ति

बनकर सेना के लिए सहायक हो सकें।

अपने देशवासियों को इस घोर सकटकाल में विघटनकारी एव विस्फोटक गतिविधियों के विरुद्ध जागरूक रहकर अपनी सरकार के साथ सभी प्रकार का सहयोग करना चाहिए, जिससे अपनी सरकार अपने समस्त उपलब्ध साधनों का प्रयोग कर, इस सकट अथवा किसी अन्य आसन्न सकट का सफलतापूर्वक प्रतिरोध कर यशस्वी बन सके।

४ सार्वजनिक भाषण

(रामलीला मैदान दिल्ली २३ दिसबर १९६२)

आक्रमण आज का नहीं

लगभग पिछले दो मास से चीन ने हमारे देश पर आक्रमण करना प्रारभ कर दिया है। 'प्रारभ कर दिया है', यह मैंने इसलिए कहा, क्योंकि उसको आक्रमण के नाते 'स्वीकार' करने में हमारे शासन ने पिछले दो मास से तत्परता दिखाई है। वैसे, देखा जाए तो आक्रमण १०-१२ साल पुराना है। मेरे जैसे एक सामान्य मनुष्य ने लगभग १० वर्ष पूर्व चीन का भारतीय क्षेत्र में प्रवेश और उसके द्वारा भारत में अपनी स्थिति मजबूत बनाने के लिए किए गए प्रयत्नों का उल्लेख किया था। कई अन्य जानकार लोगों ने भी इस सबध में चेतावनियाँ दी थीं। अपने बडे लोगों के बारे में यह बात कही जा सकती है कि वे लोग अपने विश्व-बधुत्व के भाव में इतने अधिक डूबे हुए थे कि इस ओर ध्यान देने का मन में कभी विचार ही पैदा नहीं हुआ।

चीन का विश्वासघात?

आजकल सुनने को मिलता है कि चीन ने हमारे साथ 'विश्वासघात' किया है, हमें 'धोखा' दिया है। परतु चीन के कम्युनिस्ट शासन के पूरे इतिहास को हम देखें, उसने हमें कभी भी यह विश्वास दिलाया ही नहीं था कि वह हम पर आक्रमण नहीं करेगा। उसका व्यवहार तो इससे उल्टा ही रहा। जैसे 'तिब्बत की स्वायत्तता और स्वतत्रता को स्वीकार करके चलना चाहिए' इतना मानने के बाद भी और मानते-मानते उसी समय अपनी सेना को तिब्बत में घुसाकर उसका भक्षण करना उसने प्रारभ कर दिया था। चीन ने विश्वासघात किया है, तो वास्तविक रीति से वह उसी समय

हो चुका था। इसके बाद भी हम लोगों ने पंचशील के पवित्र तत्वों के आधार पर कुछ समझौता करके उसके साथ शांति स्थापित करने का यत्न किया, तथापि कोई न कोई बहाना निकाल कर उस शांति को भंग करने का ही प्रयत्न चीन की ओर से सतत होता रहा। उसने तो स्पष्ट रूप से लोगों को चेतावनी दे दी थी कि वह कोई शांतिप्रिय नहीं है– आक्रमण न करने की संधि को माननेवाला नहीं है। वह आक्रमण करने पर तुला है। उसके ऐसे सब कृत्यों को देखने के पश्चात् भी अगर किसी ने विश्वास रखा होगा कि चीन तो अपना भाई है, इसलिए वह हम पर आक्रमण नहीं करेगा, तो गलती तो विश्वास करनेवाले की है। चीन की ओर से विश्वासघात के रूप में कुछ हुआ नहीं, क्योंकि उसने तो कभी विश्वास दिलाया ही नहीं था। यह कहना ठीक नहीं कि चीन ने विश्वासघात किया। कहना यह चाहिए कि हम लोगों ने ही चीन की प्रकृति को समझा नहीं।

करेला, वह भी नीम चढ़ा

आजकल चारों ओर एक और प्रचार चला है कि 'चीन तो बहुत पहले से ही आक्रमणकारी है, विस्तारवादी है।' कुछ मात्रा में यह सच भी है। उसके पुराने इतिहास में ऐसा देखने को मिलता है कि चंगेजखान आदि अकारण ही अपने पड़ोसियों पर आक्रमण कर, उनका विनाश करते आए हैं। उनकी केवल इतनी प्रकृति ही आज के आक्रमण का कारण नहीं है। चीन ने गत १२-१३ वर्षों में जिस कम्युनिस्ट प्रणाली को अपनाया है, वह भी इस आक्रमणकारी नीति के लिए जिम्मेदार है। सबको पता है कि चीन गत १२-१३ वर्षों से अपने को 'कम्युनिस्ट' कहता है। इतना ही नहीं, जिस रूस में कम्युनिस्टों का राज्य सर्वप्रथम प्रारंभ हुआ, उससे भी इनका कम्युनिज्म अधिक शुद्ध है, ऐसा इनका दावा है। चीन सोचता है कि सारे जगत् में कम्युनिस्ट विचार-प्रणाली का राज्य स्थापित करना उसका लक्ष्य है। इसके लिए वह विस्तारवाद के पीछे लगा है। अर्थात् पहले से ही प्रकृति में साम्राज्यवाद की पिपासा और उसपर जगत् भर में कम्युनिस्ट विचारधारा का राज्य प्रस्थापित करने का मानस, इन दोनों का ही आज चीन में संयोग हो गया है, अर्थात् 'एक तो करेला दूजे नीम चढ़ा।

यह कहना कि आक्रमण तो चीन की प्रकृति है, कम्युनिस्ट विचारधारा इसके लिए कोई कारण नहीं, यह तो स्वयं को भ्रम में डालना है। जिस प्रकार हम लोगों ने अपने को इस भ्रम में डाल लिया था कि 'चीन तो अपना भाई है। आज अपने भ्रम का निराकरण होकर उसका प्रत्यक्ष

आक्रमणकारी स्वरूप हमारे अनुभव में आ रहा है। इसी प्रकार 'कम्युनिज्म तो अच्छा है, पर चीन का कम्युनिज्म विकृत हो गया है। इसलिए वह बहुत खराब है। कम्युनिज्म पर उसके विस्तारवाद का पाप नहीं आता'– इस प्रकार का एक नया भ्रम आज फिर से हम लोगों ने अपने हृदय में उत्पन्न करने का यत्न किया है और इस नए भ्रम का प्रचार करने पर हम तुले हुए हैं। इसमें भी आगे चलकर निराश होने की पूर्ण सभावना दिखाई देती है। 'विस्तारवाद' चीन की प्रकृति भले ही हो, परतु यही विस्तारवाद कम्युनिज्म का भी एक गुण है। इन दोनों का सयोग होने के कारण ही चीन का आज का सकट खडा है।

शातिवार्ता अशोभनीय

यह भी समझना चाहिए कि यह आक्रमणकारी बडा बलशाली है। उसकी सेना की सख्या अधिक हे। सारे ही लोग एक प्रकार से मानो सैनिक हैं। ऐसी शिक्षा देने का प्रयास वहाँ सतत चला है। शस्त्रास्त्र भी पर्याप्त मात्रा में एकत्र करने का उन्होंने प्रयत्न किया है। इस प्रकार से शस्त्रास्त्रसपन्न एक बहुसख्यक सेना का यह आक्रमण अपने सामने है। उनकी तुलना में आज अपने पास सैनिक और शस्त्रास्त्र– दोनों की ही कमी है। यह यद्यपि चिता करने का विषय है, तो भी निराशा का कदापि नहीं, क्योंकि इनकी पूर्ति अल्पकाल में हो सकती है।

ऐसे सुसज्जित शत्रु के साथ हम शातिवार्ता करें या करने के लिए उत्सुक हैं– इस प्रकार से पुनरपि अपने-आपको एक और विश्वासघात का शिकार बनाना, शोभा देनेवाला नहीं होगा। एक बार जब दूध से मुँह जल जाता है, तब मनुष्य छाछ भी फूँक-फूँक कर पीता है। एक बार नहीं तो बार-बार जिस चीन ने अपने वचनों को सब प्रकार से अमान्य करते हुए, हमारे पडोसी तिब्बत पर और स्वय हम पर आक्रमण किया है, तब उसी गर्म दूध को बिना फूँके पीने को तैयार होना, याने चीन से शाति-वार्ता के लिए तैयार होना, इसमें लाभ की सभावना नहीं है। केवल इतना ही नहीं, उसमें से अपने पर बहुत बडा सकट आने की सभावना भी है।

सर्वभक्षी आक्रमणकारी

आजकल इधर-उधर भाषण ही भाषण सुनाई देते हैं। जो उठता है, वही भाषण करता है। बडे ऊँचे-ऊँचे शब्द बोलता है। ऐसा लगता है, मानो भाषण, सभाओं, जलसे-जुलूस आदि करके और कभी-कभी चीनी

सहायता का पूरा लाभ उठाने के लिए तत्पर रहना चाहिए। किसी अन्य प्रकार की भावना या खोटी कल्पना में पडकर स्वत को शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित बनाने में आनाकानी करना सकट का कारण बनेगा।

परिश्रम तथा त्याग आवश्यक

यह तो शासन का काम हुआ। परतु हम लोगों को जो करना है, उसमें प्रथम बात यह है कि अपने जीवन में अनेक प्रकार के ऐश्वर्य तथा सुखों का उपभोग करने की आदतों को कम करना पडेगा, याने जीवन में सादगी लानी पडेगी। अपने जीवन को और परिवार को चलाने के लिए जितना कुछ अनिवार्य रूप से जरूरी है, उतना ही व्यय करते हुए सकट में उपकारक बनें। इसके लिए उसको सुरक्षित रखने का हम लोगों को अभ्यास करना होगा। धन का सचय करना, वस्तुओं का अपव्यय न हो इधर दत्तचित्त होकर ध्यान देना, अपने में से प्रत्येक का प्रमुख कर्तव्य है। क्योंकि यदि दीर्घकाल तक इस प्रकार का सघर्ष चला, तो अनेक प्रकार के अभाव व दु ख होते हुए भी उस कमी को भोगने के लिए तैयार रहना देशभक्त के नाते प्रत्येक का कर्तव्य है।

पिछले महायुद्ध में इग्लैंड में अनेक जरूरी चीजों की कमी हो गई थी। शक्कर मिलती नहीं थी। खान-पान की वस्तुओं की बहुत कमी हो गई थी। फिर भी लोगों ने किसी भी प्रकार की शिकायत नहीं की। दृढता के साथ सब प्रकार की परिस्थिति में प्रसन्नचित्त रहकर, अधिकाधिक परिश्रम तथा त्याग के लिए वे सिद्ध रहे। इस श्रेष्ठता के कारण आखिर वे विजयी हुए। अत हम निश्चय करें कि अपना जीवन अत्यत सादगी का होगा और परिवार के लिए कम से कम आवश्यक वस्तुओं का उपयोग होगा। राष्ट्र की आवश्यकता की इस घडी में उपयोग करने के लिए धन की बचत करें।

स्वेच्छा और प्रेम से धन-प्राप्ति

वैसे तो अपने देश के लोगों के मन में स्वाभाविक रूप से राष्ट्रप्रेम है, कितु वह सुप्त रहता है। अपने देश के लोगों की इस स्वाभाविक देशभक्ति का ही परिणाम है कि युद्ध आरभ होते ही लोगों ने स्वेच्छा से अपना धन सरकार को युद्ध चलाने के लिए दिया। अपने अलकार, स्वर्ण आदि जो कुछ भी बचा-खुचा उनके पास था, वह दिया। कितने ही लोगों ने अपने प्रतिमास के वेतन का कुछ हिस्सा देने का सकल्प किया है। स्वेच्छा से व अत प्रेरणा से जो धन प्राप्त होता है वह पुण्यमय है। उसमें यदि कहीं

वलप्रयोग की भावना आ गई, तब तो सकट खडा हो जाएगा। अनेक प्रांतों के इस प्रवास में मैंने कहीं-कहीं सुना कि शासन ने जनता से कुछ धन लेने के पहले सकल्प किया और फिर उसे पूरा करने के लिए लोगों पर दबाव डाला। यदि शासनकर्ताओं की ओर से इस प्रकार के वलप्रयोग की प्रवृत्ति का प्रयोग होगा, तो जनसाधारण के मानस में दुःख पैदा होता है। लोग सोचेंगे कि यदि सब अपने को लूटने वाले ही हैं, तो फिर यह आज की स्वतत्र देश की सत्ता रहे या कोई परकीय सत्ता रहे, उसमें फर्क कौन-सा पडता है? ऐसे विचार पैदा होने से युद्ध के प्रयत्नों में लगनेवाली सर्वसामान्य समाज की उत्सुकता कम हो जाएगी। मैं तो समझता हूँ कि सारे देश को युद्धजन्य परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार करने के मार्ग में यह 'वलप्रयोग' बहुत बडी बाधा है। समाज को युद्ध के लिए उत्तम रीति से तैयार करने की शासनकर्ताओं पर विशेष जिम्मेदारी है। वे स्वय ही वलप्रयोग द्वारा समाज का हृदय न तोडें, यह उनसे प्रार्थना है। स्वेच्छा से व प्रेम से सब बातें हों। वलप्रयोग का कोई अवसर पैदा न करते हुए, सादगी के जीवन से अपने आप सभी बधु धन की बचत करें और सचित धन शासन को आवश्यकतानुसार देने की तत्परता दिखाएँ।

योग्य व्यक्तियो की आवश्यकता

सेना का विस्तार करने के लिए योग्य व्यक्ति चाहिए। वे अच्छे शक्तिमान हों विविध कठिनाइयों में न डरनेवाले व सुदृढ़ मनोवृत्ति के हों। जिनके शरीर में बल है, उन्हें आवश्यकता पडने पर सैनिक के नाते [illegible] में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए। उन्हें घर के मोह या अन्य किसी बात के आकर्षण में न पड़ते हुए कर्तव्य-पूर्ति की भावना से आगे बढ़ना है। जिनके शरीर में बल कुछ कम है, उन्हें भी भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यायाम करके अपना शरीर स्वस्थ और मजबूत बनाना चाहिए। [illegible] में से गुजरने के लिए जब राष्ट्र को तैयार करना है, तो उसमें स्वस्थ और बलवान शरीर की बहुत आवश्यकता है। बुजुर्गों को अपने तरुणों को बलवान बनाने की प्रेरणा देना तथा उनका वैसा [illegible] चाहिए। [illegible]

माताओं का कर्तव्य

अपनी माताएँ अपने पुत्रों व अन्य सबंधियों पर बडा प्रेम करती हैं। उनके प्रेम की कहीं तुलना नहीं। किंतु इसको ऐसा नहीं बनाना चाहिए कि राष्ट्र के संकट के समय अपने कर्तव्य-पूर्ति के लिए जानेवाले प्रियजनों के पैर पीछे की ओर खिचें। अपनी परंपरा तो ऐसे समय पर प्रोत्साहन देने की है। महाभारत के युद्ध की जब सब सिद्धता हो गई, तब पाँचों पांडव, माता कुंती से आशीर्वाद माँगने गए। तब कुंती ने उत्तर दिया– 'जिस पवित्र क्षण के लिए क्षत्राणी पुत्रों को जन्म देती है, वह धर्म-युद्ध का पवित्र क्षण आ पहुँचा है। प्राणों की कोई परवाह न करते हुए, धर्म की रक्षा के लिए जूझते हुए, अवश्य आगे जाओ।' इस प्रकार की परंपरा में जन्म लेनेवाली अपनी माताओं को अपने प्रियजनों को प्रोत्साहन देना चाहिए।

उत्पादन-वृद्धि से आत्मनिर्भरता

सेना केवल अपने अकेले के बल पर नहीं लड सकती। पहले के जमाने में योद्धा ही परस्पर लडते थे। बाकी के लोग अपने कारोबार शांति के साथ चला सकते थे। उसमें सबको संतोष भी रहता था, परंतु आज तो सर्वव्यापी युद्ध होता है। इस प्रकार के सर्वव्यापी युद्ध में प्रत्येक मनुष्य को कोई न कोई कर्तव्य पूरा करना पडता है। हमें विचार करना चाहिए कि हम लोग कौन-कौन सा कर्तव्य करें।

युद्ध के लिए शत्रु के सामने जो योद्धा खडे हैं, उन्हें किसी बात की कमी न पडे। उसके मन में सतत यह विश्वास रहे कि बाकी का समाज मेरे परिवार का भरण-पोषण सुखपूर्वक करेगा। इसी दृष्टि से हमारा व्यवहार होना चाहिए। सबको सेना के लोगों को प्रोत्साहन देना चाहिए, सैनिक व उनके परिवारों की सहायता करनी चाहिए। सेना को किसी बात की कमी न पडे। उनको खाना चाहिए, वस्त्र भी लगते हैं, दवा-पानी भी लगता है। हर चीज के लिए प्रयत्न की आवश्यकता है। उन सबका अधिकाधिक मात्रा में उत्पादन करते हुए अपने देश को आत्मनिर्भर बनाएँ। आवश्यक वस्तुओं की पूर्ण पूर्ति के लिए अधिकाधिक परिश्रम करें। खेती करनेवाले खेती में अधिक मेहनत करें। भिन्न-भिन्न उद्योग करनेवाले अपने उद्योगों में मेहनत से जुटें। कारखानों में पूरी शक्ति लगाकर काम करें। इस समय किसी प्रकार का भी मालिक और नौकर का झगडा अपने मन में बिल्कुल नहीं आने देना चाहिए। सचाई से सब कार्य करते हुए उत्पादन

प्रजातन्त्रीय देशों में अपना ही देश नहीं है, जिसे युद्ध का सामना करना पडा है। जहाँ से हमने वर्तमान प्रजातन्त्र का पाठ पढा, उस इग्लैंड में अनेक युद्धों का उद्‌भव होने पर भी उन्होंने अपने लोगों की आवाज बद करने का प्रयत्न कभी नहीं किया, क्योंकि वे जानते थे कि अपने देश के निवासी अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए वैसा ही बोलते हैं जो उनको उचित दिखाई देता है। दूसरी भी एक बात थी। जनता भी यह जानती थी कि अपने देश के नेता और शासन चलानेवाले प्रमुख व्यक्ति, देशभक्ति की प्रेरणा से कार्य करते हैं। इसलिए परस्पर विश्वास के कारण शासनकर्ताओं को यदि थोडी-बहुत टीका-टिप्पणी सुननी भी पडी, तो उन्हें उसका भय नहीं रहता था और वे उससे कुछ पाठ पढने के लिए उत्सुक रहते थे। सभवत अपनी जनता पर अपने आज के नेताओं को इस प्रकार का विश्वास नहीं है।

अत केवल दूसरों के लिए 'परोपदेशे पाडित्य' न करते हुए स्वय अपने मन में से दलगत अभिनिवेश को सब प्रकार की विकृत भावनाओं को दूर कर, 'सारा राष्ट्र एक', इस नाते सकट का सामना करने के लिए खडा होना चाहिए। मेरे पास तो ऐसा भी समाचार है कि एक स्थान पर वहाँ के जिलाधीश की अध्यक्षता में राष्ट्रीय सुरक्षा समिति की ओर से एक सभा हुई। उसमें उस जिले के काग्रेस के एक प्रमुख अधिकारी का भाषण हुआ। उसमें उन्होंने सबसे बडी बात यही कही कि कहीं पर भी यदि विरोधी दलवाले बोलते दिखाई दें, तो वहीं उनको कुचल डालो। इस प्रकार की भावना से आपस में प्रेम बढेगा या मतभेद? आखिर जो तथाकथित विरोधी दल हैं, उनका विरोध तो केवल लोकसभा, विधानसभा या अन्यान्य इसी प्रकार के क्षेत्रों में ही तो है? राष्ट्र के ऊपर आए सकट की दृष्टि से तो वे विरोधी नहीं, समभागी हैं। सब विरोधी दल केवल शत्रु हैं, ऐसी भावना को ऐसे समय में प्रोत्साहन देना, एक-दूसरे को कुचलने का आह्वान करना कहाँ तक शोभनीय है? बडे-बडे लोगों में, चाहे वे काग्रेस के हों या अन्य किसी दल के-- इस प्रकार की आपस में ही सघर्ष कराने की जो प्रवृत्ति दिखाई देती है, उसका सर्वथा त्याग होना चाहिए। हम तो सघ के स्वयसेवक के नाते यही सोचते हैं कि इस महान राष्ट्र की सुरक्षा के प्रयत्न में किसी भी पक्ष या सस्था की पडागिरी की कोई जरूरत नहीं। अपने सामने खडा शत्रु तथा शत्रु का मुकाबला करनेवाला अपना यह शासन और अपने पीछे खडी सारी जनता। बस! इसके अलावा और कोई विचार मन

में नहीं आना चाहिए। इसी का प्रतिपादन करने का हमारा संकल्प है। युद्ध-प्रयत्न में प्रवेश करते हुए आगे चलकर इसमें से अपने को क्या मिलेगा, ऐसा स्वार्थ का विचार किसी भी प्रकार मन में नहीं आने देना चाहिए। आपने सुना होगा कि नागाओं ने कुछ शर्तें रखीं और कहा कि ये शर्तें पूरी करने का अभिवचन दो, तो हम युद्ध-प्रयत्नों में सहायता करेंगे। ऐसी लेन-देन की भाषा शोभा नहीं देती। किसी ने भी ऐसी लेन-देन की भाषा को मन में नहीं आने देना चाहिए, यह हमारी सबसे प्रार्थना है।

एकतरफा युद्धविराम – एक चाल

हमें पता है कि अशांति उत्पन्न करनेवाले कुछ विध्वंसक तत्त्व अपने चारों ओर हैं। उनके बारे में विचार करने के लिए मैं एक बात का उल्लेख करता हूँ। चीन ने एकतरफा युद्ध-विराम किया है। लोगों को आश्चर्य लग रहा है कि जो चीन एक के बाद एक चौकी जीतता चला आ रहा था, वह एकाएक युद्ध-विराम कर बड़ी सज्जनता से वापस जाने के लिए सिद्ध कैसे हो गया? परंतु इसमें आश्चर्य और असमंजस की कोई बात नहीं। कम्युनिस्ट और विशेष कर चीन की दृष्टि से देखें तो युद्ध में जिस प्रकार अपने में सामर्थ्य चाहिए, उसी प्रकार प्रतिपक्षी के सामर्थ्य को कम करना भी एक नीति रहती है। यह सब जानते हैं कि भारत की जनता शांतिप्रिय है और जनता से भी अधिक उसके प्रतिनिधि नेता लोग शांतिप्रिय हैं। नुकसान भी हो जाए तब भी लड़ाई-झगड़ा न हो, वे इस प्रवृत्ति के हैं। जब भारत माता के विभाजन की बात आई, तब लड़ाई-झगड़ा न हो, इसलिए पाकिस्तान मान लिया। उसी तरह बाद में रक्तपात न हो इसलिए युद्ध-विराम करके, एक प्रकार से कश्मीर का विभाजन मान लिया। हमारी इस प्रवृत्ति को चीन पहचानता है। उसने सोचा होगा कि यदि युद्ध-विराम की घोषणा कर दी तो ये लोग सोचेंगे, चलो अच्छा हुआ। अब लड़ाई-झगड़ा कुछ नहीं होगा। सामर्थ्य खड़ा करने की अब क्या जरूरत? सब अपने काम-धाम में लग जाएँगे। फिर से आपस में झगड़ने लगेंगे, क्योंकि बाहर तो शांति हो ही गई है। इस प्रकार से स्वकर्तव्य भूलने की स्थिति में देश पड़ जाएगा। प्रवास में मैंने कितने ही लोगों के मन में दुविधा देखी कि प्रत्यक्ष तो लड़ाई अब बंद है, फिर तैयारी करना या नहीं करना? अब ज्यादा प्रयत्न करने और धन-संचय करने की आवश्यकता ही क्या? अतः अपने यहाँ के साहस और निश्चय को कम करने का चीन का जो प्रयास था, वह इस युद्ध-विराम के पीछे हो सकता है। एक दूसरी भी बात है।

स्वय ही आक्रमण करके पडोस के देशों को हडप लेना– केवल इतना ही कम्युनिस्टों का तत्र नहीं है। दूसरे देशों में अपने वैचारिक समर्थक, याने कम्युनिस्टों को प्रवल वनाकर, उनके द्वारा विद्रोह कराकर एक विशेष प्रकार के स्वतत्र राज्य की घोषणा कराना। उस स्वतत्र राज्य के समर्थन ओर रक्षा के लिए अपनी सेना को 'मुक्ति सेना' के नाम से भेजना, इस प्रकार वलप्रयोग से कम्युनिस्टों को सफलता दिलाकर सारे देश पर अपना वर्चस्व स्थापित करना भी उनका तत्र रहता है। चीन में उन्होंने ठीक यही किया था, जिसके कारण चाग काई शेक को पराभूत होकर चीन की मुख्य भूमि छोडनी पडी थी।

पचमागी कम्युनिस्ट

भारत में भी इस प्रकार के चीन के पचमागी, याने कम्युनिस्ट कुछ कम नहीं हैं। कुछ क्षेत्रों में प्रबल वनने की उनकी कोशिश है। सामान्य लोगों के मन का रोटी-कपडे का स्वाभाविक असतोष जगा कर, शासन के विरुद्ध विद्रोह की भावना पेदा करने में वे कव से लगे हुए हैं। भारत के ये कम्युनिस्ट सोचते हैं कि यदि उन्हें परकीय, याने चीनी सहायता मिल जाए, तो वे विद्रोह का झडा खडाकर सारे हिंदुस्थान को कावू में कर लें। इसी षड्यत्र के एक भाग के नाते भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में कम्युनिस्ट घुसाए भी गए हैं। काग्रेस में भी ऐसे कम्युनिस्ट घुसे हैं। शासन तत्र में भी अवश्य होंगे, वरना आकाशवाणी से भी पहले, पीकिंग रेडियो से यहाँ के कुछ समाचार कैसे आए? ये लोग असम से कोलकाता तक इस प्रचार में लगे हैं कि वर्तमान शासन तो दुष्ट लोगों का है। उसे समाप्त कर सुख-समृद्धि देने के लिए चीनी लोग आ रहे हैं। उनकी सहायता करनी चाहिए। ये कम्युनिस्ट इस प्रकार का षड्यत्र और विद्रोहात्मक उत्पात, आगे कितना व कैसे करेंगे, आज तो कहना कठिन है। परतु उनकी हलचलों पर सतर्क दृष्टि रखना आवश्यक है।

प्रत्येक देशभक्त का कर्तव्य है कि उन लोगों को खोजे, जिनके मन पर इनका प्रभाव पडा है। उस प्रभाव को नष्ट करें। प्रत्येक गॉव में ओर नगर के मुहल्लों में, ऐसी जागरूक शक्ति खडी करें, जो सदा सतर्क रहे और विध्वसात्मक कार्यवाहियॉ न होने दें।

जिन कम्युनिस्टों का विश्व-भर का ४०-५० वर्षो का इतिहास विद्रोह, विस्तार तथा वल प्रयोग का है, उनकी भारतीय शाखा को शत

प्रतिशत देशभक्ति का सर्टिफिकेट देना दुर्भाग्यपूर्ण ही है। लेकिन वे ही नेता हमारे संघकार्य को विध्वंसात्मक कहते हैं, जबकि संघ का लक्ष्य– अपनी परंपरा, धर्म व संस्कृति की रक्षा करते हुए मातृभूमि के लिए उत्कट देशभक्ति के दृढ़ संस्कार पैदा करना और जीवन की बाजी लगाकर उसकी रक्षा करना है। शासन को हम अपना मानते हैं, शासन चलानेवाले नेताओं को अपना नेता मानते हैं। थोड़े-बहुत मतभेद हमारे हो सकते हैं, परंतु यह तो महत्त्व की बात नहीं है। अतः हमारे बड़े लोग यदि शत्रु-मित्र की ठीक पहचान नहीं करते, तो हमारे मन में बहुत दुःख होता है। क्योंकि इस गलती से विध्वंसात्मक कम्युनिस्टों द्वारा बहुत हानि हो सकती है। चीन से भाईचारा करने का नतीजा तो आज सामने आ चुका है। इसी प्रकार से चीन का पक्ष लेकर विद्रोह करनेवाले कम्युनिस्टों से भाईचारा करने का, उन्हें कांग्रेस में, प्रशासन में, रक्षा समितियों में और युद्ध प्रयत्नों में घुसने देने का परिणाम, कल कितना खतरनाक हो सकता है? एक धमाके से सारी कांग्रेस को हड़प कर, शासन यंत्र को अंदर से भग्न कर, तोड़-फोड़ के द्वारा देश को रक्तरंजित करके अपनी क्रूर तानाशाही सत्ता स्थापित करने की इन कम्युनिस्टों की षड्यंत्रपूर्ण कार्यवाही हो सकती है। आज की संकटपूर्ण स्थिति में इनसे भाईचारा रखना, एक नवीन और बड़े खतरे को निमंत्रण देना है।

पाकिस्तान के साथ दृढ़ता का व्यवहार करें

हम चीन के साथ आज उलझे हुए हैं। हमारी कठिनाई का लाभ उठाकर पाकिस्तान ने अधिकाधिक दबाव डालने की नीति अपनाई है। उसका विचार हो सकता है कि इस समय कश्मीर छीन-झपटकर ले लिया जाए। सौभाग्य से हमारे प्रमुख नेता प्रधानमंत्री महोदय ने बड़ी असंदिग्ध घोषणा की है कि पाकिस्तान का इस प्रकार 'ब्लैकमेल' चलेगा नहीं। इस प्रकार का दृढ़ व्यवहार करके हमारे प्रधानमंत्री ने राष्ट्र का मस्तक ऊँचा किया है। हम सबके लिए यह बात बड़ी प्रसन्नता की है।

कुछ ऐसा भी सुना है कि जिन मित्र देशों ने हमें शस्त्रास्त्र देकर सहायता की, वे भी कश्मीर के प्रश्न को उठा रहे हैं। इससे कुछ लाभ होगा क्या? उन्होंने सारी बात को ठीक से समझा है क्या? स्वयं कश्मीर ने भी सिद्ध कर दिया है कि वह भारत का अंग है और अंग बनकर रहना चाहता है। अब तो शासनकर्ताओं के लिए एक ही बात बची है कि कश्मीर

‍ . की धारा को समाप्त कर दें।
भारत के साथ अभिन्नता की इच्छा
, रूप दे दें। हमें अपने विदेशी मित्रों
तो इसमें है कि चीन से मुकावला
।न भी सिद्ध हो। कम्युनिस्ट आक्रमण
मित्रों ने पाकिस्तान को शस्त्रास्त्रों से
प्रसग आने पर उन्हें पाकिस्तान को

अच्छी वात है। वास्तव में हम तो
ज घुडकी देनेवाले पाकिस्तानी वधु,
ही थे। उन दिनों हमारे नेताओं ने,
थे। फिर उन्हें हम आज अलग
वे अलग हो भी गए हों, तो
चाहिए। आपस में मेल और स्नेह
कदापि नहीं करनी चाहिए।
माने हुए सिद्धात ही टूटते हैं। सकट
मिलता है। पिछले ४० वर्ष

को छोड दिया था, मगर उसी
की करोडों रुपयों की सहायता
ह किया। लोगों की हत्या की, फिर
श्रेष्ठता के कारण उनको 'बहादुर
नौकरियाँ माँगी, विशेष अधिकार
मत्री महोदय ने अपने हृदय की
ए 'मुस्लिम समाज सपर्क' आदोलन
जैसे श्रेष्ठ पुरुष उसके घर भी गए।
विभाजन भी स्वीकार किया। तव
क्या? उनकी भूख अधिक वढी ही
इनका कब्जा रहने दिया, तो भी
रुपए दिए, नहर से पानी दिया,
ए, मगर पाकिस्तान की सद्‌भावना
विभाजन की शर्तों के अनुसार तो

प्रतिशत देशभक्ति का सर्टिफिकेट देना दुर्भाग्यपूर्ण ही है। लेकिन ये ही नेता हमारे सघकार्य को विध्वसात्मक कहते हैं, जबकि सघ का लक्ष्य– अपनी परपरा, धर्म व सस्कृति की रक्षा करते हुए मातृभूमि के लिए उत्कट देशभक्ति के दृढ सस्कार पैदा करना और जीवन की बाजी लगाकर उसकी रक्षा करना है। शासन को हम अपना मानते हैं, शासन चलानेवाले नेताओं को अपना नेता मानते हैं। थोडे-बहुत मतभेद हमारे हो सकते हैं, परतु यह तो महत्त्व की बात नहीं है। अत हमारे बडे लोग यदि शत्रु-मित्र की ठीक पहचान नहीं करते, तो हमारे मन में बहुत दु ख होता है। क्योंकि इस गलती से विध्वसात्मक कम्युनिस्टों द्वारा बहुत हानि हो सकती है। चीन से भाईचारा करने का नतीजा तो आज सामने आ चुका है। इसी प्रकार से चीन का पक्ष लेकर विद्रोह करनेवाले कम्युनिस्टों से भाईचारा करने का, उन्हें काग्रेस में, प्रशासन में, रक्षा समितियों में ओर युद्ध प्रयत्नों में घुसने देने का परिणाम, कल कितना खतरनाक हो सकता हे? एक धडाके से सारी काग्रेस को हडप कर, शासन यत्र को अदर से भग्न कर, तोड-फोड के द्वारा देश को रक्तरजित करके अपनी क्रूर तानाशाही सत्ता स्थापित करने की इन कम्युनिस्टों की षड्यत्रपूर्ण कार्यवाही हो सकती है। आज की सकटपूर्ण स्थिति में इनसे भाईचारा रखना, एक नवीन और बडे खतरे को निमत्रण देना है।

पाकिस्तान के साथ दृढता का व्यवहार करे

हम चीन के साथ आज उलझे हुए हैं। हमारी कठिनाई का लाभ उठाकर पाकिस्तान ने अधिकाधिक दबाव डालने की नीति अपनाई है। उसका विचार हो सकता हे कि इस समय कश्मीर छीन-झपटकर ले लिया जाए। सौभाग्य से हमारे प्रमुख नेता प्रधानमत्री महोदय ने बडी असदिग्ध घोषणा की है कि पाकिस्तान का इस प्रकार 'ब्लैकमेल' चलेगा नहीं। इस प्रकार का दृढ व्यवहार करके हमारे प्रधानमत्री ने राष्ट्र का मस्तक ऊँचा किया है। हम सबके लिए यह बात बडी प्रसन्नता की है।

कुछ ऐसा भी सुना हे कि जिन मित्र देशों ने हमें शस्त्रास्त्र देकर सहायता की, वे भी कश्मीर के प्रश्न को उठा रहे हैं। इससे कुछ लाभ होगा क्या? उन्होंने सारी बात को ठीक से समझा है क्या? स्वय कश्मीर ने भी सिद्ध कर दिया है कि वह भारत का अग है और अग बनकर रहना चाहता हे। अब तो शासनकर्ताओं के लिए एक ही बात बची है कि कश्मीर

का अलग से अस्तित्व बनानेवाली सविधान की धारा को समाप्त कर दें। वहां के मुख्यमत्री द्वारा प्रकट की गई भारत के साथ अभिन्नता की इच्छा को इस प्रकार पूरी कर, उसे वैधानिक रूप दे दें। हमें अपने विदेशी मित्रों को समझाना चाहिए कि असली लाभ तो इसमें है कि चीन से मुकाबला करने के लिए भारत के साथ पाकिस्तान भी सिद्ध हो। कम्युनिस्ट आक्रमण के विरुद्ध खडे होने के लिए विदेशी मित्रों ने पाकिस्तान को शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित किया है। आज वास्तविक प्रसग आने पर उन्हें पाकिस्तान को तदर्थ खडा करना चाहिए।

पाकिस्तान के साथ मेल-जोल अच्छी बात है। वास्तव में हम तो विभाजन भी नहीं मानते, क्योंकि हमें आज घुडकी देनेवाले पाकिस्तानी बधु, आज से पद्रह वर्ष पहले तक भारतीय ही थे। उन दिनों हमारे नेताओं ने, उनके साथ भाई-चारे के नारे हमें सिखाए थे। फिर उन्हें हम आज अलग क्यों मानें? कुछ भ्रम और कुछ परिस्थितिवश वे अलग हो भी गए हों, तो भी उन्हें समझा-बुझाकर वापस लाना चाहिए। आपस में मेल और स्नेह अवश्य बढे। मगर कुछ लेन-देन या सौदेबाजी कदापि नहीं करनी चाहिए। इससे तो अपना सम्मान, सद्भाव तथा माने हुए सिद्धात ही टूटते हैं। सकट का लाभ उठाकर लूटने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है। पिछले ४० वर्ष का इतिहास इस बात का साक्षी है।

विश्व के मुसलमानों ने खिलाफत को छोड दिया था, मगर उसी खिलाफत के लिए हिंदुस्थान के मुसलमानों की करोडों रुपयों की सहायता गई। दक्षिण में मलाबार में उन्होंने विद्रोह किया। लोगों की हत्या की, फिर भी महात्मा जी ने अपनी असामान्य श्रेष्ठता के कारण उनको 'बहादुर मोपला भाई' ही कहा। उन्होंने अधिक नोकरियाँ माँगी, विशेष अधिकार माँगे। हमने वे भी दिए। हमारे प्रधानमत्री महोदय ने अपने हृदय की विशालता के कारण उन्हें अपनाने के लिए 'मुस्लिम समाज सपर्क' आदोलन भी किया। जिन्ना से मिलने महात्मा जी जैसे श्रेष्ठ पुरुष उसके घर भी गए। पर उनको सतोष हुआ क्या? आखिर में विभाजन भी स्वीकार किया। तब भी क्या लाभ हुआ? उनकी तृप्ति हुई क्या? उनकी भूख अधिक बढी ही है। कश्मीर के एक तिहाई भाग पर इनका कब्जा रहने दिया, तो भी पाकिस्तान तृप्त नहीं हुआ। ५५ करोड रुपए दिए, नहर से पानी दिया, बेरूबाडी क्षेत्र दिया। हम तो देते चले गए, मगर पाकिस्तान की सद्भावना नहीं मिली, उसकी भूख बढती ही गई। विभाजन की शर्तों के अनुसार तो

पर निष्पक्ष भाव से विचार प्रगट करने की अपनी स्वतत्रता हम खोना नहीं चाहते। यदि हम अपना यह भाव इन मित्रों को समझाएँ, तो वे पाकिस्तान के पीछे दौडने की बजाय, प्रजातत्र की आस्था व रक्षा के हित में भारत के रूप में एक समर्थ मित्र रखना अधिक पसद कर सकते हैं। तब पाकिस्तान की विचित्र माँगोंवाली 'ब्लैकमेलिग' व घुडकियों को दुनिया के अन्य देशों से कभी-कभी मिलनेवाला समर्थन बहुत कम हो जाएगा। अत हम तटस्थता की रट लगाने की बजाय अप्रजातात्रिक गुट की ओर अपना झुकाव बद करें। किसी गुट में शामिल न हों, परतु प्रजातत्र की रक्षा के प्रश्न पर प्रजातत्र के समर्थकों के साथ हमारी स्वाभाविक निकटता है ही। विचारशील श्रेष्ठ पुरुष, शात चित्त से यथार्थवादी के नाते इस वस्तुस्थिति का अध्ययन करें, ऐसी मेरी प्रार्थना है।

पाकिस्तान-समर्थकों की गतिविधियाँ

दुर्भाग्य से अपने देश में पाकिस्तान-समर्थक लोग भी कम नहीं हैं। कहीं-कहीं उन्होंने शस्त्र भी इकट्ठे किए हैं। जब अपना शासन सभी मजहब-पथों के साथ समानता का व्यवहार रखता है, तब मुसलमानों को शस्त्र इकट्ठे करने की जरूरत क्या है? एक ही सभावना हो सकती है कि पाकिस्तान आक्रमण करे, तब ये लोग सशस्त्र विद्रोह करें। शासन का ध्यान इधर कम ही है। सन् १९५० में गोहाटी में मैंने सार्वजनिक रूप से कहा था और तब से लगातर चेतावनी दे रहा हूँ कि पाकिस्तानी मुसलमान पूर्वी बगाल से असम में भारी मात्रा में घुस रहे हैं। इसका कुछ प्रबध करो। वे १२ वर्षो से असम में लगातार घुस रहे हैं, पर शासन ने आज तक इसका क्या प्रबध किया? इसलिए आज शासन को भी और हमें भी इन तत्त्वों की गतिविधियों के प्रति अधिक सतर्क होना आवश्यक है। पाकिस्तान के सकेत पर ये लोग भारत विरोधी कार्य न कर पाएँ, इसके लिए समाज में जगह-जगह, जागरूक और सगठित शक्ति अवश्य खडी करनी पडेगी।

मातृभूमि की भक्ति से प्रेरणा

अपना कर्तव्यपालन करने के लिए कष्ट व परिश्रम का आह्वान करना होगा, अनेक सुखों को छोडना होगा, परतु इसके लिए मन में प्रेरणा चाहिए कि अपनी मातृभूमि, अपनी राष्ट्र-परपरा, उसके जीवन सिद्धातों, अपने पूर्वजों के नाम उज्ज्वल रखने के लिए सब प्रकार का प्रयत्न स्वेच्छा से और अत स्फूर्ति से मैं कर रहा हूँ। इस सतोष को प्राप्त करने के लिए

अपनी मातृभूमि का मूर्त चित्र हृदय में अंकित करके उसके प्रति उत्कट भक्ति दिन-प्रतिदिन का चिंतन व संस्कार करते हुए पैदा करनी होगी। इस ओर दुर्लक्ष्य होने के कारण बडे लोगों ने भी इस मातृभूमि को माता कहने की बजाय कंकड-पत्थर-मिट्टी मात्र कह दिया। प्रारंभ में जब चीन के लोग लद्दाख में आए तब नेताओं ने कहा कि वहाँ की हवा बहुत खराब है। आदमी का जाना कठिन है, घास का तिनका भी वहाँ नहीं उगता। इस प्रकार से यदि इस भूमि को माता के नाते न देखा, तो इसकी रक्षा की प्रेरणा कैसे पैदा होगी? इसलिए कंकड-मिट्टी के भ्रमपूर्ण विचार मन से हटाने होंगे। साक्षात् जगत्-जननी, सर्व-पवित्र, सर्वश्रेष्ठ, चेतनामयी यह माता है, इससे बढ कर संसार में पूजा के योग्य अन्य कुछ नहीं, इस भाव को हृदय में धारण करना होगा।

हमारे धर्म के अनुसार तो अपने घर में ही आदमी भगवान की उपासना कर सकता है। फिर उत्तर में कैलाश-मानसरोवर, बद्रीनाथ, अमरनाथ, पश्चिम में बलूचिस्तान में हिंगलाज माता का शक्तिपीठ, दक्षिण में रामेश्वर व कन्याकुमारी और पूर्व में अनेक शक्तिपीठ, तीर्थस्थान हमारे पूर्वजों ने क्यों खडे किए? महात्मा जी जैसे श्रेष्ठ पुरुष ने कहा कि 'सारे भारत की अखंड एकात्मता का बोध प्रत्येक के अंत करण में रहे, यह हमारी अति पवित्र मातृभूमि है, यह भावना जागृत रहे, इसके लिए हमारे पूर्वजों ने अति दूरदृष्टि से इनका निर्माण किया था।' महात्मा जी के इन वचनों को अवश्य स्मरण रखें। यह न भूलें कि इसी मिट्टी में विलीन होने की हमारी आकांक्षा भी है। अपने अन्न-जल से इस वत्सल माता ने हमारा पालन किया है। पिता के रूप में हमारी जीवन-परंपरा की इसने रक्षा की है। इसकी दुर्गम सीमाओं को शत्रु आसानी से पार नहीं कर सका। अंदर आ भी गया तो इसके वन, पर्वत, मरुभूमि में उसको पराजित होना पडा। साक्षात् गुरु के रूप में इसने सर्वश्रेष्ठ ज्ञान, संस्कार, मोक्ष और प्रत्यक्ष भगवान का साक्षात्कार हमें कराया है। देवता गण भी यहाँ जन्म लेने के लिए तरसते हैं। इसलिए कहा गया है– 'दुर्लभ भारते जन्म मानुष तत्र दुर्लभ।'

इसका रूप भी अपने पूर्वजों ने स्पष्ट बताया है। सारे हिमालय की शाखा-उपशाखाओं से घिरे हुए भूभाग से दक्षिण महासागर तक फैली हुई भूमि अपनी माता का प्रत्यक्ष मूर्त रूप है। आज के राजनैतिक उथल-पुथल में इसका स्वरूप कुछ छोटा भले ही हो गया हो, परंतु यह आपातकालीन

रूप है। हृदय में तो परिपूर्ण चित्र को ही रख कर भक्ति करनी चाहिए।

भक्ति का वास्तविक रूप

हमारे उपास्य को यदि किसी ने दुष्टता से स्पर्श किया, अपमानित या खडित किया, तो यह सहन न हो। इतना प्रचड सामर्थ्य पैदा करने का सकल्प हो कि जिससे आज तक के सारे अपमान व विकृतियाँ भूल जाएँ और मातृभूमि का परिपूर्ण स्वरूप जगत् के सामने पूरी प्रभा व वैभव के साथ खडा हो सके। जब तक ऐसा न हो जाए, तब तक सारे सुख-ऐश्वर्य फीके लगें, सतत बेचैनी रहे। केवल 'भारत माता की जय' अथवा 'जय हिद' बोल देना ही देशभक्ति नहीं है। जय बोलना और स्वार्थ में डूबे रहना ठीक नहीं। सच्ची भक्ति से हृदय बेचैन रहे, हृदय की ऐसी अवस्था सारी सकटपूर्ण परिस्थिति में हमारे वास्तविक आधार का काम करेगी।

एकात्मता की अनुभूति

मातृभूमि की भक्ति में से ही एकात्मता की अनुभूति पैदा होती है। भारतभूमि हमारी माता है और हम सब उसकी सतान होने से एक परिवार हैं। एक ही रक्त सारे परिवार की नसों में बहता है। जितने भी पथ, सप्रदाय इस समाज ने बनाए सब हमारे हैं। अपनी प्रकृति के अनुसार अपने-अपने पथ के मार्ग से भगवान की उपासना भले ही करें, परतु बाकी के सभी पथ भी हमें उतने ही अच्छे और प्रिय होने चाहिए। जितनी भी बोलियाँ हमारे समाज में बोली जाती हैं, वे सब अपनी हैं। उन सब पर अपना समान प्रेम रहना चाहिए। सभी जातियाँ इस समाज के विराट शरीर की अवयव हैं। उनमें एक ही चैतन्य है, इस प्रकार का एकात्मता का बोध इस मातृभूमि की भक्ति से पैदा होता है ओर इस एकात्मता के बोध में से ही सामर्थ्य का सृजन होता है। अधिकार और माँगों को सामने रखकर, लेन-देन की भाषा बोलने से एकात्मता पैदा नहीं हो सकती।

हिंदूराष्ट्र एक सर्वव्यापक तथ्य

इस भूमि में प्राचीनकाल से हिंदू-समाज का एक राष्ट्रजीवन चला आ रहा है। उसकी अतर्बाह्य एकात्मता है, जीवन-लक्ष्य एक है, धर्म एक है, सद्‌गुण परपरा और सत्सस्कारयुक्त सस्कृति एक है। इसे चरितार्थ करनेवाले मार्गदर्शक महापुरुष भी एक हैं। स्वार्थ-हितसबध भी एक हैं। शत्रु-मित्र एक हैं। सब प्रकार के सुख-दु खों की स्मृतियाँ भी एक हैं। ऐसी

है– मातृभूमि के प्रति परिपूर्ण भक्ति रखकर समान अधिकारों ओर समान कर्तव्यों का पालन करें। यदि कोई इग्लैंड या अमरीका का बनकर रहना चाहता है तो उसके लिए यह आवश्यक होता हे कि वह वहॉ के राष्ट्रपुरुषों को अपना राष्ट्रपुरुष मानकर चले, वहॉ की जीवन-प्रणाली को स्वीकार करे, भले ही भगवान की उपासना वह किसी भी प्रकार से करे। यही अपेक्षा भारत में भी हो, तो आपत्ति की बात क्या है? इस सत्य को अमान्य करने से अनेक आपत्तियॉ आई हैं, आगे भी आ सकती हैं।

राष्ट्र के लिए हर व्यक्ति स्वेच्छा व स्वयस्फूर्ति से कष्ट सहन करे। इसके लिए जन-जन में यह भावना जगानी होगी कि अपनी अत्यत पवित्र मातृभूमि की हमें रक्षा करनी है, इसके पुत्ररूप समाज को एक ही परिवार मानकर उन्नत बनाना है, इस समाज के प्राचीनकाल से चले आए राष्ट्रजीवन की स्वतत्रता की रक्षा करनी हे ओर ऐसे स्वतत्र राष्ट्र को वैभवशाली तथा गौरव-गुणसपन्न बनाकर ससार में एक श्रेष्ठ राष्ट्र के नाते सम्मान दिलाना है। इस भावना के सस्कारों का निर्माण नितात आवश्यक है। इसके लिए तीव्र गति से परिश्रम होना चाहिए।

शक्ति का सिद्धात-एक सनातन सत्य

आज की सकटग्रस्त परिस्थिति में एक बात और भी अपने बडे लोगों के ध्यान में आई है कि अपने बल के बिना कोई भी राष्ट्र आज के जगत् में सम्मान के साथ नहीं रह सकता। पिछले कुछ समय से हम लोग ऐसा मानने लग गए थे कि यदि हमने कुछ मीठे और ऊँचे सिद्धात बोल दिए तो ससार हमारा सम्मान करेगा। हमने सबसे भाईचारा रखा तो कोई अपने को कष्ट नहीं देगा, परतु हमने ससार के इस स्वभाव को नहीं समझा कि ससार ऊँचे सिद्धातों के बजाय शक्ति का सम्मान करता है और शक्ति से ही डरता है। अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए दुनिया के राष्ट्रों ने गुट बनाए हैं, गुटों की शक्ति बढाई है। ऐसे प्रमुख दो गुटों में कब सघर्ष हो जाएगा– यह पता नहीं। ऐसी परिस्थिति में शक्तिशाली ही, जिसे कोई भी गुट अपने स्थान से हिला न सके, तटस्थ रह सकता है और यदि कभी निश्चितता के साथ किसी गुट का समर्थन करने का ही सोचा तो शक्तिहीन हालत में वह भी खतरे से खाली नहीं। 'शक्ति की महिमा' तो सहस्रों वर्ष पूर्व स्वय मनु महाराज ने भी बताई हुई है कि वही राज्य, जिसका (दड) सामर्थ्य प्रबल हो– सुख, शाति व समृद्धि से रह सकता हे। 'शक्ति का सिद्धात' तो

'सनातन सत्य' है। हमने इसे भुलाया और केवल ऊँचे सिद्धातों के फेर में पडे रहे। आज चीन के आघात से यह सत्य समझ में आया कि हमें अपना बल बढाना चाहिए, तभी सम्मान का जीवन सभव है। सघ के निर्माता ने तो सैंतीस वर्ष पूर्व आग्रहपूर्वक शक्ति का मार्ग हमारे सामने रखा था कि 'कोई भी राष्ट्र अपनी शक्ति के बल पर खडा होता है। शक्ति का आधार होता है सगठन। सगठन के लिए आवश्यक है कि आसेतुहिमाचल सारा समाज मन में राष्ट्र भावना लेकर एक अनुशासन के सूत्र में बद्ध हो। सगठित जीवन परिपक्व होता है तो राष्ट्र में बल आता है।'

भारत शक्ति-गुटो की रणभूमि न बने

इन दिनों कुछ नेताओं ने कहा कि यदि चीन का भारी आक्रमण आ गया तो विदेशी मित्रों से हमें लडाई के लिए सैनिक व सब प्रकार के शस्त्रास्त्र भी लेने पड सकते हैं। तब फिर चीन को दूसरे गुट के सैनिक व शस्त्रास्त्र मिल सकते हैं। तब दोनों गुटों की रणभूमि भारत बनेगा और हमारा सर्वनाश होगा। कोई भी गुट अपनी भूमि में युद्ध नहीं चाहता, क्योंकि जिस भी भूमि में युद्ध होता है, वहाँ सर्वनाश होता है। अत दोनों ही गुट युद्ध के लिए किसी अन्य की ही भूमि चाहते हैं। यह बात लगभग १५ वर्ष पूर्व भी कही थी, आज भी कहना जरूरी है। लेकिन यह तभी सभव है, जब हम बलशाली होंगे।

व्यक्तिपूजा अनुचित

आज राष्ट्र के बारे में चितन करने के स्थान पर लोग मनुष्य का विचार करते हैं। अपने प्रधानमत्री के बारे में यह कहा जाता है कि वे राष्ट्र के प्रतीक हैं ओर जो जवाहरलाल जी की जय नहीं बोलेगा, वह गद्दार है आदि-आदि। यह स्पष्ट रूप से खुशामदखोरी है। खुशामद हमेशा भय या स्वार्थ के कारण की जाती है। जब स्वार्थ सिद्ध होने की सभावना नहीं रहती, तब वही खुशामदखोर गालियाँ भी देता है। मैं खुशामद में विश्वास नहीं करता, इसलिए मुझसे खुशामद होती नहीं। इसपर कोई कहे कि मेरी श्रद्धा नेहरू जी के प्रति कम है तो यह सरासर झूठ बात होगी। मैं पडित जी को बहुत बडा आदमी मानता हूँ। मैं उन्हें दुनिया के श्रेष्ठ व वरिष्ठ राजनीतिज्ञों में से एक मानता हूँ, उनपर मेरी पूर्ण भक्ति है। देश के कर्णधार होने के कारण, उनके बल और चतुराई का पोषण हम सघ के बल व

चतुराई से होना चाहिए, ताकि निर्भय होकर हम अपने देश को यशस्वी कर सकें। जिसके मन में ऐसी श्रद्धा और धारणा होगी, वह खुशामद नहीं करेगा। खुशामद करनेवाला कभी सच्ची श्रद्धा नहीं रख सकता।

लेकिन कोई खुशामदी यह कहे कि आज सारा राष्ट्र एक ही व्यक्ति पर निर्भर है, तो प्रश्न होगा कि इसके पूर्व इस राष्ट्र का अस्तित्व था या नहीं? बडे प्रतापी व पराक्रमी पुरुष पहले कभी हुए ही नहीं क्या? सम्राट चद्रगुप्त, विक्रमादित्य, शिवाजी महाराज, राणा प्रताप हुए हैं? फिर एक मनुष्य पर राष्ट्र निर्भर कैसे? खुशामदखोरों के अनुसार एक व्यक्ति पर निर्भर रहनेवाली बात मान भी ली जाए, तो यह राष्ट्र के लिए कितनी घातक हो सकती है, इतिहास इसका साक्षी है।

सन् १७६१ के पानीपत के युद्ध में हमलावर अब्दाली का मुकाबला करने के लिए सेनापति सदाशिवराव के नेतृत्व में पेशवाओं की सेना खडी थी। पीछे रहकर सैन्य-सचालन करने की बजाय वे हाथी पर बैठकर प्रत्यक्ष रणक्षेत्र में आ गए। थोडी देर बाद युद्ध में लडने की इच्छा से वे हाथी से उतरकर घोडे पर सवार होकर आगे चले गए। सैनिकों की दृष्टि से उनके ओझल होते ही सेना का वही हाल हुआ, जो एक व्यक्ति पर निर्भर रहने से हुआ करता है। सेनापति मारा गया— इस कल्पना मात्र से सैनिकों के हृदय टूट गए और जीता हुआ युद्ध छोडकर भागने लगे और ऐसा पराभव हुआ कि इतिहास की धारा ही बदल गई।

राष्ट्रभक्ति का महत्त्व

इतिहास में इससे उल्टा उदाहरण भी है। शिवाजी महाराज ने स्वराज्य की स्थापना की ओर सामान्य से सामान्य व्यक्ति में भी राष्ट्रभक्ति उत्पन्न की। उनके स्वर्गवास के बाद एक विशाल शाही सेना लेकर स्वय औरगजेब स्वराज्य को कुचलने के लिए दक्षिण में आया। सभाजी को मरवा दिया और शिवाजी के दूसरे लडके राजाराम को जिजी के किले में घेर लिया। सारा स्वराज्य नेताविहीन हो गया था और सामना करना था उस समय के सबसे प्रबल शत्रु से। लेकिन लोग न तो टूटे और न हारे। समुद्र के समान फैली हुई शाही सेना को २० साल तक टक्कर दी। सबसामान्य ने असाधारण हिम्मत, चातुर्य, शौर्य व पराक्रम का परिचय दिया। एक दिन तो छावनी में घुसकर औरगजेब के तबू के स्वर्ण कलश भी काट ले गए। हताश और निराश औरगजेब को अतत दक्षिण में ही प्राण छोडने पडे।

निर्णायक परिस्थिति में नेताविहीन होते हुए भी स्वराज्य अजेय रहा। क्योंकि स्वराज्य किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं था। वह जनसाधारण की राष्ट्रभक्ति, दृढता, पराक्रम और सहकार्य पर निर्भर था। इतिहास से यह बोध सीखने की आवश्यकता है।

इसलिए मैं बहुत स्पष्ट बोलता हूँ, पर प्रेम व आत्मीयता के कारण ही बोलता हूँ। यदि मेरे मन में बुराई होती तो सोचता कि एक ही मनुष्य पर निर्भर रहने के कारण ये सब लोग अतत गिरेंगे, गिरने दो– ऐसा सोचकर मैं चुप रहता। परतु मन में मित्रता और आत्मीयता का भाव होने के कारण ही बोलता हूँ और सलाह देता हूँ कि एक व्यक्ति पर निर्भर रहने की वृत्ति पैदा मत करो। इससे देश की हानि हो सकती है। सारे राष्ट्र को मजबूत बनाने की भाषा बोलो। किसी एक गुट या चिह्न के पीछे न लगकर, उसके प्रति भक्ति की शिक्षा न देकर, सपूर्ण मातृभूमि के प्रति भक्ति की शिक्षा दो। जनसाधारण में आत्मविश्वास व सामर्थ्य की भावना पैदा करो। वास्तव में राष्ट्र उसी पर निर्भर रह सकेगा।

अपमान का बदला लेंगे

कुछ लोग कहते हैं कि प नेहरू के हाथ मजबूत करो। ऐसा जोर से बोलनेवाले कम्युनिस्ट हैं। शासनविरोधी, प्रजातत्र के शत्रु, चीन के पुराने समर्थक, चीनी आक्रमण की सफलता के लिए अदर ही अदर षड्यत्र करनेवाले कम्युनिस्ट ही स्वाग कर रहे हैं, ताकि इसकी आड में अपनी काली करतूतें छद्म वेष में कर सकें और शासन आसानी से उन पर हाथ न डाल सके। वैसे आज सच्ची आवश्यकता प नेहरू के हाथ व हृदय दोनों मजबूत करने की है, ताकि उनके हृदय में यह सकल्प बनें कि राष्ट्र के प्रजातात्रिक जीवन और सपूर्ण मातृभूमि की स्थिर सुरक्षा के लिए जितना भी युद्ध आवश्यक है, अवश्य करेंगे। शत्रु आया और उसने हमें ठोकरें मार कर स्वेच्छा से व शान से युद्ध बद कर दिया। वह वापस जाने की शेखी मारता है। ऐसी अपमानजनक स्थिति में हमारे कर्णधार प्रधानमत्री के हृदय में यह सकल्प अडिग बने कि सपूर्ण अपमान का बदला चुकाने के लिए उपलब्ध सहायता लेकर, अपने राष्ट्रजीवन की शक्ति को सचित करके शत्रु को ऐसा पाठ पढाना है, जो उसके जीवन का सर्वश्रेष्ठ पाठ हो। उसके बाद फिर कभी वह किसी दूसरे देश को कष्ट देने का दुस्साहस न कर सके। ऐसा पक्का हृदय हमारे इस प्रमुख नेता का बने। अवश्य ही आसेतुहिमाचल

यह प्राचीन व चिरजीवी राष्ट्र अपना सारा सामर्थ्य बटोरकर, कधे से कधा मिलाकर विजयश्री पाने के लिए उनके पीछे खडा रहेगा।

यह पूछा जा सकता है कि तब राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का क्या काम है? हमने अभी मातृभूमि की भक्ति का विचार किया। उसके आधार पर सकट का सामना करने की अतर्शक्ति, पूरे समाज की एकात्मता के सुदृढ भाव, शुद्ध राष्ट्र भाव को समझकर सगठन रूपी बल के आह्वान, अनुशासन के प्रबल अमिट सस्कार से सपन्न तेजस्वी राष्ट्र हमें खडा करना है। यही सघ का सकल्प है, यही सघकार्य है। आज की परिस्थिति में इसकी अधिक जरूरत है। इस पवित्र कार्य में हाथ बँटाने का आह्वान मैं सब बधुओं से करता हूँ। सघ का नाम न भी लें, क्योंकि सघ को उसकी इच्छा भी नहीं। परतु किसी नाम, गुट आदि की परवाह न करते हुए आज की परिस्थिति में त्यागपूर्ण सर्वस्वार्पण की भावना से युक्त सादगी का जीवन बनाना है। स्थान-स्थान पर जागरूक, सतर्क सगठन खडा करना है। विजय की दुर्दम्य आकाक्षा पैदा करनी है। इसके लिए सभी बधु आगे बढें।

सपूर्ण विजय का सकल्प

सीमा-रक्षा मात्र तो छोटा सा उद्देश्य है और इतना ही सोचने से सीमा की रक्षा होगी भी नहीं। चीन की असलियत के बारे में हमारे मन में जो भ्रमपूर्ण पुरानी कल्पनाएँ आज से १०-१२ वर्ष पूर्व थीं, जिनके कारण हमने तिब्बत की स्वतत्रता का अपहरण होने दिया और वहाँ की परपरागत दलाई लामा की सरकार को आज तक मान्यता नहीं दी। अब, जबकि हम चीन के बारे में अपनी मिथ्या कल्पनाएँ छोड रहे हैं, तब इन भूलों को भी ठीक करें। तिब्बत की स्वतत्रता की घोषणा करें। दलाई लामा की सरकार की मदद करें, तो शत्रु को भारतीय सीमा में ही नहीं, वरन् तिब्बत की उत्तरी सीमा के उस पार धकेलने में अवश्य सफलता मिलेगी। इसी प्रकार से चीन को नियमित व सयमित किया जा सकता है।

आज की परिस्थिति में सकट के निवारण के लिए और जगत् में सम्मानित राष्ट्र के नाते खडे होने के लिए, इस प्रकार का प्रचड सामर्थ्य उत्पन्न करना परमावश्यक है। पूर्ण बुद्धिमत्ता, सतर्कता व सतत तत्परता का परिचय हमें देना होगा। विध्वसक तत्त्व अपनी करतूतों में सफल न होने पाएँ। सब पूर्ण विजय का सकल्प करें। यही मेरी नम्रतापूर्वक सबसे प्रार्थना है।

५ युद्ध एक दैवी विधान

(पाचजन्य दीपावली अक १९६३)

इसे दुर्भाग्य मानें या सौभाग्य, पर वस्तुस्थिति यह है कि इस जगत् में जो बलवान है, वह निर्बल पर आक्रमण किए बिना नहीं रहता। पचशील और सह-अस्तित्व के हम चाहे जितने नारे लगाएँ, पर दुर्बल और बलवान के बीच सह-अस्तित्व की रम्य कल्पना सत्य सृष्टि में आज तक तो परिणत नहीं की जा सकी। हमारे पूर्वजों ने मनुष्य के स्वभाव दोष को ध्यान में रखते हुए कहा कि ससार में सघर्ष अटल है। वे कल्पना जगत् में विचरण करनेवाले लोग नहीं थे। जीवन के कठोर तथ्यों का विचार और अनुभव कर उन्होंने कहा कि 'जीवो जीवस्य जीवनम' का न्याय अटल है। इसलिए जो व्यक्ति या राष्ट्र स्वय को जीवित रखना चाहता है, उसे स्वय बलवान बनकर खडा रहना चाहिए, जिससे कोई दूसरा उसे भक्ष्य बनाने का दुस्साहस न कर सके।

दुर्बलता के दुष्परिणाम

पिछले हजार-बारह सौ वर्षो में भारत पर विदेशियों के जो आक्रमण हुए, उनका यदि ठीक-ठीक विश्लेषण किया जाए तो यही दिखाई देगा कि आपसी कलह से छिन्न-विच्छिन्न और जर्जरित रहकर हमने ही विदेशियों को आक्रमण करने का अवसर दिया है। हमारी कमजोरी ने ही पहले मुगलों की ओर बाद में अग्रेजों की गुलामी स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। देश-विभाजन की अपमानजनक स्थिति भी हमारी दुर्बलता से ही उत्पन्न हुई। पाकिस्तान का कश्मीर पर आक्रमण ओर असम व त्रिपुरा की सीमा पर छुटपुट हमले भी हमारी दुर्बलता के प्रतीक हैं। चीन का उत्तरी सीमा पर किया गया आक्रमण ओर हमारी पवित्र धरती पर किया गया अधिकार भी उसी अटल सिद्धात का स्मरण कराते हैं कि दुर्बलता ही आक्रमण व हिसा को प्रोत्साहन देती है।

युद्ध एक वरदान

अपने देश के कतिपय श्रेष्ठ विचारक ऐसा समझते हैं कि शाति और प्रेम की भाषा से आततायी को सही रास्ते पर लाया जा सकता है। उनका ख्याल है कि यदि शस्त्रास्त्रों की भीषण सहारक शक्ति का दुनिया के बडे राष्ट्रों को अनुभव कराया जा सका, तो उनके अदर दया का भाव

जागृत होगा और वे युद्ध से विरत हो जाएँगे। मानवमात्र में सद्भावना निर्माण करने के उनके प्रयत्न सराहनीय हो सकते हैं, पर उससे यह निष्कर्ष निकालना कि दुनिया से सघर्ष विदा ले लेगा– एक कोरी अव्यावहारिक कल्पना होगी, क्योंकि ससार में युद्ध या सघर्ष केवल मनुष्य ही नहीं करता। मेरा तो अपना विश्वास है कि कभी-कभी ससार में अनेक प्रकार की उद्दडता, दुष्टता, पापाचरण जब बढ जाता है, तब उसका विनाश कर जगत् में सुख-समृद्धि और सज्जनता का व्यवहार पुन स्थापित करने के लिए भगवान की योजना से मानवीय भावनाओं के शुद्धिकरण के लिए युद्ध की योजना होती है। महाभारत का युद्ध इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। उस समय युद्ध टालने के लिए क्या कम प्रयत्न किए गए थे? युधिष्ठिर तो केवल पाँच गाँव लेकर समझौता करने को तैयार था। कृष्ण ने भी वार्ता कर युद्ध टालने का भरपूर प्रयास किया था। परतु युद्ध को कोई टाल न सका। कोई कहता है कि युद्ध दुर्योधन के कारण हुआ, तो कोई अन्य कारण प्रस्तुत करते हैं, पर मुझे यही लगता है कि वह भगवान की योजना से हुआ। गीता का उपदेश देते समय अपना विराट स्वरूप प्रकट कर भगवान ने कहा– 'मैं काल हूँ, इन लोगों का सहार करने के लिए प्रवृत्त हुआ हूँ। तू लडना चाहे तो लड, न चाहे तो शात बैठ। तेरे बिना भी ये सब अवश्य ही मारे जाएँगे।'

स्पष्ट है कि शाति और सद्भावना के स्रोत भगवान भी मानव-समाज की बुराइयाँ धो डालने के लिए भीषण रण-यज्ञ की स्वयमेव रचना करते हैं।

आततायी चीन

आज अपने देश में अहिसा की बडी चर्चा है। चीन के आक्रमण के समय कुछ शातिवादी नेताओं ने कहा कि सेना की जगह चीनी सैनिकों के सामने शाति सैनिकों को भेजा जाए। उनकी धारणा थी कि हमारे शात और अहिसक लोगों को देखकर उनके हथियार स्वयमेव ही रुक जाएँगे। उन्होंने पूछा कि क्या वे हमारी सेना को घास-पत्ती समझकर काटेंगे?

शायद ये लोग समझते हैं कि भगवान ने जैसा शुद्ध और सात्विक अत करण उन्हें प्रदान किया है, वैसा ही शत्रु को भी प्रदान किया होगा। पर जो लोग चीन के इतिहास को, विशेषकर वर्तमान इतिहास को जानते हैं, उनके मन में उसके बारे में कोई गलतफहमी नहीं हो सकती।

कम्युनिस्ट चीन के जिन वर्तमान शासकों ने साम्यवाद के नाम पर

अपने ही हाड-मास के बने ९९ लाख चीनियों को मौत के घाट उतारने में तनिक भी सकोच नहीं किया, उनके हृदय में मानवीय दया या करुणा का कोई स्थान नहीं हो सकता।

युद्ध अवश्यम्भावी

इस प्रसग में यह तथ्य भी ध्यान में रखना चाहिए कि युद्ध को टालने के लिए एकपक्षीय प्रयत्न कभी सफल नहीं हो सकते। यह तो ठीक है कि किसी भी सघर्ष के लिए दो पक्षों की आवश्यकता होती है, पर यह जरूरी नहीं कि दोनों पक्ष लडनेवाले ही हों। एक मारनेवाला और दूसरा मार खानेवाला– ऐसे दो पक्षों में भी अच्छी मारपीट और सघर्ष हो सकता है। यह बात दूसरी है कि मारने का इरादा छोडकर हम केवल मार खाने का ही काम करते रहें। पर इससे भी युद्ध टलेगा नहीं, यह निश्चित है। उल्टे आततायी को अन्याय और पापाचरण करने का प्रोत्साहन मिलेगा।

ऐसी परिस्थिति में फिर आत्मरक्षा का, सम्मान के साथ जगत् में जीने का एक ही उपाय शेष रहता है कि हम बलवान बनें, अपने राष्ट्र को शक्तिसपन्न करें।

ऐसा नहीं है कि हमारे समाज ने केवल आध्यात्मिक क्षेत्र मे ही ख्याति प्राप्त की थी और दैनिक व्यावहारिक जीवन के अन्य क्षेत्रो की ओर दुर्लक्ष्य किया था। प्रामाणिक प्राचीन आलेखो ने नि सदिग्ध रूप से यह प्रकट कर दिया है कि विज्ञान और कला की प्रत्येक शाखा मे हम बाकी दुनिया से कई शताब्दी आगे थे।

— श्री गुरुजी

युद्धस्व भारत

भाग - २

१ भारत-पाक युद्ध सन् १९६५

(८ सितंबर १९६५ दिल्ली से प्रसारित वक्तव्य)

पाकिस्तान के आक्रमण के परिणामस्वरूप हमारे देश पर थोपा हुआ युद्ध गभीर सघर्ष का रूप धारण करता जा रहा है। हम सबको परिस्थिति की चुनौती को स्वीकार करना होगा तथा दृढता और धैर्यपूर्वक पूर्ण सफलता प्राप्त करनी होगी। युद्धग्रस्त क्षेत्र के विस्तार के साथ हमारे सामने नई-नई समस्याएँ आएँगी और नई जिम्मेदारियो को हमें वहन करना होगा। शासन तो उन्हे निभाने का प्रयत्न करेगा ही, किंतु उसपर काफी भार होगा। अत देश के सभी नागरिकों का कर्तव्य है कि वे देशहित की सामान्य नीतियों को ध्यान मे रखते हुए इन दायित्वो के निर्वाह मे हाथ बटाएँ। अत मैं सभी देशवासियों तथा विशेषत राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के स्वयसेवक बधुओं का आह्वान करता हूँ कि वे जो-जो समस्याएँ पैदा हों, उनको दूर करने में सरकार का पूरा सहयोग करे। विस्थापितो की तथा घायलों ओर बीमारों की सहायता, शाति ओर व्यवस्था, नागरिक सुरक्षा, जिसका काफी काम गैरसरकारी आधार पर किया जा सकता हे, करे। जनता के मनोबल को बनाए रखने, प्रखर राष्ट्राभिमान को जागृत करने तथा अतिम विजय तक दृढतापूर्वक लडने का सकल्प पैदा करने की ओर विशेष ध्यान देना होगा। हम सत्य के लिए तथा अपनी मातृभूमि की अखडता और सम्मान के लिए लड रहे हैं। हमारी विजय सुनिश्चित है।

ॐ ॐ ॐ

२ नभ-सदेश

(१६ सितबर १६६५ को आकाशवाणी के बड़ोदा केंद्र द्वारा प्रसारित श्री गुरुजी का नभ-सदेश)

राष्ट्र के लिए युद्ध का प्रसग आया है। गत अनेक वर्षों से लग रहा था कि ऐसा होगा। इस युद्ध के निर्णय से भारत व पाकिस्तान के बीच के सबध सदा के लिए एक निश्चित स्वरूप धारण करेंगे और आए दिन होनेवाली अनेक घटनाओं का अत होगा।

युद्ध के अभी तक के परिणाम अपनी सेना के लिए शोभादायक हैं। उसकी कीर्ति अधिकाधिक उज्ज्वल हुई है। जिस-जिस भू-भाग पर उसका स्वामित्व स्थापित होता जा रहा है, वहाँ के (वे खुद को पाकिस्तानी भले ही कहते हों) नागरिकों के साथ प्रेमपूर्ण पद्धति से वर्ताव कर आश्वासन देने की नीति भारत की सच्ची क्षात्रवृत्ति की परपरा को शोभा देनेवाली है और ससार के अन्य देशों की दृष्टि से अपने देश को गौरवान्वित करनेवाली है।

शासन करनेवाले एव अन्य नेताओं में इस अनिवार्य धर्मयुद्ध को सफलता से लडने के निश्चय के साथ-साथ ही शाति का मार्ग ढूँढने की योग्यता भी है। वह भी अपनी राष्ट्र-परपरा के अनुकूल ही है। किंतु सधि की बातचीत चलती हो, तब भी युद्ध के मैदान में शिथिलता या उदासीनता नहीं आने देनी चाहिए। सधि का भार राजकीय नेताओं को सौंपकर सेनापतियों को शत्रु पर प्रबल आघात करते हुए आगे बढना, यही योग्य होता है। शाति की चर्चा चलती हो, तब विश्व को आश्चर्य में डाल दे, ऐसी विजय प्राप्त करना सधि की चर्चा को बडी शक्ति प्रदान करता है। इस बात को सभी सबधित बधु ध्यान में रखें तो देश के सम्मान के लिए यह बडा लाभदायक साबित होगा।

आज का युद्ध केवल सेना का ही युद्ध नहीं है। देश के प्रत्येक व्यक्ति को इसमें सहायता करनी होती है। देश में अन्न-स्वावलबन, औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति, अधिक उत्पादन द्वारा विश्व के साथ के सबधों में घनिष्ठता प्राप्त करना सामान्य हेतु तो हैं ही, किंतु देश की सभी जातियों, सप्रदायों, पथों इत्यादि के बीच सच्ची एकता रहना बहुत ही आवश्यक है। यह याद रखना चाहिए कि यह युद्ध हिंदू धर्म व इस्लाम को लेकर नहीं हुआ है। किंतु युद्ध खुद के ही धर्म-बधुओं (पठान) का क्रूरता

से दमन करनेवाले, पूर्व बगाल में खुद के ही मुसलमान बधु और पाकिस्तान के नागरिकों पर अन्याय करनेवाली एक विकृत मनोवृत्तिवाले मानव-सस्कृति-भक्षक के रूप में दिखाई देनेवाले एक पक्ष की हानिकारक प्रवृत्ति का पूर्णरूप से विनाश करने के पवित्र हेतु से चल रहा है। इस पवित्र ध्येय को प्रत्येक भारतवासी अति प्रिय मान रहा है। अत सभी भारतीय भाइयों को युद्ध सफल करने के प्रयासों मे सहभागी होना आवश्यक है।

युद्ध के सकटकाल के इस आह्वान को बुद्धिजीवी भी स्वीकार करें। वैज्ञानिक क्षेत्र नए-नए शोध करें। वर्तमान समय में युद्ध की सामग्री के रूप में और बाद मे शातिमय उत्कर्ष के लिए विश्व के विज्ञान को अपनी श्रेष्ठ भेंट दे सके, ऐसी प्रतिभा का आह्वान करें।

सभी जानकार बधुओं को समाज का नैतिक धैर्य बनाए रखना चाहिए। अपने सैनिकों के मनोबल को प्रोत्साहन देते रहना और जन-धन इत्यादि की सभी आवश्यकताएँ पूर्ति करने के निश्चय से जो-जो त्याग करना पडे, कठिनाइयाँ सहनी पडें, उन्हें आनद तथा उत्साह से सहने की मनोवृत्ति का पोषण, सवर्धन करना और राष्ट्र-प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए तथा अपने शासक नेता किसी के दबाव में आकर अपमानजनक सधि नही करेंगे, इस विश्वास से उनमें श्रद्धा रखकर इस युद्ध में भारत विजयी और गौरवान्वित बनकर बाहर आए, इसके लिए पूरी शक्ति से काया-वाचा-मनसा लक्ष्यप्राप्ति करने में लग जाना आवश्यक है।

सभी देशवासियों से मेरी प्रार्थना है कि हम विजय की कामना करें, विजय के लिए प्रार्थना करें, विजय के लिए असीम त्याग और परिश्रम करें। शौर्य व धैर्य प्रगट करें, ताकि निश्चित रूप से विजय मिले। पूर्ण विजय से छोटा ऐसा दूसरा कोई भी ध्येय अपने सामने नहीं होना चाहिए।

३ वक्तव्य

(२८ सितबर १९६५ को नई दिल्ली से जारी वक्तव्य)

हमने देश की सद्य स्थिति का विचारकर तथा अपनी सेना के साहस तथा शौर्य के समाचारों से परम सतोष की अनुभूति की, जो तेजस्वी एव प्रशसनीय रीति से उत्पन्न हुई है। उससे ससार की नजरों में अपने देश

के सम्मान की वृद्धि हुई है। योगदान करने हेतु सघ एक प्रमुख शक्ति के रूप में उभर रहा है।

तृप्ति का विषय

अपनी सरकार द्वारा प्रकटित सीमाओं की सुरक्षा का सकल्प तथा लोक-सम्मान का अवलबन अत्यत तृप्तिकर है। विविधतायुक्त अपने देश ने उन लोगों, जो इसके एकात्म स्वरूप को नहीं समझते, को विचलित कर दिया है। इस सकट काल में यह सगठित राष्ट्रपुरुष के रूप में खडा रहा है तथा इसने पुन एक बार अपनी अतर्भूत एकता को सिद्ध किया है, जो अपने देश के अमर महान भविष्य का आश्वासन है।

गभीरतम उत्तेजना के बावजूद शाति के लिए प्रयत्न जारी रखने की अपनी परपरा के अनुसार सरकार ने अपने कुटिल विरोधी पडोसी पाकिस्तान के साथ एक सम्मानजनक एव दीर्घकालिक समझौते से पूव युद्ध-विराम मान लिया है। जिस रेखा पर अपनी पराक्रमी सेनाएँ अत्यधिक बलिदान करने के बाद पहुँची थीं, उसपर श्री लालबहादुर शास्त्री नीत सरकार ने डटने की दृढता दिखाई है। यह ध्यान में आने पर प्रसन्नता की अनुभूति होती है, यही अपेक्षित भी था। ऐसी आशा है कि आगामी वार्तालाप में यह दृढता और अधिक प्रखर होगी।

सभी लोगों को यह बात ध्यान में रखनी होगी कि यद्यपि हमारी ओर से युद्ध-विराम का पूरी तरह से सम्मान करते हुए उसे लागू किया गया है, तथापि दूसरी ओर से शत्रुतापूण गतिविधियों पर कोई बधन नहीं आया है। ऐसा हो सकता है कि सीमाओं के विभिन्न क्षेत्रों में उनकी सशस्त्र कार्यवाही का हमें प्रत्युत्तर देना पडे तथा पुन वास्तविक युद्ध छिड जाए। अत हमें आत्मसतुष्ट होकर शिथिल नहीं होना चाहिए। स्वतत्रता का मूल्य शाश्वत सतर्कता है। हमें सशस्त्र सेनाओं को पूर्णतया युद्ध सन्नद्ध अवस्था में रखना है। नागरिक सुरक्षा के साथ-साथ असामाजिक तथा अराष्ट्रीय तत्त्वों के बारे में कडी सतर्कता व निगरानी से सबधित सभी गतिविधियाँ पूरे जोर से चलानी चाहिए, ताकि घुसपैठियों द्वारा सहायता प्राप्त गद्दारों को राष्ट्र की आतरिक सुरक्षा को खतरे में डालने का कोई अवसर न मिल सके।

इस सदर्भ में यह आवश्यक है कि हम सभी प्रकार की अलगाववादी प्रवृत्तियों से बाज आएँ और एकजुट रहें, ताकि शत्रु को लाभ उठाने हेतु कोई भी न्यूनता न मिल पाए। गत कई महीनों में अत्युत्तम रीति से प्रकटित

एकता व अखडता को भविष्य में भी बनाए रखने का निश्चय करें। हम सभी यह स्मरण रखें कि आगामी काल और अधिक सकटों से युक्त है। हमें युद्ध की अग्निपरीक्षा से गुजरना है। हममें से प्रत्येक को दृढ सकल्पित होना पडेगा, ताकि सभी प्रकार की कठिनाइयों को सहन करने व बलिदान देने के लिए सिद्ध हों। अपने उद्देश्य की पवित्रता तथा अतिम सफलता का विश्वास रख, इन सभी परीक्षाओं एव कष्टों को लॉघते हुए एक विजयी एव यशस्वी राष्ट्र के नाते खडे हों।

वर्तमान अनुभव ने हमें यह चिर-अपेक्षित पाठ सिखाया है कि अपने देश को सभी दृष्टियों से आत्मनिर्भर एव आत्मविश्वासयुक्त बनाने हेतु सदा उद्योगरत रहना होगा। हमें अपना युद्ध-सामर्थ्य विकसित करते हुए विदेशी निर्भरता से छुटकारा पाना होगा। यह स्वत सिद्ध तथ्य है कि कठिनाई व सकट के काल में मन व बुद्धि की सुप्त शक्तियाँ जागृत होती हैं तथा हमारे अपूर्व बुद्धियुक्त वैज्ञानिकों को समय की चुनौती को स्वीकारते हुए आविष्कार और अनुसधान सबधी कार्यो में जुटना चाहिए, जिससे युद्धकाल में हमें आवश्यक शस्त्र प्राप्त हो सकें। तभी हमारी सेना को विश्व की प्रगत सशस्त्र सेनाओं में माना जाने लगेगा। शाति के समय में इसे आर्थिक प्रचुरता एव समृद्धि की दिशा में परावर्तित एव निर्देशित किया जा सकता है। हम सब कृषक, श्रमिक, उद्योगपति तथा जीवन के अन्य कार्यक्षेत्रों में कार्यरत बधुओं को सभी जीवनावश्यक वस्तुओं की उत्पादन-वृद्धि का एक सकल्पित प्रयास करना होगा, जो दैनिक भोजन तक की आवश्यकता पूर्ति की वर्तमान परनिर्भरता से अपने देश को मुक्त कर सके। किसी न किसी रूप में युद्ध की स्थिति में बने रहने की वर्तमान दशा शीघ्र समाप्त होती नहीं लगती। इस दीर्घकालीन सघर्ष का सामना हमें धैर्य, साहस एव नित्य सिद्धता से करना है। सभी बधुओं को सर्वदा सुरक्षापरक, भावी सकटों के प्रति सजग तथा अपने महान राष्ट्रीय सम्मान एव समग्रता के लिए उपस्थित प्रत्येक चुनौती का मुकाबला करने हेतु तत्पर रहना होगा।

जिन्होंने इस पवित्र सघर्ष में वीरगति पाई तथा जो अनेकविध कष्टों को सहते हुए शूरवीरता से लडे, उन सभी के प्रति हमारी कृतज्ञ श्रद्धाजलि। हम अपने तेजस्वी हुतात्माओं तथा अपनी महान सेना के सभी श्रेणियों के सैनिकों के शौर्य के सम्मुख नतमस्तक होते हैं।

卐 卐 卐

४ सकलित भाषण

(अक्तूबर १९६५ की दिनाक १२ को जम्मू, १३ को अमृतसर १४ को लुधियाना और १५ को अबाला छावनी मे दिए गए श्री गुरुजी के भाषणो का सकलित वृत्त यहाँ दिया जा रहा है—)

बाहर से हुए आक्रमणों से भारत के सम्मान ओर समग्र राष्ट्रजीवन की रक्षा के लिए सामना करना और उसमें विजय प्राप्त करना अपने भाग्य में लिखा हुआ है। दो हजार वर्षो से भी अधिक का समय ऐसा बीता है, जब इन्हीं क्षेत्रों में बडे-बडे सग्राम होकर बडी-बडी विजय अपने लोगों ने प्राप्त की और भारत का सम्मान बढाया।

वही बात फिर से हो रही है। पिछले दो-तीन मास में देश की सीमा पर जो सघर्ष हुआ है, उसका भी योग्य ओर सम्मानपूण अत होगा, इसमें मुझे कोई सदेह नहीं है। अभी तो युद्धविराम चल रहा है, युद्ध का अत अभी नहीं हुआ है। यह तो मानो युद्ध के खेल में थोडी छुट्टी बीच-बचाव की चेष्टा करनेवाले लोगों ने दिलाई हे। इसके अनेक पहलू हैं। एक पहलू यह भी है कि अपने पर आक्रमण करनेवालों को साँस लेने तथा नष्ट हुए शस्त्रास्त्रों की पूर्ति करने का प्रयत्न करने का समय मिल जाए। बातों-बातों में भारत के लोग सब कुछ भूल जाएँगे ओर फिर से भाइचारा करने के लिए तैयार हो जाएँगे। हमारी इस प्रवृत्ति का लाभ उठाकर वे फिर से हमला कर सकेंगे, ऐसी भावना शायद उनके मन में हो। इस दृष्टि से विचार करें तो कहना पडेगा कि युद्धविराम इस समय न होकर दस-पद्रह दिनों के बाद होता और अपनी सेनाएँ इसी प्रकार बेरोकटोक आगे बढतीं, तो आज ससार में अपने बारे में जो कुछ चित्र दिखाई पडता हे, वह सर्वथा बदल जाता।

अपने इस अमृतसर से लेकर लाहौर के क्षेत्र में अपनी सेनाएँ आगे बढीं और कुछ दूर जाकर रुकीं। इसका एक कारण दूसरे पक्ष की ओर से अपनी सेना की प्रगति रोकने का प्रयत्न किया जाना हे। साथ ही एक कारण यह भी है कि सयुक्त राष्ट्र सघ के महामत्री यहाँ पर आए थे। अमरीका-इग्लैंड अपने प्रतिकूल दिखाई देते थे और रूस ने भी लडाई बद करने के पक्ष में अपना रुख दिखाया था। इन बातों के परिणामस्वरूप हमें युद्धविराम करना ही पडेगा अत आगे बढकर और हानि क्यों उठाएँ— ऐसा सोच कर अपने नेताओं ने सेना को आगे बढने से रोका होगा, ऐसा

सदेह मेरे मन में है। ऐसा हुआ हो, तो भी वह ठीक नहीं हुआ। यदि सेना को आगे बढने दिया जाता तो थोडी और कीमत चुकानी पडती। अभी कोई कम कीमत चुकाई गई है, ऐसी बात नहीं है। सर्वसामान्य लडनेवाले सिपाही ने भी अपने पौरुष और पराक्रम से अपनी श्रेष्ठता ससार के सामने प्रकट करते हुए प्राणार्पण किए हैं, यह हम लोग जानते हैं। सर्वसामान्य जनता ने दृढता के साथ सेना का साथ दिया है। सभी प्रकार से सेवा, देखभाल और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति की है। शत्रु के द्वारा जो आक्रमण और बमवर्षा हुई, उसमें सामान्य नागरिक भी मारे गए।

युद्धविराम की बात निश्चित हो जाने के पश्चात् भी अमृतसर के पास जो बमवर्षा हुई और उसके कारण जो नुकसान हुआ, वह यहाँ के लोगों को बताने की आवश्यकता नहीं। वस्तुत यह अपेक्षित भी था। जिस समय मुझे मेरे एक मित्र ने बताया कि युद्धविराम करना दोनों पक्षों ने मान लिया है, तब मैंने उनसे कहा था कि यह समय ऐसा है कि बहुत सतर्क रहना पडेगा, क्योंकि इस समय ये लोग बहुत बडा हमला करेंगे। जाते-जाते वे लातें झाडे बिना जाएँगे नहीं। किसी न किसी क्षेत्र में बहुत बडे हमले का लक्षण दिखाई देता है। अपना भी यह कर्तव्य है कि इस समय बहुत अच्छा सशक्त हमला करके उनको भी एक अच्छा सबक सिखाया जाए। यदि थोडा मूल्य और चुकाते तथा ८-१० दिन बातें करते-करते निकाल लेते और तब तक हमारी सेना यदि लाहौर व स्यालकोट, उधर कराची की ओर जोरदार हमला कर देती, तब युद्धविराम की जो परिस्थिति आज अपने को देखने को मिल रही है, उससे बिलकुल अलग चित्र देखने को मिलता। आज स्थिति यह है कि अपने पर आक्रमण करनेवाला पाकिस्तान और हम जो अपने स्वत के सम्मान की रक्षा के लिए खडे हैं– दोनों को समान माना गया है, अर्थात् आक्रमणकारी को आक्रमणकारी नहीं कहा, उल्टा हम लोगों को ही आक्रमणकारी कहने के लिए वे तैयार हो गए क्योंकि हम लोगों ने उसकी सीमा लाँघकर अपनी सेना को आगे बढाया है।

वो जीते जो आगे मारे

वास्तविक रीति से सीमा लाँघकर अपनी सेनाओं को आगे बढाना तो अपनी रक्षा का एक मार्ग था। अपनी रक्षा अपनी सीमा के अदर कोई कर नहीं सकता, क्योंकि अपनी सीमा के अदर शत्रु घुसता चला जाए, अपने को मारता चला जाए और हम अपनी रक्षा करते बैठें, यह बात कभी

ससार में हुई नहीं। प्रतिपक्षी पर आक्रमण करने में ही वास्तविक सुरक्षा है। जब मैं पढ़ता था, उन दिनों एक वाक्य पढ़ा था 'ऑफेन्स इज द वेस्ट फॉर्म ऑफ डिफेन्स', याने अपनी रक्षा के लिए आक्रमणकारी पर पहला हमला करो। हिंदी में भी एक ऐसी ही कहावत है 'वो जीते, जो आगे मारे।' अपनी स्वत की रक्षा की दृष्टि से सीमा को पार करना अपनी सेना के लिए आवश्यक हो गया था। राष्ट्र के सम्मान की रक्षा के लिए शत्रु की सीमा में जाकर हमने युद्ध किया, यह सर्वथा शास्त्रशुद्ध बात हुई है। इससे यदि कोई कहे कि हम लोगों ने आक्रमणकारी वृत्ति का अवलव किया है, तो वह सर्वथा गलत है। सयुक्त राष्ट्र सघ में बैठे हुए बडे-बडे देशों के बुद्धिमान लोगों ने इतनी बुद्धिहीनता की बात कैसे की, इसका मुझे आश्चर्य होता है।

पक्षपाती सयुक्त राष्ट्र सघ

जब से सयुक्त राष्ट्र सघ बना है, मैंने कभी उस पर विश्वास नहीं किया, अब भी विश्वास नहीं है। मुझे यही दिखाई देता था कि बडे-बडे शक्तिशाली देश अपनी राजनीति चलाने और अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए उसे एक अखाडा मानते हैं। कश्मीर का ही मामला लें। राष्ट्र सघ की न्यायप्रियता और शातिप्रियता पर अपने हृदय में भोला विश्वास रखकर देश के नेताओं ने कश्मीर का प्रश्न उसके सामने रखा। परतु इन १८ वर्षों में किसने आक्रमण किया, इसके विषय में उसने एक शब्द भी नहीं कहा है। इन्हीं दिनों महामत्री ऊ थाट ने एक वक्तव्य में कहा था कि इस समय हमारे सामने कश्मीर के विषय में विचार करने के लिए समय नहीं है, अर्थात् फिर से एक बार कश्मीर को राजनैतिक दॉवपेच का अखाडा बनाने की उनकी इच्छा दिखाई देती है। कभी उन्होंने यह नहीं सोचा कि कश्मीर तो भारत का अग ही है, उसके विषय में विचार करने का अन्य किसी को अधिकार नहीं। इसका अर्थ यह है कि वे स्वय अत्याचारी एव पक्षपाती बन जाते हैं।

इतना होते हुए भी मेरा ऐसा विश्वास है कि इन दिनों अपने लोगों ने यदि थोडा आगे बढकर लाहौर जैसा स्थान स्वाधीन कर लिया होता, तो उनकी दृष्टि बदल जाती। तब उन्होंने विचार किया होता कि यह जो पाकिस्तान नाम की वस्तु है, उसको सभी प्रकार का समर्थन देने का कोई अर्थ नहीं। वह एक दुर्बल, निकम्मा, दूसरों की दया पर जीवित रहनेवाला, कृत्रिमता से बना हुआ राज्य है और इसलिए उसके भरोसे एशिया, जिसमें कम्युनिज्म का खतरा है, में अपनी रक्षा होने की सभावना कदापि नहीं।

उसके लिए तो भारत जैसे विशाल, प्रबल, विजयशाली देश, जो प्रजातंत्र आदि श्रेष्ठ बातों में विश्वास रखता है, का समर्थन करना चाहिए। ऐसा परिवर्तन उनके मन में अवश्य होता।

इस युद्ध के बारे में और एक बात सोचनी चाहिए। पिछले हजार-पंद्रह सौ वर्षों के इतिहास में परकीय आक्रमणकारी छोटी-छोटी सेनाएँ लेकर यहाँ पर आए। उनको जहाँ विजय प्राप्त करना संभव हुआ, वहाँ वे अपने राज्य जमा सके। हम लोगों में से ही कई लोग प्राणों के भय से उनके मजहब में जाकर, अपने ही शत्रु बनकर खडे हो गए। कई लोग तो बड़ी बहादुरी के साथ डींग भी हाँकते हैं कि हिंदू तो सदा पराजित होनेवाला है, वह कभी जीतता ही नहीं। इन दिनों पाकिस्तान में थोडा-बहुत इसी प्रकार का वातावरण था कि हिंदू तो सदा मार खानेवाले हैं और हमने उन्हें मारकर पाकिस्तान बनाया, आगे भी मारकर बाकी का हिंदुस्थान ले लेंगे। इस प्रकार की बातें उन्होंने कई बार कही भी हैं, परंतु एक बात उन्होंने सोची नहीं कि जिन लोगों के द्वारा पाकिस्तान बनाया गया और जिन लोगों के लिए बनाया गया, वे कोई ईरान या तुर्कस्थान से नहीं आए। वहाँ से आए हुए लोग शायद पराक्रमी होंगे, उन्होंने यहाँ आकर शायद लडाई में विजय भी प्राप्त की होगी, परंतु जिनके लिए पाकिस्तान बना, उनमें से बहुत से ऐसे हैं, जो पहले हिंदू थे और आक्रमणकारी के सामने डर गए और उनकी मार से परास्त होकर उनकी शरण में गए। अर्थात् जो कायर, दुर्बल, भीरू या स्वार्थी थे, राष्ट्रभक्ति के बारे में जिनका मनोबल प्रबल नहीं था, ऐसे लोग ही यवन बने। उन्होंने तो हिंदू-समाज को कभी पराजित नहीं किया। उन्होंने कभी कोई लडाई भी नहीं जीती। उन्होंने अधिक से अधिक कुछ किया होगा तो हिंदू-समाज को छोडकर शत्रु से मिले और उनके दास बन गए तथा अपने ही राष्ट्र के विरोध में खडे हो गए। उन्हें तो कहने का कोई अधिकार नहीं कि हमने हिंदुओं को जीता है।

विकृत इतिहास

दुर्भाग्य से पिछले कई वर्षों से जो पढाया गया है, उसमें अपने पराक्रम और विजय का इतिहास नहीं है। बचपन में मैंने भी जो इतिहास पढा, उसमें भारत के इतिहास के तीन खंड बताए जाते थे। पहले खंड का नाम 'पुरातन भारत' था। उस काल को 'गडबड का अंधकारमय काल' कहकर 'द डार्क एज' नाम भी दिया गया। कोई बडे लोग नहीं हुए, कोई

धर्म नहीं था, संस्कृति-सभ्यता नहीं थी, सब जंगली व्यवहार था- ऐसा उस काल का वर्णन किया गया है। वास्तविकता तो यह है कि उन्हीं दिनों में चंद्रगुप्त और अशोक जैसे महापुरुष उत्पन्न हुए, भगवान बुद्ध और भगवान महावीर जैसे महापुरुषों ने जन्म लिया। किंतु ऐसा होते हुए भी उसको 'अंधकार का युग' कहकर हमारे मन पर विपरीत प्रभाव डालने का प्रयत्न परकीय राज्य-सत्ता ने किया।

इसी प्रकार दूसरे कालखंड को उन्होंने 'मुगल काल' कहा। इस काल में सिंध में हुए प्रथम आक्रमण से लेकर मुगल सल्तनत के अंतिम दिनों तक कुछ शताब्दियों का काल आता था। उसमें वर्णन किया गया कि मुस्लिम शासक बडे विजयशाली रहे, उन्होंने बडे साम्राज्य खडे किए, उनमें बडे महापुरुष हुए और वे सभी प्रकार से अच्छे थे, जबकि उसी कालखंड में विजयनगर का साम्राज्य था, पर उसका वर्णन एक छोटे से अध्याय में किया गया। छत्रपति शिवाजी हुए, परंतु उनका एक बागी के नाते थोडा सा वर्णन किया है। महाराजा छत्रसाल हुए, उनको तो, एक क्षुद्र विद्रोही के अतिरिक्त और कोई स्थान नहीं दिया। इसी कालखंड में गुरु गोविंदसिंह हुए, उनको तो एक पंथ निर्माण करनेवाले और बीच-बीच में कुछ बगावत करनेवाले से अधिक स्थान इतिहास में नहीं दिया गया। हमें दिखाई देता है कि अपने पौरुष और पराक्रम के जितने भी प्रसंग थे, उन्हें छिपाकर और दबाकर केवल परकीय आक्रमणकारियों का गुणगान करनेवाला विकृत इतिहास ही हमें सिखाया गया।

उसके बाद 'अंग्रेजों का काल' था और वहीं पर इतिहास समाप्त हो गया। उसको पढने से दिखाई देता है कि 'हिंदू' नाम का समाज जब से पैदा हुआ तब से मार ही खाता आया है। उसमें कोई अक्लमंदी नहीं, किसी प्रकार की शक्ति नहीं, पराक्रम नहीं, उसको राज्य चलाना आता नहीं। वही इतिहास हमें सिखाया गया। इसीलिए सबके मन पर यही भाव रहा कि हम तो सदैव पराजित होनेवाले हैं। महात्मा जी ने भी कहा था कि 'प्रत्येक मुसलमान बहादुर है और प्रत्येक हिंदू कायर।' एक बात अगर वे और कह देते तो अच्छा होता। जिसको लोग अंग्रेजी में 'बुली' कहते हैं, वह स्वयं कायर होता है, इसलिए उद्दंडता करता है। सत्यवीर पुरुष कभी उद्दंडता नहीं करता। पर शायद उन्होंने सोचा कि जनता इसे समझ लेगी, स्पष्ट शब्द बोलने की उन्हें कोई आवश्यकता नहीं।

वज्रादपि कठोराणि, मृदूनि कुसुमादपि

अभी जो लडाई हुई उसने यह सारा चित्र वदल दिया है। अव लोगों की समझ में आ गया कि बिल्कुल शात और चुपचाप वेठा हुआ, वहुत ही नम्रता से व्यवहार करनेवाला यह हिंदू-समाज जितना नम्र है, उतना ही कठोर भी है। जितना सव लोगों के साथ भाईचारा करने के लिए उत्सुक है, उतना ही कठोर प्रहार करने की ताकत भी अपने अदर रखनेवाला है। भले ही वह स्वय किसी पर आक्रमण न करे। अपने यहॉं तो वीर पुरुषों का प्राचीनकाल से यह कहना है कि 'भाई, तुम पहले मारो, तुम अपनी मारने की ख्वाहिश पूरी कर लो, क्योंकि अगर मैंने पहले मारा तो तुम वाद में मारने के लिए बचोगे नहीं।' हमारे यहॉं वीर पुरुषों की ऐसी परपरा रही है कि हम किसी पर आघात करने के लिए अपने घर से दोडकर नहीं जाते, परतु अगर कोई आघात करने आता है, तो फिर उसको जिस प्रकार से दड देना चाहिए, वह देने की क्षमता, शक्ति, पात्रता, प्रवृत्ति अपने अदर है।

राष्ट्र-पुरुष का साक्षात्कार

इस युद्ध के समय एक वहुत बडी वात हुई है। शताब्दियों पूर्व विजयनगर साम्राज्य के समय अपने पूर्वजों ने पश्चिम समुद्र से पूर्व समुद्र तक साम्राज्य प्रस्थापित कर, उत्तर से आई इस्लाम की लहर को रोक दिया था, परतु यह प्रयत्न हिदुस्थान के कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित था। छत्रपति शिवाजी के सामने यद्यपि समग्र हिदुस्थान था ओर वे कहते थे कि अटक से दक्षिण में रामेश्वर तक हिदुस्थान हिदुओं का है। फिर भी इतिहासकार उनके वारे में कहते हैं कि वह तो मराठों का राज्य था। पजाब में महाराजा रणजीतसिह हुए हैं। कुछ लोग भ्रम से कहते हैं कि वह तो सिखों का राज्य था। समग्र भारत कश्मीर से कन्याकुमारी तक एक-दूसरे के साथ कधे से कधा लगाकर खडा हो, ऐसी स्थिति शायद पिछले हजार-वारह सो वर्षो में कभी देखने को नहीं मिली। यह सोभाग्य इस बार अपने को प्राप्त हुआ है। यह वात हम पिछले चालीस वर्षो से कहते आ रहे हैं कि आसेतु-हिमाचल समग्र समाज अपना एक विराट पुरुष की भॉंति खडा है। इसकी सैंकडों भुजाएँ, सेंकडों सिर, सैंकडों ऑंखें, सेंकडों पेर हैं, पर इसकी आत्मा एक है, हृदय एक है, इस प्रकार का यह विराटपुरुष अजेय शक्तिसपन्न बनकर खडा रहे। मानो ईश्वर की कृपा से यह सोभाग्यपूर्ण अवसर अपने को

देखने के लिए मिला है। इसका हम सब लोगों को गर्व होना चाहिए। इस दृष्टि से यह युद्ध हमारे लिए एक वरदान सिद्ध हुआ है। इसके कारण अपने हृदय की सुप्त एकात्मता की, राष्ट्रभक्ति की भावना जाग पडी। फिर उत्तर से दक्षिण तक सब लोग खडे होकर 'यह अपना राष्ट्र है, अत इसकी रक्षा के लिए हम लोग कटिबद्ध होकर लडेंगे', इस भावना से सपूर्ण भारत से लोग सेना में भर्ती होने के लिए आए। सब कहने लगे कि 'शत्रु को खदेड देंगे, उसका गर्व तोड देंगे'। सर्वसामान्य जनता ने भी सहयोग किया। घर की रोटियाँ भी फौजियों को खिलाईं। ट्रक द्वारा सामान पहुँचानेवाले कितने ही ट्रकचालकों ने प्राण खतरे में डालकर बिलकुल मोर्चे तक जाकर सब प्रकार की सामग्री पहुँचाई।

सेना विश्वसनीय, पर राजनेता नहीं

भारतीय सेना के बारे में पहले किसी के मन में सदेह भले ही रहा हो कि वह कैसी लडती है? लेकिन अब तो शायद किसी के मन में सदेह नहीं रहा है। मेरे मन में तो अपनी सेना के बारे में सदेह कभी था ही नहीं। मुझे स्मरण है कि कुछ वर्ष पहले जब चीन का आक्रमण नहीं हुआ था, परतु उसकी ओर से खतरा दिखाई देने लगा था, उस समय मैं एक बडे नेता से इस बारे में बात कर रहा था। उन्होंने बडे आवेश में आकर कहा, 'क्या तुम्हें अपनी सेना पर विश्वास नहीं है।' उनकी बात का उत्तर देते हुए मैंने कहा कि 'मेरा सेना पर तो पूरा विश्वास है, परतु राजनीति के धुरधर पडितों पर नहीं है। सेना तो विजय प्राप्त कर लेगी, लेकिन वे (राजनीति-धुरधर) बैठे-बैठे पीछे हट जाएँगे। उन्होंने पूछा, 'यह आप कैसे कहते हैं?' मैंने कहा, 'आज से २८ साल पहले कश्मीर में अगर सात-आठ दिन लगा देते तो सयुक्त राष्ट्र सघ में जाने की समस्या अपने सामने खडी नहीं होती। उसी समय अच्छी मार खाकर पाकिस्तान के होश ठिकाने आ जाते। उस समय अपने लोगों ने कदम पीछे ले लिया। पता नहीं कहाँ से शाति की बात चलाकर अपनी सेना की बहादुरी और कुर्बानी सब मिट्टी में मिला दी।'

उसी प्रकार से विद्वान और बुद्धिमान लोगों को सोचना चाहिए कि यह लडाई अपने लिए बडा उत्तम अवसर है। यदि हम लोग विगत कुछ लडाइयों का विचार करेंगे तो हमें दिखाई देगा कि अत्यत उत्तम हवाई जहाजों की आवश्यकता अनुभव हुई, तो लोगों ने बनाए। लडाई के कारण ही यह 'एटम बम' इत्यादि बनाने की पात्रता लोगों के अदर आई। दुनिया

के बडे-बडे देशों ने यह किया। जब-जब युद्ध हुआ तब बुद्धिमान लोगों की बुद्धि काम में आई। उन्होंने परिस्थिति का आह्वान स्वीकार किया, उस परिस्थिति पर विजय प्राप्त करने के लिए नए-नए आविष्कार किए और अपने देश को श्रेष्ठ बनाया। अपने देश में भी बुद्धि की कोई कमी नहीं है। मेरा सब बुद्धिमान लोगों को अत्यत नम्रतापूर्वक आह्वान है कि हम भी अपनी बुद्धि का प्रयोग कर अपने देश की स्वतत्र प्रतिभा से ऐसे आविष्कार करें कि युद्ध और शाति के समय हम अपने देश को आत्मनिर्भर और ससार में सब प्रकार से श्रेष्ठ बना सकें। उसके लिए जितने धन की आवश्यकता पडे, उतना जुटाना चाहिए। जितना परिश्रम करना पडे, उतना करना चाहिए।

राष्ट्र के सम्मान की चाह

यही सकट फिर से आने की सभावना है। यह युद्धविराम ज्यादा देर टिकने की आशा नहीं। फिर से एक बार लडाई शुरू हो सकती है। यह जितनी शीघ्र होगी उतना अपने लिए अच्छा ही है। और यह हो, ऐसी मेरी इच्छा भी है। आप कहेंगे कि 'मैं बडा युद्ध-पिपासु हूँ।' मैं युद्ध-पिपासु नहीं हूँ, परतु भारत के सम्मान और रक्षा के लिए जो-जो आवश्यक है, वह सब करना चाहिए और उसमें किसी प्रकार की मन में झिझक नहीं आने देनी चाहिए।

लड़ाई के द्वारा ही हमारी, परतु हमसे बिछुडी हुई भूमि को फिर से एक बार हम प्राप्त कर सकते हैं। इस लडाई के समय हमारे नेताओं ने कहा कि 'हमें दूसरे की भूमि नहीं चाहिए'। ठीक है, पर अपनी ही भूमि हमें चाहिए। पजाब, सिध, बगाल यह हमारा ही है। अपने नेता कुछ भी बोल सकते हैं, पर मेरे समान सामान्य व्यक्ति शत्रु द्वारा बलपूर्वक कब्जा किए गए स्यालकोट, लाहौर और कश्मीर के भाग को परकीय क्षेत्र नहीं मानता। लाहौर में रावी के किनारे अखड भारत की स्वतत्रता की प्रतिज्ञा अपने प्रथम प्रधानमत्री और उस समय के काग्रेस के अध्यक्ष प नेहरू ने की थी। यदि वह शत्रु की भूमि होती तो वहाँ भारत की स्वतत्रता की प्रतिज्ञा कैसी ली जाती? इसलिए लाहौर, स्यालकोट पराया नहीं है। मुलतान तो अपना मूलस्थान है। यह समग्र प्रदेश अपना ही है। इस अपनी भूमि को फिर से एक बार स्वाधीन करना हमारा स्वाभाविक जन्मसिद्ध और न्यायसिद्ध अधिकार है। उसको प्राप्त करने का प्रयत्न न करना, भारतमाता

की परिपूर्ण मूर्ति निर्माण करने में बाधा डालता है। इसलिए जो भूमि अपने से बिछुड़ी है, उसे फिर से एक बार अपनी भूमि के समग्र शरीर में जोड़ लेने का काम अपने को करना चाहिए।

युद्ध का उद्देश्य

लोकसभा में कहा गया है कि हमारा पाकिस्तान के साथ, अर्थात् पाकिस्तान की जनता के साथ कोई झगड़ा नहीं है। हमें केवल उसकी युद्ध करने की शक्ति जो दूसरे देशों खासकर अमरीका से मँगाए हुए शस्त्रास्त्रों के कारण है, जिसके बलबूते पर वह घुड़कियाँ देता है, नष्ट करना है। अपनी सेना ने बहुत बहादुरी से बड़ी कुरबानी देकर, उसका बहुत अधिक 'वार पोटेन्शियल' नष्ट किया भी है। अमरीका के लोग तो आश्चर्य से देखते रह गए कि अजेय, अभेद्य समझे जानेवाले उनके 'पैटन टैंक्स' दियासलाई की डिब्बी के समान कैसे टूट गए? हमने तो यन्त्र के विरुद्ध आदमी लडाया। यन्त्र तो आदमी द्वारा बनाया जाता है। आदमी के सामने यन्त्र टिक नहीं सकता।

आज उसके शस्त्रास्त्र समाप्त भी हो गए होंगे, पर सदा के लिए यह स्थिति नहीं रहेगी। पाकिस्तान की सभी प्रकार की सहायता कर, उसको भारत के लिए हमेशा का एक सिरदर्द बनाकर रखने में अमरीका और इग्लैंड आदि देश प्रयत्नशील हैं। भारत एकरस रहे, बलवान रहे, यह उन्हें फूटी ऑखों नहीं सुहाता, क्योंकि वे चाहते हैं कि बाकी के देश किसी न किसी महाशक्ति के पिछलग्गू बने रहें। वे पाकिस्तान को फिर से एक बार शस्त्रास्त्र देकर बलवान बनाएँगे। यदि उसको फिर से शस्त्रास्त्र देकर खडा किया गया, तो हम दुबारा उससे लडने के लिए जाएँ, अपने नागरिक, सेनापति, सिपाही मरवाएँ– ऐसा कब तक चलेगा? जब तक अमरीका आदि देशों का 'वार पोटेन्शियल' खत्म नहीं होता तब तक यही चलता रहेगा। अमरीका का 'वार पोटेन्शियल' समाप्त करना कोई आसान बात तो है नहीं। तो पाकिस्तान का शस्त्रादि का 'वार पोटेन्शियल' नष्ट करेंगे, कहने का कोई मतलब नहीं।

पाकिस्तान का वार पोटेन्शियल

क्या असली 'वार पोटेन्शियल' शस्त्रास्त्रों से आता है? मनुष्य के पास विपुल मात्रा में शस्त्र रहे, लेकिन लडने की इच्छा ही नहीं रही, तो

लडाई हो नहीं सकती। इसलिए 'वार पोटेन्शियल' शस्त्रों पर निर्भर नहीं, मनुष्य की 'मनोवृत्ति' पर निर्भर रहता है। मनुष्य में यदि 'वार मेंटेलिटी' रही, तो वह आज नहीं, कल लडे बगैर नहीं रहेगा। हम विचार करें कि पाकिस्तान का असली 'वार पोटेन्शियल' क्या है?

'वार पोटेन्शियल' मनुष्य की विशिष्ट प्रकार की मनोरचना में रहता है। पाकिस्तान के अलग राज्य के रूप में खडा होने के कारण ही लडाई-झगडे के प्रसग उपस्थित होने लगे। लडाई न हो ऐसी अगर किसी के मन में इच्छा हो तो उसको यही कहना पडेगा कि पाकिस्तान खत्म होना चाहिए।

लोग कहते हैं कि क्या तुम पाकिस्तान के अस्तित्व को ही नष्ट करना चाहते हो? मैं कहूँगा 'हॉ। इसके अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं।' मैं तो मुँहफट आदमी हूँ, सीधा बोलता हूँ। भगवान राम के सामने भी ऐसी ही समस्या उपस्थित हो गई थी। रावण के साथ अतिम युद्ध के समय उन्होंने रावण का एक सिर काटा तो दूसरा आया, दूसरा काटा तो फिर से आ गया। सिर कितनी बार काटते, अततोगत्वा उन सब सिरों का नाश करने के लिए प्रभु रामचद्रजी को उसके हृदय में बाण मारकर उसके प्राण हरण करने पडे।

जैसा अपने नेता कहते हैं, पडितजी भी कहते थे, पाकिस्तान का निर्माण द्वेप में से हुआ है। जो देश शत्रुता के बीज बोकर बना हो, उसके फल भी द्वेप और शत्रुता के ही होंगे।

अहिदुओ का क्या होगा?

लोग पूछने लगते हैं कि वहाँ के इस्लाम-भक्तों का क्या होगा? किंतु मेरा ऐसा विश्वास है कि वहाँ किसी में इस्लाम या भगवान की भक्ति नहीं है। यदि ये लोग इस्लाम से प्रेम करते और उनका भगवान में विश्वास होता, तब उनके चरित्र से वैसा दिखाई देता। वे अपने देश का नाम 'पाकिस्तान' न रखते। वह पाकिस्तान है, तब क्या बाकी के इस्लामी देश नापाक हैं? उनका मक्का-मदीना नापाक है? ये तो भारत से शत्रुता और घृणा करनेवाले लोग हैं। उनकी यह वृत्ति नष्ट करने से केवल हमारा ही नहीं, उनका भी भला है। इससे उनमें मनुष्यता, सद्भावना आएगी। वे दूसरों के इशारे पर भारत के विरुद्ध घृणा और शत्रुता का भाव रखते हैं। अत जब पाकिस्तान ही नहीं रहेगा और वह भारत में मिल जाएगा, तब

वे हमारे देश का अंग बनकर आदमी बन जाएँगे।

पाकिस्तान के खत्म होने से इस्लाम खतरे में पड़ जाएगा, यह सोचना भी गलत है। इतिहास गवाह है कि हिंदुओं से इस्लाम को कभी खतरा नहीं पहुँचा। बल्कि भारत में तो मुसलमानों की हद से ज्यादा खातिरदारी हुई है। भारत में बड़े-बड़े साम्राज्य स्थापित हुए, उनमें भी मुसलमानों को कभी कष्ट नहीं पहुँचा। शिवाजी की सेना में मुसलमान सेनापति रहा करता था। पानीपत की तीसरी लड़ाई में अहमदशाह अब्दाली के विरुद्ध जो सेना लड़ी थी, उसमें इब्राहिम और समशेर नाम के सेनापति थे। आज भी हमारे यहाँ हिंदू, मुसलमान व ईसाई में कोई भेदभाव नहीं किया जाता। ऐसा भी नहीं कि ये लोग इस देश को कम प्यार करते हैं। हाल की लडाई में ईसाई और मुसलमान भी वैसे ही लडे, जैसे और लोग। यह भारतीय जीवन की श्रेष्ठता है। यहाँ आकर पाकिस्तान के मुसलमान संतोष और शांति से रह सकते हैं। परन्तु देश के अंदर रहकर या इसके बाहर से इसकी शत्रुता करेंगे तो उनके खिलाफ हम बोलेंगे, उनकी शत्रुता का समर्थन नहीं किया जा सकता। वे शत्रुता करें और हम भाई कहें, इस प्रकार की विचित्र बात करने के लिए हम तैयार नहीं। मजहब से हमारी कोई आपत्ति नहीं। हम तो उनसे इतना ही चाहते हैं कि वे ईमानदार रहें। हम न किसी की उपासना की पद्धति बदलना चाहते हैं और न ही एक समाज के नाते उनका अस्तित्व नष्ट करना। लेकिन हमारे देश को काटकर अपने से शत्रुता करने के लिए बने हुए अलग राज्य की समाप्ति हम जरूर चाहते हैं।

एकात्मता के पोषण की आवश्यकता

यह केवल कहने से होनेवाला नहीं है। उसके लिए समग्र हिंदू समाज संगठित और अनुशासनबद्ध, सदैव जागृत, परस्पर की सहायता के लिए सिद्ध चाहिए। इस समाज का जो एकात्म-भाव इस लडाई में देखने को मिला, वह उसकी सहज स्थिति हे और वह अविचल बनाकर रखनी चाहिए। इस एकात्मता को भाषा, पंथ, जाति या अन्यान्य स्वार्थो के कारण किसी की नजर न लगे, इसकी चिंता हमें करनी चाहिए, क्योंकि समाज में आज भी विभेदकारी प्रवृत्तियाँ प्रचुर मात्रा में दिखाई देती हैं। समाज के सब अंगों में आत्मीयता ओर प्रेम का संबंध दिखाई नहीं देता। इसके साथ ही गॉंव-गॉंव में कितना दारिद्र्य दिखाई देता है। वहाँ लोगों को दो बार भोजन

भी नहीं मिलता। उन्हें लज्जारक्षण के लिए वस्त्र नहीं, रहने के लिए स्थान नहीं है। वे सडक के किनारे जैसे-तैसे सर्दी में अपने शरीर को समेटकर पडे रहते हैं। अनेक लोग भूख से मर रहे हैं। मेरा प्रश्न है कि यह सब देखने के बाद बाकी के अपने बधुओं से अन्न कैसे खाया जाता है। शरीर-धारणा और समाज की सेवा के लिए आवश्यकता के अनुसार कुछ खाना अलग बात है ओर बडे चाव से खाना अलग बात है।

आपसी झगडे करने के लिए भी लोग खडे होते हैं। अपने देश में सभी प्रातों के सभी भाषा-भाषी लोगों को एक-दूसरे के साथ जोडने के लिए हमें एक व्यवहार-भाषा अपनानी चाहिए। विदेशी भाषा ही अपने को जोडने के लिए रहे, यह अपने लिए लज्जा की बात है। समझदार लोगों ने कहा कि हिंदी भाषा अधिकतर समझी जाती है, दक्षिण में भी थोडी मात्रा में समझी जाती है। अत इसी भाषा को हम सब मिलकर अपनी व्यवहार-भाषा के रूप में समृद्ध करें। परतु दक्षिण में कुछ लोगों ने अग्रेजी के प्रेम के वश होकर हिंदी भाषा के विरोध में आदोलन छेड दिया। वहाँ के एक अखिल भारतीय कीर्ति के नेता ने दूसरे एक नेता से कहा कि 'अब तो हमें इस भारत के दो टुकडे कर उत्तर का हिंदीवालों का अलग हिस्सा और दक्षिण का हम लोगों का अलग हिस्सा करना पडेगा।' विभाजन के द्वारा एक बार बडा अपमान हो चुका है। उस कारण अपने देश की स्थिति बडी नाजुक बन गई है, इसके उपरात भी वे दुबारा इस प्रकार विभाजन करने की बात कर सकें, यह मातृभूमि की कैसी भक्ति है? यह तो उसकी विडबना है।

समाज के किसी हिस्से की कठिनाई देखकर अपना लाभ उठानेवाले लोग क्या वास्तविक रीति से राष्ट्र पर प्रेम करते हैं। चीन हमले के समय जब उसकी सेना असम में तेजपुर से लगभग ४०-५० मील दूरी पर थी, तब भय से हडकप मच गया। पुलिस, मजिस्ट्रेट वगैरह सबसे पहले भाग गए। उन्होंने लोगों को बताया कि अपनी सुरक्षा अपने-आप करो। ऐसे समय सभी लोगों का कर्तव्य था कि अपने सकटग्रस्त भाइयों को सुरक्षित स्थान पर ले जाते, परतु सामान्य रिक्शावालों ओर नाववालों ने भी सवारियों से अनाप-शनाप पैसे लिए। अपने भाइयों की कठिनाइ से लाभ उठाने की प्रवृत्ति क्या राष्ट्र की एकात्मता का बोध है?

सघकार्य के सबध में विशेष न बताते हुए भी सब बातें अपने आप ध्यान में आ सकेंगी, क्योंकि सघ का प्रारभ से आह्वान है कि राष्ट्रजीवन

का सुगठित सामर्थ्य अपने को उत्पन्न करना है। भारतमाता की प्रबल भक्ति अपने अदर जागृत करनी है, समग्र हिंदू-समाज के प्रति बधुत्व की भावना भरनी है, अनुशासनबद्ध सामथ्य के रूप में हिमाचल से लेकर कन्याकुमारी तक एक भव्य विराट, अजेय, शक्तिशाली राष्ट्रपुरुष खडा करना है और सघ यह काय निरतर कर रहा है।

卐卐卐

५ सार्वजनिक भाषण, दिल्ली

(दिल्ली के लालकिला मैदान पर हुई सार्वजनिक सभा म १४ नवबर १९६५ को दिया गया भाषण)

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का कार्य गत ४० वर्षो से चल रहा है। हिंदू-समाज को सगठित कर उसे शक्तिशाली बनाने का कार्य प्रारभ हुआ। हिंदू-समाज को शक्तिशाली बनाने के इस सकल्प का कारण समझना कुछ कठिन नहीं है। हम लोगों ने हिंदू समाज में जन्म पाया है। समाज के प्रति हमारा कुछ कर्तव्य है। हमारे ऊपर कुछ दायित्व आता है। उसे पूर्ण न करते हुए, अपने जीवन में केवल सुखोपभोग करते रहना कृतघ्नता होगी। अत अपने समाज के लिए हमें सपूर्ण शक्ति लगाकर अत करणपूर्वक उसकी भलाई का काम करना चाहिए।

अपने लोग कहते हैं कि हमें तो पाप से घृणा करनी चाहिए। पाप को मारो, उस पापी को छोड दो। कोइ महापुरुष, महात्मा, साधु अथवा भगवान होगा, वही ऐसा कर सकेगा। यह सामान्य आदमी के लिए सभव नहीं। अति महान एव श्रेष्ठ पुरुष, जिन्हें हम भगवान का अवतार मानते हैं, ऐसे प्रभु रामचद्र भी पापी से पाप को अलग कर पाप को नष्ट कर पापी को पुण्यवान बनाकर जीवित रख नहीं पाए। वे अगर ऐसा कर पाते तो रावण को क्यों मारते?

दुष्ट प्रवृत्ति तो अमूर्त हे, उस पर आघात करना सभव नहीं। आघात करना हो तो जिस अधिष्ठान के ऊपर वह दुष्ट प्रवृत्ति पनपती हे, उस अधिष्ठान को ही समाप्त करना पडेगा। इसके सिवाय ओर कोई दूसरा मार्ग नहीं है। इसका अर्थ यह है कि वह जो अलग राज्य पाकिस्तान के नाम से बना है, उसका अस्तित्व ही नष्ट हो जाना चाहिए। अपने

कर्ता-धर्ता, शासन चलानेवाले श्रेष्ठ पुरुष है। आज के सघर्ष के काल में उन्होने वहुत योग्यता का परिचय भी दिया है। उस योग्यता का पूर्ण परिचय वे हमें यह निश्चय धारण करके भी देंगे, इस प्रकार की आशा भी कभी-कभी अपने मन मे उत्पन्न होती है।

आज नहीं तो कल, अपने को इस पर अमल करना ही होगा। तब 'शुभस्य शीघ्रम्' इस दृष्टि से जितना जल्दी किया, उतना अच्छा। उसके बिना अपने पीछे की रोज की खटपट समाप्त होने की नहीं।

लोग कहते हैं कि तुम उपदेश करते हो कि पाकिस्तान नष्ट हो जाए, तब वहॉं के लोग क्या करेंगे? मेरा कथन है कि भारत तो एक अखड देश है और यह वना हुआ पाकिस्तान वडा कृत्रिम है। यह वनना ही नहीं चाहिए था। ऐसे भद्दे कारणों से वना हुआ, ऐसा कृत्रिम, अनैसर्गिक एव अप्राकृतिक विभाजन समाप्त होना चाहिए, यही वास्तविक रीति से भगवान की इच्छा है। उसके अनुसार हम लोग चलें और इस राज्य को समाप्त कर दें। वहॉं रहनेवाले लोगों को उसमे दु ख नहीं होगा। आज तो वे एक तानाशाही के नीचे रहते हैं, उनको यहॉं पर स्वतत्र व्यक्ति के नाते प्रजातत्र मे रहने का अधिकार प्राप्त होगा। यहॉं पर उन्हें सज्जन, सद्‌गुणसपन्न व राष्ट्रभक्तियुक्त अच्छे आदमी की भॉंति रहने का अवसर मिलेगा और सभी प्रकार का स्वाभिमानयुक्त तथा स्नेह-पूर्ण जीवन प्राप्त होगा।

हमारे देश में मुसलमान समाज रहता हे। क्या हम लोग कहते है कि उसको निकाल दो? क्या हम कहते हैं कि उसके साथ द्वेष करो? विशुद्ध हिदू परपरा का अभिमान रखनेवाले हम लोगो के अत करण में इस प्रकार के अभद्र विचार कैसे आ सकते है? अगर वे लोग भी आ जाऍंगे तो प्रेमपूर्वक आनद से रहेगे। शर्त इतनी है कि वे यह भाव लेकर चलें कि अपनी भारतमाता के कण-कण के लिए अगर प्राण-समर्पण करना पडा तो भी अपने पुनीत कर्तव्य के नाते करेंगे और समग्र समाज के साथ एक हृदय वनकर, अपने समग्र जीवन का वैभव, गौरव और सुख-समद्धि इत्यादि प्राप्त करने के लिए परस्पर सहयोगी के नाते जुटेंगे। दूसरी कोई शर्त नहीं। उपासना की पद्धति वदलने की शर्त नहीं, ऐसी शत हिदू नहीं रख सकता।

ि ि ि

६ विस्थापितो की सहायतार्थ आह्वान

(१८ नवबर १९६५ मुबई)

पाकिस्तान की ओर से हुए आक्रमण के कारण युद्ध की जो स्थिति उत्पन्न हुई है, उसका सामना करने के लिए शासन, सैनिक तथा समाज तीनों सिद्ध हुए हैं। प्रत्यक्ष युद्ध में लडनेवाले सैनिकों तथा उनके कुटुवियों को आवश्यक सहायता पहुँचाने के लिए समाज ने जो तत्परता दिखाई है, वह अभिनदनीय है। किंतु इस युद्ध के कारण सीमावर्ती नागरिकों को बहुत ही कष्ट उठाने पडे हैं। अनेक गॉव उध्वस्त हुए तथा सैन्य-सचालन हेतु अनेक गॉव खाली करने पडे। इस कारण असख्य नागरिकों को घर-बार छोडकर जाना पडा। आज वे असहाय ओर निराश्रित हैं। युद्धविराम के पश्चात् कुछ तो अपने स्थानों को लौटकर जा सके, फिर भी जम्मू-विभाग के लगभग एक लाख लोग जम्मू के आसपास विस्थापितों के रूप में अभी भी पडे हैं। इनमे से कुछ तबुओं में रहते हैं, किंतु बहुत वडी सख्या ऐसी है, जो पेडों के नीचे या खुले मेदान में हैं।

इनको सहायता पहुँचाने के शासन के प्रयत्न इतने कम प्रमाण में हुए हैं कि उच्च शासकीय स्तर पर सहृदयता से इस समस्या का विचार हो रहा है, ऐसा कहना कठिन है। अनेक सस्थाओं तथा पजाव प्रात के स्वयसेवक वधुओं ने प्राथमिक आवश्यकताओं की वस्तुऍ उनके लिए जुटाने का प्रयत्न चलाया है, परतु आज ओढने-पहनने के लिए ऊनी कपडों की अत्यत आवश्यकता है। उस क्षेत्र में सर्दी बहुत पडती है ओर उससे यदि रक्षा न हुई तो अनेकों की सर्दी के कारण मृत्यु होने का भय है। खाद्यान्न की समस्या के कारण वे वैसे भी अधमरे हैं, देनदिन उपयोग के वस्त्रों की भी कमी हे। कुछ की मृत्यु के समाचार अब तक आ भी चुके हैं। इस समय उनकी सब प्रकार से सहायता करने के लिए शीघ्र आगे आना हम सबका परम कर्तव्य हे।

समाज के सभी वाधवों से इस कारण यह प्रार्थना है कि अधिकतम सख्या में कोट, स्वेटर, कवल, शाल, रजाइयाँ आदि देकर अपने इन विस्थापित वधुओं के कष्ट को दूर करें। कपडे अच्छे हों, बहुत पुराने अथवा जीर्ण-शीर्ण कपडे देकर इन दु खी वधुओं का उपहास व अपमान नहीं करना चाहिए।

यह सहायता अत्यत अल्पकाल में वहाँ पहुँचाने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए शीघ्रातिशीघ्र अधिकाधिक सामान पहुँचाने की व्यवस्था हो, इस दृष्टि से सव बधुओं का सहकार्य अपेक्षित है। यह सहकार्य दें, यह मेरा प्रार्थनापूर्वक आह्वान है।

卐 卐 卐

७ ताशकद वार्ता के बारे मे श्री गुरुजी के विचार

(ताशकद घोषणा के सबध मे १६ जनवरी १९६६ को श्री गुरुजी की ऑर्गेनायजर के सवाददाता से नई दिल्ली मे हुई बातचीत)

ऐसा नहीं कि ताशकद घोषणा पूर्णतया गलत है, उसमें अनेकों अच्छी बातें भी हैं, परतु भारत के कारगिल, टीथवाल तथा हाजीपीर दर्रे से पीछे हटने की माँग ने इसे दूषित कर दिया है।

सयुक्त राष्ट्र सघ के राजपत्र के सदर्भ में सेनाओं का उपयोग न करने का कोई विशेष अर्थ नहीं हे, क्योंकि इसके अनेक वर्षो से अस्तित्व में होने के वावजूद लडाई तो नहीं रुक पाई। मैं राष्ट्रपति महोदय की इस वात से पूर्णतया सहमत हूँ कि यह न तो कोइ विधि आलेख है, न ही राजनीतिक समझोता है, न ही नैतिक वधन है, यह तो रूपातर का प्रयत्न मात्र है, क्योंकि ताशकद-घोषणा पर श्री लालवहादुर शास्त्री जी ने हस्ताक्षर किए थे, जिनका अब स्वर्गवास हो गया है। अत हमें उसकी आलोचना नहीं करनी चाहिए। राष्ट्रीय मामलों को वैयक्तिक समीकरण के रूप में नहीं देखा जा सकता। श्री लालवहादुर शास्त्री जी ने अपनी ओर से श्रेष्ठतम सभव प्रयत्न किए, परतु दुष्ट शक्तियों का प्रभाव उनके नियत्रण से वाहर हो गया।

पाकिस्तान के साथ बचे विषयों का निपटारा एक साथ कर लेना चाहिए। सन् १९४७ के बाद जितने मुसलमान भारत से पाकिस्तान गए हैं, उससे दुगुनी सख्या में हिदू यहाँ पर आए हैं। पाकिस्तान को इनकी सपत्ति की क्षतिपूर्ति करनी चाहिए। सयुक्त भारत के सार्वजनिक ऋण के अपने हिस्से से भी पाकिस्तान अभी उऋण नहीं हुआ है। यदि विधिसगत देय को देने में वह असमर्थ है तो इसके बदले में उसे भूमि देनी चाहिए।

गत अगस्त, सितवर में पाकिस्तान ने हम पर आक्रमण किया। हमें नित्य प्रति लगभग २५ करोड रुपए खर्च करने पडे। पाकिस्तान को इस

'हरजाने' की भरपाई के लिए कहा जाना चाहिए।

निस्सदेह कश्मीर जो वैधानिक रूप से हमारा है, उसपर चर्चा करने का कोई प्रश्न ही पैदा नहीं होता। मुझे खेद है कि ताशकद में इन बातों में से किसी पर भी चर्चा नहीं हुई। पाकिस्तान कोई समस्या खडी करे, हम जाएं और चर्चा करें– ऐसा करने का कोई लाभ नहीं है। हमें पाकिस्तान को घात करने की छूट देना तथा तत्पश्चात् केवल प्रतिघात करने मात्र से स्वय को सतुष्ट नहीं कर लेना चाहिए।

पहले अपने यहाँ कई राज्यों में जनसुरक्षा अधिनियम थे। तत्पश्चात् निवारक बदी अधिनियम तथा अब तीन वर्षो से कुछ अधिक समय से भारतीय सुरक्षा अधिनियम भी लागू है। सत्ताधारी दल की वृत्ति अधिकतम सभव अतिविशिष्ट शक्तियॉं अपने पास रखने की है। यह प्रजातात्रिक व्यवस्था में एक स्वस्थ परपरा नहीं है।

इग्लेंड ने भी एक विश्व युद्ध लडा, परतु उसके सुरक्षा अधिनियम में विशेष प्रावधान था कि युद्ध समाप्ति के छ मास पश्चात् वह स्वत ही निरस्त हो जाएगा। सन् १६३६ से १६४५ तक के सुरक्षा अधिनियम सघर्ष रुकने के छ मास बाद स्वय ही प्रभावहीन हो जाते थे। परतु अपने यहॉं पर डी आई आर आगे ही आगे चलता जाता हे। हम ही एक नहीं हें, जिससे शत्रुता रखनेवाला पडोसी हे अथवा युद्ध की धमकी प्राप्त किए हुए हें। सपूर्ण विश्व युद्ध की छाया मे जी रहा है। परतु हमारा ही एकमात्र प्रजातात्रिक देश ऐसा हे, जहॉं वास्तविक लडाई न होते हुए भी आपात्कालीन नियम प्रभावकारी हें।

बुद्धिमान और परिपक्व व्यक्ति केवल परिस्थितियो से प्राप्त प्रतिक्रिया से प्रभावित होकर कार्य नही करते वे परिस्थितियो को अपना दास बनाने की दृढ–शक्ति लेकर साहसपूर्वक कार्य करते हैं। मनुष्य बोलकर अपनी स्वय की इच्छा व्यक्त करता है जबकि एक निष्प्राण पहाडी से केवल प्रतिध्वनि निकलती है। — श्री गुरुजी

युद्धस्व भारत भाग - ३

भारत-पाक युद्ध सन् १९७१

(दिसंबर १९७१ में पाकिस्तान के साथ हुए युद्ध तथा निकट के कालखंड में स्थान-स्थान पर श्री गुरुजी का मार्गदर्शन जनता को प्राप्त हुआ। उन भाषणों के महत्त्वपूर्ण अंश यहाँ पर उद्धृत हैं)

१ कार्यकर्ता बैठक

(नागपुर ८ मार्च १९७०)

जब सन् १९६५ में पाकिस्तान के साथ लडाई हुई थी, उस समय प्रधानमंत्री महोदय ने भिन्न-भिन्न दलों के प्रमुखों को एकत्र बुलाकर युद्ध-कार्य में सबका सहयोग प्राप्त करने की एक योजना बनाने का प्रयत्न किया। राजनैतिक दल का प्रमुख न होते हुए भी मुझे इस बैठक में उपस्थित रहने का अनुरोध किया गया था।

उस बैठक में एक सज्जन ने प्रधानमंत्री को लडाई के उद्देश्य स्पष्ट करने के लिए कहा। एक नेता बार-बार 'युवर आर्मी' शब्द का प्रयोग कर रहे थे। मैंने उन्हें प्रत्येक बार टोका और कहा— 'अवर आर्मी' कहो। फिर भी जब वे नहीं माने, तब मैंने उनसे कहा— 'आप यह क्या कह रहे हैं?' तब कहीं उन्होंने होश सभाला और 'अवर आर्मी' शब्द-प्रयोग किया।

उस बैठक में मैंने कहा— 'मैं केवल एक ही बात कहूँगा कि हमें लडाई जीतनी चाहिए। उसके लिए जो परिश्रम करना होगा, उसे करने के लिए सब लोगों को तैयार रहना चाहिए। दलबंदी नहीं चाहिए। 'युवर आर्मी' कहना, अपने देश की रक्षा करनेवाली सेना को पराया मानना है। हम पर आक्रमण करनेवालों के साथ युद्ध करते हुए अपनी रक्षा करने की

बात स्पष्ट होते हुए भी 'लेट अस डिफाइन अवर वार एमस' कहना आश्चर्यजनक है। जो दूसरों पर आक्रमण करते हैं, वे उसे डिफाइन करें। हमें करने की जरूरत नहीं। अपना तो 'उद्देश्य' बिल्कुल स्पष्ट है। वह है, युद्ध में अपने सम्मान की रक्षा करते हुए, आक्रमणकारी को उचित पाठ पढ़ाकर विजय-संपादन करना। आगल बात करना युद्ध के उत्साह में बाधा उत्पन्न करना है।

मुझे अनुभव हुआ कि उस बैठक में उपस्थित लोग, एक-दूसरे से पृथक, मानो अलग-अलग देशों, राष्ट्रों या हित-संबंधों के हैं। अत एक-दूसरे के विरोधी बनकर एक-दूसरे के सामने बैठे हैं। उनके बीच कोई समान सूत्र नहीं है। ऐसे चित्र को देखकर यही कहना पड़ेगा कि विश्व के भिन्न-भिन्न देशों के लोग भेदभाव भूलकर परस्पर सामंजस्य की जिन बातों को राजनैतिक क्षेत्र में काम करते समय गृहीत मानते हैं, उनको अपने यहाँ वैसा मानना ठीक नहीं समझा जाता। परंतु ऐसा करना तो सत्य से मुँह मोड़ना होगा।

卐 卐 卐

२ स्वयंसेवकों के बीच भाषण

(दिल्ली २२ नवंबर १९७०)

शत्रु चारों ओर हैं। पूर्व-पश्चिम की सीमा पर, अपने देश से ही काटकर बना हुआ शत्रु-राज्य आक्रमण की तैयारी में है। लोग कहते हैं कि उसकी शक्ति बहुत बढ गई है। चीन भी उसकी सहायता के लिए सन्नद्ध है। दोनों का आपस में मेल भी है। केवल मैं ही नहीं, देश के राज्य-संचालनकर्ता भी कभी-कभी अपने समाज को चेतावनी देते रहते हैं कि एक बडे आक्रमण का संकट हमारे ऊपर आ सकता है। मैं समझता हूँ कि आक्रमणकारियों के लिए केवल उत्तर में ही अनुकूल स्थान नहीं मानना चाहिए। हजार वर्षों से आक्रमणकारियों ने अपना एक गढ वहाँ बनाया है। विदेशों से चोरी-छिपे वहाँ शस्त्र आते हैं। रूस और चीन को अपना स्वामी माननेवाले लोगों ने एक प्रबल शक्ति वहाँ बनाई है। इसलिए वह क्षेत्र आक्रमणकारियों के लिए बडा अनुकूल हो गया है। इनके अतिरिक्त भी देश में अनेक मर्मस्थान हैं। बंगाल, असम, कश्मीर, कहीं से भी शत्रु का आक्रमण हो सकता है।

इस सबध में नेताओं द्वारा चेतावनी देना तो ठीक है, परतु प्रश्न उपस्थित होता है कि उसकी व्यवस्था कौन-सी है? सैन्यबल बढाना उस व्यवस्था का एक हिस्सा है। अपने सैनिकों को अच्छे शस्त्रों से सुसज्जित करना उसका दूसरा हिस्सा है। इतिहास बताता है कि जब शत्रु बदूकें और तोपें लेकर आया, तब हमने बाण चलाए। हम पिछडे हुए थे इसलिए परास्त हुए। इतिहास की यह दुर्भाग्यपूर्ण पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिए।

ये दोनों बातें ठीक रहते हुए भी एक तीसरी बात और है, जो सब से अधिक महत्त्व की है। वह है सपूर्ण समाज में राष्ट्र-रक्षा की भावना को जगाकर सुगठित सामर्थ्य का निर्माण करना। इस बात पर अगर हम सोचेंगे तो सघकार्य की महत्ता भली-भॉति ध्यान में आएगी।

३ सार्वजनिक भाषण, जम्मू

(जम्मू, २४ अक्तूबर १९७१)

पूर्व और पश्चिम— दोनों सीमाओं पर शत्रु की हलचलें बढ रही हैं। सीमाऍ दिन पर दिन सुलगती जा रही हैं। शत्रु कब बारूद में आग लगा देगा— कहना कठिन है। आक्रमण कभी भी हो सकता है। इन सब सभावनाओं पर लोग बडी सतर्कता से विचार कर रहे हैं। साथ ही यह भी सोचते हैं कि चारों ओर से विपत्तियॉ आ रही हैं। इस स्थिति से आतक निर्माण नहीं होना चाहिए। धैर्य बना रहना चाहिए।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि देश के बडे कहलानेवाले लोगों के मन में भय की अवस्था दिखाई देती है। उन्हें लगता है कि दुनिया में अपना कोई भी साथी नहीं। इसी मानसिक स्थिति में रूस के साथ सधि हुई है। वैसे विश्व में देशों के बीच सधियॉ हो सकती हैं। कल चीन भी सधि करने के लिए इच्छुक दिखाई दे, तो उसके साथ भी सधि करनी चाहिए। परतु मुझे जिस बात का दु ख हुआ, वह यह कि सधि होते ही सब नेतागण हर्षविभोर होकर नाचने लग गए। चारों ओर घोषणाऍ की जा रही हैं कि हम एकाकी नहीं रहे, हमें मित्र मिल गया है। सोचना चाहिए कि जिस प्रकार हमने रूस के साथ सधि की है, उसी प्रकार रूस ने भी तो हमारे साथ सधि की है, तब वहॉ के लोग इस प्रकार खुशी से पागल

होते हुए क्यों नहीं नाच रहे? हमारे यहॉ इस प्रकार मानो सधि होना दुनिया में कोई अघटित वात हो गई हो, ऐसा सोचकर लोग हर्ष में पागल हो रहे हैं। उसका कारण यह हे कि देश की आतरिक शक्ति की अनुभूति कहीं होती हुई दिखाई नहीं देती। इसलिए नेताओं को लगता है कि एक मित्र मिल गया, यह भगवान की वडी कृपा है। इसे शक्तिशाली की प्रतिक्रिया नहीं, शक्तिहीनता का प्रलाप ही कहा जा सकेगा।

४ जनसभा

(जयपुर २६ नवबर १९७१)

हजार-पद्रह सो वर्षो का इतिहास हमें वताता है कि समय-समय पर अनेक आक्रमणकारी अपने देश में आए। उन्होंने हमारे वीच विच्छेद का लाभ उठाया। हम पर आक्रमण किया ओर हमारे स्वातत्र्य एव धन-सपत्ति का अपहार किया। आज भी, जवकि अग्रेज चले गए और अपने ही लोगों के हाथों में यहॉ का सपूर्ण जीवन वनाने का दायित्व आ गया हे, तव भी आक्रमणों की शृखला समाप्त नहीं हुई हे। कश्मीर ओर उत्तरी सीमा पर तीन वार वडे आक्रमण हो चुके हैं। इधर-उधर छोटे-बडे हमले नित्य चल ही रहे हैं।

आज फिर प्रत्यक्ष युद्ध की स्थिति वनी है। अपने देश को काटकर, पूर्व ओर पश्चिम का एक-एक हिस्सा अलग करके उसमें से पाकिस्तान नाम का जो शत्रुराज्य खडा हुआ, उसके साथ फिर प्रत्यक्ष युद्ध की परिस्थिति खडी हो गई है। आक्रमणकारी रोज गोलावारी करते हैं। कई वार भिन्न-भिन्न प्रकार से घुसपेठ करने की चेष्टा करते हैं। उनका प्रतिकार हमारे सेनिकों को करना पडता है। यह अघोषित युद्ध किसी भी क्षण विकराल रूप धारण कर सकता है। उस समय हमें उसका निराकरण करना ही पडेगा।

निराकरण करने के लिए सेन्य-वल तो उसका केवल एक हिस्सा है। समग्र समाज का राष्ट्रभक्ति-परिपूर्ण, स्वार्थशून्य, नीतिमत्तापूर्वक शुद्ध गुणसपदा से चलनेवाला और प्रवल शक्तिसपन्न, सगठित होने के कारण आपसी सव भेद भुलाकर एकरस वना हुआ समाज जव सेना के पीछे यह

विश्वास जगाता हुआ खडा रहता है, तभी सब प्रकार के सकटों का निराकरण होकर राष्ट्र को विजयश्री प्राप्त होती है। यह स्थिति निर्माण करना सुसगठित राष्ट्रभक्ति-परिपूर्ण और स्वार्थ-नियत्रित समाज-जीवन के बिना कदापि सभव नहीं।

卐卐卐

५ निवेदन

(३ दिसबर १९७१ को युद्ध प्रारभ होने पर श्री गुरुजी के इस निवेदन की लाखो प्रतियाँ स्वयसेवको ने घर-घर पहुँचाई और समाजसेवी सस्थाओ तथा व्यक्तियो के साथ सहकार्य करते हुए वे राष्ट्र-रक्षा के प्रयत्नो मे जुट गए)

युद्ध की परिस्थिति है। आक्रमणकारी शत्रु-सेनाएँ हमारी सीमाओं पर घिर आई हैं। इस सकट की गभीरता को समझकर सत्ताधारी तथा अन्य सभी दलों के नेता, अपना-अपना दलीय दृष्टिकोण छोड एक राष्ट्र-भावना से प्रेरित होकर एकत्र हों। इस प्रकार सगठित रूप में आक्रमण का मुकाबला कर, अपने राष्ट्र को विजयी बनाएँ। यह समय की माँग है, इसे सब लोगों को ठीक से समझ लेना जरूरी है।

दलनिरपेक्ष दृष्टि से केवल राष्ट्रहित का ही सतत चिंतन करनेवाले राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सब स्वयसेवकों से भी यही नम्र आह्वान है।

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि देशवासियों की एकता तथा स्वार्थरहित राष्ट्रभक्ति से ही अजेय शक्ति का निर्माण होता है। हमारा अडिग विश्वास है कि यही शक्ति राष्ट्र को पूरी तरह विजयी बनाकर भारत का मस्तक जगत् में उन्नत और गोरवान्वित करेगी।

पाकिस्तान ने बाँग्लादेश की परिस्थिति को निमित्त बनाकर भारत के साथ छेडछाड करने तथा विभिन्न स्थानों पर गोलाबारी करने के बाद अब विमानों द्वारा भारतीय हवाई-अड्डों एव नगरों पर बमवर्षा कर प्रत्यक्ष युद्ध प्रारभ कर दिया है। उसने भारत के साथ युद्ध की स्थिति भी घोषित कर दी है। इस आक्रमण का सफलतापूर्वक सामना करने के लिए सैनिक-कार्यवाही हेतु अपनी सरकार पूरी तरह तैयार है। परतु इस प्रकार के युद्ध में केवल सैनिक-सिद्धता से काम नहीं चलता। सेना की सफलता

के लिए देश में शाति बनाए रखना, सब काम-धधों का व्यवस्थित और सहकार्यपूर्वक चलते रहना, जनता का मनोबल कायम रखना, उत्पादन में कोई रुकावट न आने देना और समय की मॉग के अनुसार उत्पादन अधिक बढाते रहना, सेना की सब प्रकार की आवश्यकताएँ समय पर पूरी करना, नागरिक सुरक्षा, रक्तदान, घायलों की सेवा-सुश्रूषा करना आदि ऐसे अनेक कार्य हैं, जिन्हें तुरत और अनुशासनपूर्वक करना होता है। सर्वसाधारण नागरिकों द्वारा इन कार्यो को करवा लेने तथा सरकार के राष्ट्ररक्षण के प्रयत्नों में पूरे मन से सहयोग देने की नितात आवश्यकता है। यह भली-भॉति पहचानकर कि इस प्रकार के सहकार्य में हाथ बॅटाना अपना पवित्र राष्ट्रीय कर्तव्य है, सभी प्रकार के दलीय मतभेदों को न केवल एक ओर रखकर, वरन् उन्हें पूरी तरह भुलाकर सगठित और अखड प्रयास करने के लिए नागरिकों को आगे आना चाहिए।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ तो यही शिक्षा सदा देता आया है कि राष्ट्रहित सर्वोपरि है ओर व्यक्ति, दल आदि का विचार गोण हे। इसलिए आज जब अपना राष्ट्र युद्धस्थिति में घसीटा गया है, प्रत्येक स्वयसेवक ओर सघप्रेमी व्यक्ति द्वारा व्यक्ति के नाते तथा सघ के नाते, देश की रक्षा के सभी कार्यो में सरकार को मन पूर्वक सहायता करना स्वाभाविक ही है। सभी स्वयसेवक बधुओं से यही अपेक्षा है।

इन कार्यो में जो-जो जिम्मेदारी स्वीकार करनी आवश्यक हो, उन सभी जिम्मेदारियों को सरकारी अधिकारियों की सम्मति के अनुसार ग्रहण करने तथा उन्हें सपूर्ण शक्ति लगाकर पूरी करने के लिए, प्रत्येक को आगे बढना चाहिए।

ळ ळ ळ

६ हेमत शिविर, विजयवाडा

(७ दिसबर १९७१)

वर्तमान सघर्ष की पृष्ठभूमि

पाकिस्तान के रूप में जिस शत्रु से आज सघर्ष चल रहा है, वह शत्रु नया नहीं है। यह सघर्ष पाकिस्तान बनने के बाद से ही प्रारभ नहीं हुआ है। यह सघर्ष हजार-बारह सौ वर्षो से चल रहा हे। इस्लाम-मत के

अनुयायी पूर्वकाल में हमारे देश में व्यापार आदि के लिए सज्जनता के साथ आए। वे यहाँ पर शांति के साथ बस गए। उस समय उनके आगमन से किसी प्रकार के संकट का अनुभव होना संभव ही नहीं था, क्योंकि अपने देश में अत्यंत प्राचीन काल से यह विशाल दृष्टिकोण विद्यमान रहा है कि परमात्मा की उपासना के अनेक मार्ग हैं। इस्लाम भी उसी तरह का दिखाई दिया। हमने उसका स्वागत किया। परंतु जब इस्लाम-मत का नाम लेकर उसके अनुयायी भारत के जीवन, यहाँ की संस्कृति, यहाँ की राजनीति तथा आर्थिक व्यवस्थाओं को उखाड़ फेंकने का निश्चय लेकर आक्रमणकारियों के रूप में आए, तब संघर्ष प्रारंभ हुआ। उसी संघर्ष का सूत्र अभी तक चल रहा है। आज लोग इस बात को भूलकर कहते हैं कि भारत विभाजन की जो घटना हुई है, उसका इस लंबे ऐतिहासिक सूत्र से कोई संबंध नहीं है। वास्तविक बात यह है कि वर्तमान आक्रमण के पीछे भी वही आकांक्षा है। १२०० वर्ष लंबी आक्रमण की कथा का यह एक अध्याय है। इस वस्तुस्थिति को समझ लेने से इस संकट का ठीक-ठीक निराकरण करने की क्षमता हमें प्राप्त होगी।

नीतिवान पुरुषों की सीख

समय-समय पर आक्रमण के अलग-अलग कारण खोजे जाते रहे हैं। इस बार बाँग्लादेश का नाम लेकर भारत पर आक्रमण करने का प्रयत्न किया गया। लड़ाई का परिणाम हम सबको दिखाई दे रहा है। अपने शास्त्रों में ऐसी परिस्थिति में कुछ मार्गदर्शक बातें कही गई हैं। ऐसा कहा गया है कि कुछ बातें ऐसी होती हैं, जिन्हें शेष नहीं रहने देना चाहिए। इसमें पहली बात अग्नि को शेष न रहने देने की कही गई है। अग्नि थोड़ी भी शेष रहने पर धीरे-धीरे सुलगते हुए वह कब पूरे घर को जलाकर भस्म कर देगी, कहा नहीं जा सकता। वैसे ही यदि व्यक्ति बीमार है, तो औषधि लेते समय रोग खत्म करके ही दम लेना चाहिए। उसी प्रकार ऋण-शेष के बारे में भी कहा गया है। ऋण थोड़ा भी बाकी रहा तो ब्याज के रूप में बढ़ता जाता है और बाद में पूरे कारोबार को ले डूबता है। चौथी बात जो आज के इस विषय के संदर्भ में कही गई है कि शत्रु को शेष नहीं रहने देना चाहिए। ऐसा सोचना कि शत्रु थक गया है, हिम्मत हार चुका है, आगे चलकर वह विपत्ति का कारण नहीं बनेगा, यह सोचकर शेष रहने देना नीतिवान पुरुषों का विचार नहीं हो सकता।

मानवता का हित

सच तो यह है कि हारा हुआ शत्रु अधिक भयकर होता है। हार की चोट से व्यथित होकर वह अपनी शक्ति समेटता है और पूरी तैयारी कर फिर से आघात करता है। अब देखना है कि शास्त्रों के इन नीति-वचनों के अनुसार, हमारे नेतागण शत्रु को वैसे ही छोड देते हैं या नहीं। युद्ध में विजय का आभास प्राप्त हो रहा है। इस स्थिति में आनद मानकर सतोष कर लेने की और शत्रु को वैसे ही छोड देने की भूल हुई, तो अच्छा नहीं होगा। मेरा मत है कि यह बहुत अच्छा अवसर मिला है। किसी प्रकार का कारण न होते हुए भी और युद्ध रोकने के लिए नेताओं द्वारा सब प्रकार के प्रयत्न करने के बावजूद शत्रु ने हम पर आक्रमण किया है। अकारण शत्रुता करनेवाले शत्रु को अब शेष नहीं रहने देना चाहिए। उसे पूरी तरह समाप्त कर देने में ही ससार व सपूर्ण मानवता का हित है।

कर्तव्यबोधयुक्त परिश्रम

विजय प्राप्त करने के लिए परिश्रमपूर्वक सब लोगों को एक अत करण से उद्यम करना चाहिए। राष्ट्रहित में छोटे-बडे जो भी काम सामने आते हैं, उन्हें सभी स्वयसेवक बधुओं को करना चाहिए। युद्धकाल में देश की रक्षा का विशेष दायित्व है। इस समय नागरिक-सुरक्षा का कार्य है। यदि कहीं अशाति निर्माण होने की सभावना हो तो योग्य ढग से प्रयत्न कर अशाति न होने देने के लिए सतर्क रहने की आवश्यकता है। जब अपने शूरवीर सैनिक शत्रु से जूझ रहे हैं तब देश की आर्थिक व्यवस्था बनाए रखने और उसके लिए कठोर परिश्रम द्वारा किसी भी स्थिति में उत्पादन न घटने देने के लिए लोगों को प्रेरणा देने की ओर भी ध्यान देना है। अपने सैनिक अथवा जो नागरिक युद्धकाल में आहत होते हैं, उनकी तथा उनके परिवार की तत्परता से सेवा करनी है। आवश्यकता पडने पर आहतों की प्राण-रक्षा के लिए रक्तदान करना है। इन सभी छोटे-बडे प्रयत्नों में, हम सब प्राणपण से जुटते हैं। पिछले २५ वर्षो में जब-जब इस प्रकार के सघर्ष के प्रसग उपस्थित हुए, तब इस प्रकार के कामो में बिना किसी प्रकार की आत्म-प्रशसा का ढोल पीटे, सघ का स्वयसेवक सब से आगे रहा है। अपनी इसी पद्धति के अनुसार हमें बिना किसी प्रकार की प्रशसा अथवा प्रसिद्धि की चाह के आगे रहना है। सघ के हम स्वयसेवकों ने राष्ट्रहित को ही सर्वोपरि अवस्था में अपने हृदय में धारण किया है।

इसलिए जो कुछ प्रशसा अथवा गौरव हो, वह राष्ट्र का ही होना चाहिए। हमें न तो सत्ता की अभिलाषा है और न हमारा किसी प्रकार का कोई स्वार्थ है।

नवजागरण क्रांति

यदि देश में उद्योगशीलता का, उत्पादनक्षमता का, अपनी सेना के लिए आवश्यक सभी प्रकार की क्षतिपूर्ति का और विगत बारह सौ वर्ष के इस सतत आक्रमण की शृखला को सदा-सर्वदा के लिए समाप्त करने का प्रचड विजयशाली वायुमडल निर्माण करना है, तो समाज मे तदनुसार एक मानसिक क्रांति लाने की नितात आवश्यकता है। समाज का ऐसा हृदय-परिवर्तन होना चाहिए, जिसमे से वर्तमान व्यक्तिवाद, जातिवाद, पथवाद, भाषावाद आदि भिन्न-भिन्न प्रकार के गुटों के ईर्ष्यायुक्त स्वार्थ के झगडे समाप्त हों और सबका ध्यान ऐसे क्षुद्र स्वार्थो से हटाकर राष्ट्रहित की ओर लगाया जा सके। इस प्रकार की दृढ श्रद्धा का निर्माण करने का कार्य केवल अपनी शाखाओं द्वारा हो रहा है। मातृभूमि का प्रतिदिन चितन और वदन करते हुए एकरसता का सस्कार जहाँ प्राप्त होता है, सपूर्ण समाज की एकता और आत्मीयता की प्रेरणा मिलती है, अनुशासन के द्वारा शक्तिसपन्नता का अनुभव प्राप्त होता है, ऐसा समाज में आमूलाग्र मन क्रांति उत्पन्न करनेवाला कोई प्रतिष्ठान यदि आज देश में कार्यरत है, तो वह अपना सघ ही है। ईश्वर की अपने ऊपर महान कृपा है। इस कार्य से अपना सबध स्थापित हुआ और हमें यह कार्य करने का छोटा-बडा दायित्व मिला। ईश्वर के इस उपकार का स्मरण करते हुए अपनी समस्त शक्ति इस कार्य के विस्तार और दृढीकरण में लगानी चाहिए। आज अपना जो कार्य है, लोग भले ही उसे बडा कहे, अपने समाज की विशालता को देखते हुए अभी काफी कम है। ग्रामो से भी आगे वनों मे रहनेवाले अपने समाज-बधुओं की एक-एक झोपडी तक नव-जागरणयुक्त मन क्रांति का यह मत्र सबके अत करण में जगाना है। बाकी सब प्रकार की बातो को अपने हृदय से हटाकर, इसी एकमेव विचार के चितन और तदनुसार अपनी सपूर्ण शक्ति लगाकर इस कार्य को पूर्ण करके ही रहेगे, ऐसे दृढ निश्चय की आज आवश्यकता है।

७ हेमंत शिविर, हैदराबाद

(१२ दिसबर १९७१)

आजकल युद्ध के समाचार पढने और सुनने के लिए लोग बडे उत्सुक दिखाई दे रहे हैं। 'युद्धस्य वार्ता रम्या' के अनुसार युद्ध के वर्णन बडे रोचक लगते हैं। युद्ध का असली सुख-दु ख तो सेनाओं को अनुभव में आता है। बाकी लोग इन कथाओं में रस ग्रहण करते हैं। परतु हम लोगों को सोचना चाहिए कि पुराने जमाने के समान युद्ध अब केवल सैनिकों के बीच की घटना नहीं रह गया है। आजकल के युद्धों में जीत और हार का निर्णय पूरे समाज पर निर्भर करता है। पूरा समाज जब सपूर्ण शक्ति से युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए डटकर खडा हो, तभी विजय प्राप्त होती है।

सघर्ष दोनों सीमाओं पर चल रहा है। युद्ध में विजय का प्रमुख दायित्व सेना पर है। राष्ट्र पर आनेवाले सकटों के निराकरण का कर्तव्य सेना का रहता है। राष्ट्र-रक्षा का भार वहन करने के लिए ही सेना गठित होती है। इसलिए यह तो स्वाभाविक ही है कि हमारी सेनाएँ अपने कर्तव्य की पूर्ति के लिए डटी हुई हैं। यह भी बहुत आनद और गौरव की बात है कि अपनी सेनाएँ कभी कमजोर नहीं हुई। यह आज की ही बात नहीं, पिछले कई वर्षो से भारतीय सेना की ऐसी प्रसिद्धि है। जब अग्रेजों का यहाँ राज्य था, उन दिनों भी अग्रेजों की ओर से ही क्यों न हो, जब-जब हमारे देश की सेना को रणभूमि पर अपना पराक्रम दिखाने का मौका मिला, उसके पराक्रम को देखकर दुनिया दग रह गई। यूरोप के रणक्षेत्र में भारतीय सेना के कार्यो को देखकर बडे-बडे योद्धाओं ने प्रशसा की। अग्रेज और फ्रेंच सेनिक जिन स्थितियों में मुकाबला करते डरते थे, उन स्थितियों में भारतीय सेनाओं ने साहसपूर्वक आक्रमण कर शत्रु के मोर्चे तोडे। पिछले महायुद्ध की ऐसी कई रोमहर्षक घटनाएँ हैं, जो भारत के शूरवीरों की यशोगाथा बताती हैं। इसलिए यह इतिहाससिद्ध बात है कि रणक्षेत्र में भारतीय सैनिक कभी दुर्बल सिद्ध नहीं हुए।

परतु जैसी की कहावत है, सेना पेट के बल लडती है। जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं और युद्ध के लिए आवश्यक सामग्रियों की पूर्ति के सबध में निश्चितता तथा उद्योगशील एव सगठित समाज अपने पीछे खडा है, ऐसा विश्वास सैनिकों के मन में रहना, युद्ध में विजय-प्राप्ति के लिए

आवश्यक है। इस दृष्टि से हमें देश की वर्तमान परिस्थिति पर विचार कर समाज की सब प्रकार की तैयारी करने में जुट ही जाना चाहिए। आज समाज में धैर्य जगाते रहने की तथा सपूर्ण राष्ट्र परिपूर्ण एकता से खडा रहकर प्राप्त सकट का निराकरण करने हेतु प्रयत्नशील रहेगा, इसका आह्वान करने की महती आवश्यकता है।

८ पत्रकार-वार्ता

(बगलौर मे १६ दिसबर १९७१ को पत्रकारो से अनौपचारिक चर्चा)

प्रश्न देश की वर्तमान स्थिति के विषय में आपका क्या मत है?

उत्तर शत्रु के विरुद्ध जनता सगठित है, यह इस बात का द्योतक है कि हम मूलत एक हैं। किंतु राजनीतिक उठापटक करनेवाले ही हमें एक से अधिक हिस्सों में विभक्त कर देते हैं। फिर भी हमने यह सिद्ध कर दिया है कि सकट के समय हम एक रह सकते हैं।

प्रश्न नए बाँग्लादेश से आप क्या आशा करते हैं?

उत्तर यदि वह सप्रदाय-निरपेक्षता को अपनाता है तो श्रेयस्कर होगा। वे आश्वासन दे चुके हैं कि उपासना के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा। हम आशा करें कि वे अपने आश्वासन पर दृढ रहेंगे।

प्रश्न सन् १९४७ में अपना उपमहाद्वीप दो हिस्सों में बँट गया था। अब उसके तीन हिस्से हो गए हैं। इस नए परिवर्तन को आप किस दृष्टि से देखते हैं?

उत्तर देश का दो भागों में विभाजित होना अनैसर्गिक था। हमें वह नहीं होने देना चाहिए था, परतु वह हुआ। अब उसका तीन हिस्सों में बँटना अवश्यभावी था। पाकिस्तान के ये दो हिस्से दीर्घकाल तक एक-साथ नहीं रह सकते थे। विशेषत विगत दस बारह वर्षो में इन हिस्सों में गहरी कटुता निर्माण हो गई थी। सच तो यह है कि २४ वर्षो की दीर्घ अवधि तक वे जैसे-तैसे एक-साथ रह सके, यही अपने-आप में एक आश्चर्य है।

प्रश्न क्या भविष्य में आपको उसके और अधिक टुकडे होने की सभावना

दिखाई देती है?

उत्तर निस्संदेह ऐसी शक्तियाँ वहाँ सक्रिय हैं, परंतु यह कहना कठिन है कि वे किस सीमा तक ऐसा कर सकेंगी। जहाँ तक पूर्वी बंगाल का मामला है, पाकिस्तान की पश्चिमी सेना के शक्तिशाली पठान और बलूच लोग स्वतंत्रता की माँग पर डट गए, तो एक स्वतंत्र हिस्सा तैयार होना कोई रोक नहीं सकता। स्वतंत्र पख्तूनिस्तान की माँग बहुत पुरानी है। खान अब्दुल गफ्फार खाँ ने तो यहाँ तक कहा है कि अंग्रेजों के जाने के बाद स्वतंत्र पख्तूनिस्तान के निर्माण में सक्रिय समर्थन करेंगे, ऐसा कांग्रेसी नेताओं ने उन्हें स्पष्ट आश्वासन दिया था। इसलिए भारत के स्वतंत्रता-आंदोलन में खान साहब ने सहयोग प्रदान किया था। अतः एक प्रकार से हमारे नेता स्वतंत्र पख्तूनिस्तान के विचार को पहले ही मान्यता दे चुके हैं। जहाँ तक सिंध का प्रश्न है, मूलतः वह अलग राज्य नहीं था। मुंबई-प्रेसिडेन्सी का एक हिस्सा था। बाद में सिंध को अलग राज्य बनाया गया। उस समय दूरदृष्टि रखनेवाले कुछ लोगों का यह आग्रह था कि सिंध को मुंबई-प्रेसिडेन्सी का ही हिस्सा रहने दिया जाए, किंतु शेष लोगों ने उसे पृथक प्रदेश ही बनाना चाहा। इस भयंकर भूल के परिणामस्वरूप ही सिंध मुंबई से अलग हुआ, जिसके कारण वह पाकिस्तान का हिस्सा बनने के लिए बाध्य हो गया।

मुसलमानों का दावा है कि इस्लाम असमानता को दूर कर सभी लोगों में बराबरी लाता है, परंतु इस्लाम पर आधारित पाकिस्तान में ही लोग आपस में बराबरी से नहीं रह सके। वस्तुतः गड़बड़ी उसी समय प्रारंभ हुई थी, जब पश्चिम पंजाब और उत्तरप्रदेश के मुसलमानों ने पाकिस्तान में पहुँचकर स्वयं को वहाँ का सर्वेसर्वा जताना प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार उनका यह दावा कि इस्लाम के आधार पर वे एक अलग राष्ट्र हैं, खोखला सिद्ध हो चुका है।

प्रश्न याह्या खाँ ने घोषणा की है कि यह युद्ध भारत के साथ अंतिम युद्ध होगा?

उत्तर यही होगा। यदि पाकिस्तान पूरी तरह समाप्त हो जाए।

प्रश्न पाकिस्तान को समाप्त कर देने से क्या विश्व में भारत की प्रतिमा मलिन नहीं होगी? और ऐसा होने पर क्या दुनिया उसे सहज

स्वीकार कर लेगी?

उत्तर भाई, दुनिया बडी विचित्र है। यदि हम दृढता से उसका सामना करें और साहसपूर्वक कहें कि यह अब हो ही चुका है, तो विश्व उसे बिना किसी हिचकिचाहट से स्वीकार कर लेगा।

प्रश्न पाक-अधिकृत कश्मीर को मुक्त करने के लिए क्या हमें इस अवसर का लाभ नहीं उठाना चाहिए?

उत्तर हॉं। ऐसा किया जाना चाहिए।

प्रश्न भुट्टो ने दभोक्ति की है कि वह भारत से एक हजार वर्ष तक युद्ध करेगा?

उत्तर हॉं। पिछला इतिहास जोड लें तो बात सही ही है।

प्रश्न क्या आपको यह आशका है कि विस्थापितों की वापसी और पुनर्वसन के विषय में कोई गभीर समस्या खडी होगी?

उत्तर पिछले कुछ महीनों में हुआ यह है कि पूर्व बगाल के विस्थापित-हिदुओं की सपत्ति पर कब्जा कर स्थानीय मुसलमानों में बॉट दी गई है। इसलिए विस्थापित वापस न जाऍ– इस बात में वहॉं के मुसलमानों का निहित स्वार्थ है। इनके वापस जाने पर उन्हें इस प्रकार कब्जा की गई जमीन-जायदाद पर से हटना और उसे सही मालिकों को वापस लोटाना एक पेचीदा मामला है। हो सकता है इस स्थिति में वे अपने निर्वाचित नेताओं के विरुद्ध हो जाऍं। वहॉं की जनप्रिय सरकार को यह खतरा मोल लेना होगा। फिर भी स्थानीय सरकार के सहयोग से भारत सरकार यदि प्रभावी कदम उठाए, तो यह समस्या शीघ्र हल हो सकेगी।

प्रश्न हो सकता हे कुछ हिदू वापस न जाना चाहें, तो उन्हें छूट देनी चाहिए अथवा उनकी वापसी अनिवार्य होनी चाहिए?

उत्तर कुछ स्मृतियॉं उन्हें वापस न जाने के लिए प्रेरित कर सकती हें। कुछ अप्रिय घटनाऍं हुई हैं। फिर भी बगाली स्वभाव से उदार हुआ करता है। अत हो सकता है कि वह सब बातें भुला दें और उन्हें क्षमा कर दें। अतत भूमि का लगाव बडा प्रबल होता है। इसलिए वे वापस जा सकते हैं। मेरा मत है कि पूर्वी बगाल को इस सबध में

अपनी स्वतंत्र इच्छा निर्धारित करने का अवसर दिया जाना चाहिए कि वह भारतीय प्रदेशों का हिस्सा बनकर रहना चाहता है अथवा एक स्वतंत्र देश की स्थिति में भारत का पड़ोसी बनकर रहना स्वीकार करता है।

प्रश्न हम यदि उसे अपने देश में मिला लें, तो क्या दुनिया इसका गलत अर्थ नहीं लगाएगी? अधिक अच्छा क्या होगा, उसे स्वतंत्र बने रहने देना या अपने देश के साथ जोड़ लेना?

उत्तर मैं कह चुका हूँ कि इसका निर्णय उन्हीं पर छोड़ देना चाहिए।

प्रश्न युद्ध के भावी रुख के विषय में आप क्या सोचते हैं?

उत्तर मैं समझता हूँ कि पाकिस्तान बातचीत करना स्वीकार कर लेगा, क्योंकि अपनी सेना का बहुत बड़ा हिस्सा अब पूर्वी बंगाल से पश्चिमी मोर्चे पर जाने के लिए मुक्त हो गया है।

प्रश्न सातवें अमरीकी जहाजी बेड़े को बंगाल की खाड़ी में तैनात किए जाने के विषय में आपका क्या मत है?

उत्तर अमरीका यदि सचमुच वहाँ हस्तक्षेप करता है, तो विश्व में उसके वर्चस्व का यह अंत ही होगा। वियतनाम और कोरिया में उसकी प्रतिष्ठा को पहले ही धक्का लग चुका है। श्रेष्ठतम शस्त्रास्त्रयुक्त होने पर भी वियतनाम में पिटकर खदेड़ा जा चुका है। उसकी अंतर्राष्ट्रीय नीतियाँ किसी न किसी प्रकार से आत्मघाती ही रही हैं। वह हमेशा गलत घोड़े पर सवारी करता रहा है । इस बार वह गलत घोड़ा याह्या खाँ है। श्री निक्सन सोच रहे हों कि उनकी वर्तमान नीतियाँ अगले राष्ट्रपति-चुनाव में उनकी विजय करनेवाली होंगी, परंतु वे वास्तव में अपनी राजनीतिक कब्र खोद रहे हैं। अमरीकी जनता उनकी नीतियों से अप्रसन्न है। विस्थापितों की सहायता की आड़ में शस्त्रास्त्र भेजने का उनका कार्य अत्यंत अप्रामाणिक और शत्रुतापूर्ण है। इससे यही सिद्ध होता है कि अमरीका अब भी एक अपरिपक्व राष्ट्र है।

प्रश्न श्रीलंका ने अब अपना स्वर बदल दिया है?

उत्तर सफलता की पूजा सभी करते हैं।

प्रश्न इस मामले में चीन की चाल क्या हो सकती है?

उत्तर चीन प्रत्यक्ष हस्तक्षेप करेगा, ऐसा मुझे नहीं लगता।

प्रश्न अब चीन और अमरीका के बीच विलक्षण प्रेमालाप प्रारंभ हो गया है?

उत्तर हॉं। वास्तव में यह बडा प्रेमालाप है। यह विश्व निरंतर परिवर्तनशील है। देशों के बीच संबंध बदलते रहते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के आरंभ में रूस और जर्मनी साथ थे बाद में रूस और इग्लैंड ने हाथ मिला लिए।

प्रश्न क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि हम रूस की ओर झुक रहे हैं?

उत्तर ऐसे अवसरों पर हमें मित्रों की जरूरत पडती ही है। रूस ने हाथ बढाया है। प्रतिरक्षा-अध्ययन संस्थान के अध्यक्ष ने एक लेख लिखा है कि भारत को रूस की मित्रता की जितनी जरूरत है, उससे कहीं अधिक जरूरत है रूस को भारत की मित्रता की। इसलिए भारत-रूस संधि का अधिक से अधिक लाभ उठाना अब हम पर निर्भर है।

प्रश्न क्या इस क्षेत्र में शक्ति-संतुलन पूर्णत बदल नहीं गया है?

उत्तर इस विषय में कहने के लिए अभी कुछ समय लगेगा। यह बात हम पर निर्भर करती है। यदि हम दूरदर्शिता से काम लें, तो हमें पर्याप्त लाभ हो सकता है।

प्रश्न *क्या आपके विचार में भारत को आण्विक-शक्तिसंपन्न होना चाहिए?*

उत्तर पहले से सतर्क रहना अधिक अच्छा है। वर्तमान युद्ध में महाशक्तियों से हमें जो कटु अनुभव प्राप्त हुए, उन्हें देखते हुए हमें अण्वास्त्रों का निर्माण करना चाहिए। ऐसा लगता है कि अपने नेता अब इस विषय पर गंभीरतापूर्वक विचार कर रहे हैं। आण्विक अस्त्रों का स्वरूप भीषण संहारक होने पर भी बुद्धिमानी इसी में है कि प्रतिरोधक के रूप में हम उनका निर्माण करें।

प्रश्न इस बारे में हमारी प्रतिरक्षा-मशीनरी पूर्णत सन्नद्ध दिखाई देती है?

उत्तर हॉं। सदियों से हम दूसरों के लिए लडते रहे हैं। केवल पिछले २४ वर्षो से हमें स्वतंत्रतापूर्वक अपनी युद्ध-योजनाएं बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने का अवसर मिला है। सन् १९६५ में तीनों प्रतिरक्षा-अंगों में पारस्परिक सामंजस्य के अभाव की हमें बहुत बडी

कीमत चुकानी पडी। इस बार हमने सीख ग्रहण की है। जल, थल और नभ-सेनाओं में अब गहरा सामजस्य है। अधिक अच्छा होगा, यदि तीनों अग एक ही आधिपत्य में हों।

प्रश्न मुस्लिम बहुसख्यक पूर्व बगाल का पाकिस्तान से अलग होना क्या भारतीय मुसलमानों पर प्रभाव डालेगा?

उत्तर अनिश्चय की स्थिति बनी रहती तो बुरा प्रभाव पडता। अब भारत के विषय में उन्हें स्पष्ट कल्पना आ गई होगी। इसका परिणाम अच्छा ही होगा।

प्रश्न आत्मसमर्पण करनेवाले पाकिस्तानियों के विषय में हमें क्या करना चाहिए?

उत्तर फिलहाल उन्हें वापस न जाने दिया जाए। पश्चिमी क्षेत्र में पाकिस्तानी शरारत को रोकने के लिए उन्हें बधक के रूप में रखे रहना चाहिए।

प्रश्न वर्तमान स्थिति से निपटने के प्रधानमत्री के तरीके के विषय में आपकी क्या राय है?

उत्तर अच्छी है। बिल्कुल ठीक है, किंतु विलब बहुत कष्टदायी रहा। दीर्घसूत्रता के लिए अपार मानवी मुसीबतों के रूप में कीमत भी चुकानी पडी।

प्रश्न पिछले युद्ध के समय राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने बहुत अच्छा कार्य किया था। इस बार सघ के कार्य का स्वरूप क्या है?

उत्तर इस विषय में पूरी जानकारी प्राप्त होने पर हम यथासमय आपको बताएँगे।

प्रश्न इस युद्ध से हम क्या सीख सकते हैं?

उत्तर हम सगठित रहें। उसी प्रकार न केवल युद्ध के समय, बल्कि युद्ध के बाद भी हमें घोर परिश्रम करने के लिए तथा उत्पादन बढाने के लिए पूरी तरह कमर कसकर तैयार रहना चाहिए और अनिवार्य आवश्यकताओं के लिए अपना देश दूसरे राष्ट्रों पर निर्भर न रहे, इतना उत्पादन बढाना चाहिए। इस कार्य की पूर्ति में सभी दलों को आपस में चाहे जितनी मतभिन्नताएँ रहें, परस्पर सहयोग प्रदान करने का विस्तृत क्षेत्र मिलेगा।

९ जनसभा, कोलकाता

(शहीदो को श्रद्धाजलि देने हेतु १ जनवरी १९७२ को कोलकाता मे आयोजित सभा मे दिया गया भाषण)

विगत एक मास देश में युद्ध का वायुमडल रहा। सीमाओं पर सघर्ष चलते रहे। सघर्ष के दौरान लोग बडी उत्सुकता से परिणामों की ओर देख रहे थे। निकटवर्ती पूर्वी बगाल में अत्याचार हो रहे थे। लोग पीडित थे। अपनी सस्कृति और परपरा के परिपालन में नित्य बाधाएँ आ रही थीं। अपनी भाषा का प्रयोग करने में भी रुकावटें थीं। इन भीषण अत्याचारों को देखकर पूर्वी बगाल, जो कि वस्तुत प्राचीनकाल से अपने ही देश का एक हिस्सा रहा है, की जनता को मुक्त करने के लिए हमारे नेताओं ने प्रयत्न किया। वह उद्देश्य पूर्ण हुआ। सघर्ष कुछ समय के लिए रुक गया है। 'कुछ समय' शब्द प्रयोग मैंने इसलिए किया है कि इसके पहले भी अपने इस पडोसी शत्रु-राष्ट्र से ऐसे ही सघर्ष हो चुके हैं। आज का यह रुका हुआ सघर्ष फिर से प्रारभ होने की सभावना विद्यमान ही है।

हमारे देश के नेता और नागरिक कभी युद्धपिपासु नहीं रहे। हमारी मान्यता है कि जगत् में शाति रहे, सब लोग एक-दूसरे के साथ मिल-जुलकर रहें। विश्व में मानव-कल्याण की भिन्न-भिन्न विचारधाराएँ हों। तदनुसार समाज-रचना और राज्य-व्यवस्थाओं की कल्पना भिन्न हो। अर्थनीति और विकास के रास्ते कई हों। विश्व में सब अपनी-अपनी भूमि में अपनी कल्पना और इच्छा के अनुसार सर्वसाधारण मनुष्य को सुखी बनाने के लिए प्रयत्न करते रहें। इस प्रकार समाज-जीवन के सभी अगों का उत्कर्ष करते हुए सभी देश आपस में भातृभाव धारण करें और उनका जीवन सुख-शातिपूर्वक चले। इस प्रकार की धारणा हमारे देश में परपरागत रूप से विद्यमान रही है।

युद्ध टालने का प्रयत्न

इस युद्ध में भी हमारा देश आक्रमणकारी बनकर सामने नहीं आया। युद्ध के पूर्व हमारे देश की प्रधानमत्री ने जो वक्तव्य दिया, उसमें भी यही कहा गया था कि युद्ध न हो और समझौते से सब प्रश्न ठीक हो जाएँ। प्रधानमत्री की इस भावना से सपूर्ण देश सहमत था। सभी का यह मत था कि अकारण रक्तपात और प्राणहानि न हो और पीडित लोगों को

राहत मिले तथा वे विना किसी दवाव के अपनी इच्छानुसार जीवनयापन कर सकें। परतु इस प्रकार की आशाऍ व्यर्थ सिद्ध हुई। पूर्वी वगाल में अत्याचारों के परिणामस्वरूप घर-वार छोडकर आश्रय पाने के लिए लोग भारत की ओर दौडे। हजारों वर्षो से अपने देश की यह कीर्ति रही है कि विश्व का उत्पीडित मानव जव-जव हमारे द्वार पर आया, उसे भारत का दरवाजा सदेव खुला मिला। भारत ने अपने आतिथ्य-धर्म का परिचय सदैव दिया। प्राचीनकाल में यहॉ यहूदी आए, पारसी आए, अन्य भी आए। भिन्न-भिन्न देशों के लोग, जव उन्हें उनके देश में किन्हीं कारणों से जीवन असह्य हो गया, आश्रय पाने के लिए यहाँ आए। इतिहास साक्षी है कि यहॉ उन्हें न केवल आश्रय मिला, वरन् सम्मान भी मिला। इसी आतिथ्यधर्मी परपरा के अनुरूप जव पूर्वी वगाल से विस्थापित होकर लोग यहॉ आए, तव हमने अपने सामर्थ्य के अनुसार उन्हें आश्रय देकर, उनके साथ वधुभाव का नाता निभाया और उनकी सव प्रकार से सेवा करने का प्रयत्न किया। पूर्व-वगाल से जिस प्रकार हिंदू आए, उसी प्रकार वहॉ के इस्लाम-मतानुयायी भी अत्याचारों से त्रस्त होकर भारत की ओर दौडे। भारत ने इन सभी को आश्रय दिया। मनुष्य को पीडित अवस्था में सहायता करते समय किसी प्रकार का भेदभाव करना न तो अपनी प्रकृति में हे, न वह शोभनीय है। इसलिए वडे प्रेम से हमने उन्हें आश्रय दिया।

अभिनदनीय विजय

जव हमारा देश इन पीडित वधुओं की सेवा करने में लगा था, तव युद्धपिपासु पाकिस्तान ने आक्रमण का रास्ता अपनाया। प्रारभ में हमारे देश के नेताओं ने शत्रु की इन आक्रामक कार्यवाहियों को यह सोचकर सहन किया कि कोई रास्ता निकल आए तो अच्छा। परतु आक्रमणकारी शाति की भाषा समझने से सदैव इनकार करता रहा हे। इस वार भी उसने भारत को जवरदस्ती युद्ध में खींचा। आक्रमण का उत्तर प्रत्याक्रमण से दिए विना और कोइ रास्ता शेष नहीं था। ऐसा यदि नहीं किया, तो जगत् में कायर और भीरु कहलाने का अवसर प्राप्त होगा। दुनिया भारत को शक्तिहीन देश मानेगी। इसलिए हमारे देश के नेताओं ने आक्रमणकारी को जवाव देने और पूर्व वगाल की उत्पीडित जनता को मुक्ति दिलाने के लिए कमर कस ली। नेताओं के साथ सपूर्ण देश ने भी इस पुनीत कर्तव्य में अपना योगदान किया। ऐसे समय अपनी सेना के जल, थल, नभ– तीनों अगों ने अत्यत

सामजस्य से एक-दूसरे का सब प्रकार सहयोग करते हुए बडी कुशलतापूर्वक युद्ध-काय का सचालन किया। उनकी कुशलता से विश्व भी चकित हुआ। हर क्षेत्र में उन्हें विजय मिली। बॉग्लादेश अपनी स्वाधीनता प्राप्त कर सका। यह विजय अभिनदनीय है।

वीर पुरुषो को श्रद्धाजलि

सेना के जिन लोगों ने इस विजय प्राप्ति के लिए अपने प्राण अर्पण किए, उन सब लोगों की स्मृति में कृतज्ञता एव श्रद्धाभाव से नतमस्तक होना और अत करणपूर्वक उनके प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करना अपना कर्तव्य है। उनके बलिदान से न केवल देश की रक्षा हो सकी, वरन् उन्होंने अपने देश का गौरव बढाया। ऐसे लोगों के प्रयत्नों से ही हमें विजय प्राप्त हुई और दुनिया में यह सिद्ध हो सका कि भारत दुर्बल नहीं है। स्वतत्रता और राष्ट्रसम्मान के लिए जब वह खडा होता है, तब उसका सामर्थ्य विश्व में अजेय रहता है।

शहीद हुए लोगों के घरों में शोक की छाया फैली हुई है। कितने ही परिवारों में इन वीर सैनिकों के चले जाने के कारण कठिन समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं। इन सब परिवारों की सहायतार्थ शासकीय तथा सामाजिक दोनों ही स्तरों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इन वीर सैनिकों के चले जाने के कारण उनके परिवारवालों के सामने आजीवन सकट खडा हो गया, परतु राष्ट्र के जीवन-मरण की ऐसी परिस्थितियों में किसी भी देश को यह मूल्य तो चुकाना ही पडता है। इसलिए देश के नाते इस सबध में किसी प्रकार का भय अथवा बेचैनी मन में लाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। ये बातें तो अपनी सेना ओर उसकी परपरा के श्रेष्ठत्व के उदाहरण हैं। उन वीरों की गाथाएँ राष्ट्रीय इतिहास में अतीव गोरव के साथ स्मरण की जाती रहेंगी। इसलिए यही योग्य है कि हम उनकी पुनीत स्मृति में जहॉ-जहॉ जिसका पूजा और श्रद्धा का पवित्र स्थान हो, वहॉ-वहॉ उनकी स्मृति में प्रार्थना की जाए। प्राथना उनकी सद्गति के लिए नहीं, क्योंकि सद्गति तो उन्हें निश्चित ही मिली है।

हम प्रार्थना इसलिए करें कि उनके द्वारा स्थापित वीरता की यह परपरा देश में सदा बनी रहे ओर हमारा देश सामर्थ्यशाली होकर विश्व के समक्ष उपस्थित हो। इन वीर पुरुषों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए

हम प्रार्थना करें। इसीलिए हम सब नागरिक बधुओं के प्रतिनिधि के ना
कोलकाता महानगरपालिका के महापौर महोदय ने और उनके साथ मैंने
उस प्रतीक को पुष्पमाला यहाँ समर्पित की।

नि स्वार्थ रक्षा की परपरा

इस युद्ध में अपने राष्ट्रजीवन की कुछ अन्य श्रेष्ठ बातें भी प्रक
हुई। हमारे देश की यह परपरा रही है कि जब भी किसी प्रकार के अन्याय
उत्पीडन और अत्याचार से ग्रसित मानव की मुक्ति के लिए हमें शस्
उठाना पडा, तब हमने किसी प्रकार के स्वार्थ को अपने अत करण
स्थान नहीं दिया। शताब्दियों के लबे इतिहास में अपने देश की यह
मानव-कल्याणकारी भावना बार-बार प्रकट होती रही है, जबकि अन्य देशों
ने अवसर मिलते ही मुक्ति के नाम पर वहाँ अपना शासन स्थापित किय
है। इस प्रकार एक आक्रमण के हटने पर भी उस भू-प्रदेश की जनता को
दूसरे का गुलाम बनना पडा।

अत्यत प्राचीनकाल में प्रभु रामचद्र जी का ऐसा ही उदाहरण हमारे सामने है। अत्याचार से ग्रस्त सुग्रीव जब प्रभु रामचद्र जी के चरणों में उपस्थित हुआ, तब उन्होंने सुग्रीव का पक्ष लेकर बाली का वध किया। राज्य अपने हाथ में रखने की क्षमता होते हुए भी उन्होंने किष्किंधा का राज्य सुग्रीव को सौंप दिया। इसी प्रकार रावण-वध करने के बाद लका पर राज्य करने से उन्हें रोकनेवाला कौन था? परतु उन्होंने राज्य विभीषण को सौंप दिया। भगवान श्रीकृष्ण ने अत्यत दुराचारी कस और जरासध आदि का वध करने के पश्चात् उनके राज्य स्वय नहीं लिए। उनके वशधरों को ही राज्य सौंप दिए। पीडित मानव की रक्षा को अपना धर्म समझकर शस्त्र धारण करना विजय प्राप्त करना ओर स्वार्थ का अशमात्र भी न आने देते हुए राज्य को योग्य अधिकारी को सौंप देना ही अपनी उदात्त परपरा है।

वास्तव में वह भूमि अपनी ही है। पुराने समय में उस भूमि के कई स्थानों पर में स्वय हो आया हूँ। फिर भी बीच के कालखड में वहाँ एक भिन्न राज्य की स्थापना हो गई। इसलिए इस कालगति का सम्मान करते हुए, अपनी प्राचीन परपराओं के अनुरूप हमारे देश ने यही योग्य विचार किया कि वे ही स्वाधीनतापूर्वक अपना राज्य-सचालन करें। साथ ही यह आश्वासन भी दिया कि आवश्यकता पडी तो हम रक्षा करेंगे। यह अपनी परपरा के अनुरूप ही है।

मुझे आशा है और मैं ऐसा समझता हूँ कि किसी भी प्रकार की साप्रदायिकता अथवा क्षुद्र भावना अत करण में न आने देते हुए, बॉग्लादेश का नेतृत्व करनेवाले वधु उन समस्त वधुओं को जो अपने घर-द्वार से उजड गए हैं, पीडित हैं, विस्थापित होकर भारत में पडे हुए हैं, पुन अपनी भूमि में सम्मानपूर्वक ओर आत्मीयतापूर्वक वसाने का प्रयत्न करेंगे। पिछले पच्चीस वर्षो से भिन्न-भिन्न प्रकार के अत्याचारों से पीडित हुए जो वधु वास्तुहारा वनकर आए हैं, वे पुनरपि वापस जा सकेंगे।

कुछ वर्ष पहले की बात है। एक वडे नेता ने मुझसे कहा कि भिन्न-भिन्न स्थानों पर जो साप्रदायिक दगे होते हैं, उनमें यही बात सामने आती है कि इस्लाम-मतानुयायी लोग दगा करते हैं, हिंदुओं के जुलूसों पर हमले करते हैं, मदिर तोडते हैं, उपद्रव भडकाते हैं। फिर जब हिंदू-समाज आत्मरक्षा के लिए प्रतिकार करने खडा होता हे, तव सब प्रकार से अधिक नुकसान मुसलमानों का ही होता है। बार-बार नुकसान होने पर भी वे लोग दगा क्यों करते हैं?

मेरी समझ में इसका एक ऐतिहासिक कारण हे। इस्लाम मत उस अरबस्थान में प्रारभ हुआ, जहॉ के लोगों का धधा ही आपस में एक-दूसरे के साथ लडाई-झगडा करना था। एक-दूसरे की हत्या करना, जिसे हम शस्त्रोपजीवी कहते हें, ऐसा जीवन जीना ही उनका स्वभाव था। अरबस्थान की इसी प्रकृति की छाप इन लोगों पर पडी। इसलिए उन्हें बिना सघर्ष के अच्छा ही नहीं लगता। बार-बार मार खाते हैं, फिर भी बार-बार आक्रमण करते रहते हैं। काला चींटा भी ऐसा ही करता है। यदि आप उसे अपने पास न आने देने के लिए दूर हटाते जाएँ, तव भी वह बार-बार काटने का प्रयत्न करता हुआ समीप आता रहता है। ऐसा करना उसका स्वभाव है। वे शायद ऐसा सोचते हों कि बार-बार की मारपीट से परेशान होकर शातिप्रिय हिदू-समाज अततोगत्वा हार जाएगा, कभी न कभी उन्हें सफलता मिल ही जाएगी।

जव देश का विभाजन हुआ ओर पाकिस्तान बना। तव कई लोग ऐसा समझते थे कि अव वे शातिपूर्वक रहना सीखेंगे, परतु पिछले पच्चीस वर्षो का अनुभव इस धारणा के विपरीत है। उन्होंने आक्रमण किया ओर वे हारे भी, परतु उनके दिमाग में अभी भी यह वात नहीं आई हे कि

उनकी शक्ति यहाँ नहीं चल सकती। अत वे भारत के साथ मित्रता करके रहें। भारत की शाति की आकाक्षा होने पर भी उनका ऐतिहासिक स्वभाव उन्हें चैन से नहीं बैठने देता। इसीलिए वे बार-बार सघर्ष करते रहते हैं। अत जब तक उनका यह स्वभाव कठोरतापूर्वक पूरी तरह बदला नहीं जाता, तब तक वे अपनी हरकतों से बाज आनेवाले नहीं हैं।

विजय का आधार

इस ऐतिहासिक शिक्षा को मानकर हमें यह स्वीकार करना होगा कि अपने स्वाभिमान और सम्मान की रक्षा के लिए अपनी राष्ट्रीय शक्ति को सदैव सन्नद्ध रखना जरूरी है। निस्सदेह देश-रक्षा के लिए सेना का बहुत बडा योगदान है, परतु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि केवल सेना ही नहीं लडती। सेना के पीछे खडा हुआ मनुष्य-समुदाय महत्त्वपूर्ण रहता है। सपूर्ण जनता की शक्ति, सद्गुणों के साथ एकता, राष्ट्रभक्तिपूर्ण अत करण, छोटे-छोटे सभी भेदों को नष्ट करनेवाली सगठितता और प्रत्यक्ष युद्ध के मोर्चे पर जूझ रही सेना की क्षति को तत्क्षण पूर्ण करने के लिए, व्यक्ति-व्यक्ति की सिद्धता भी युद्ध में विजय के लिए आवश्यक होती है। जनता की यह सहज कर्तव्यतत्परता ही सेना के अत करण में ऐसा विश्वास उत्पन्न करती है कि पूरा-का-पूरा समाज उसकी पीठ पर खडा है। सेना के साथ सपूर्ण समाज की यह सगठित शक्ति ही विजयशाली होती है।

हमारा कर्तव्य

इस तथ्य को भली-भॉति हृदयगम कर, हमें अपना कर्तव्य पूर्ण करना चाहिए। आज समाज-जीवन का जो चित्र हमारे सामने प्रस्तुत है, वह सतोषजनक नहीं है। राष्ट्र को सकटमुक्त करने के लिए, उसमें पर्याप्त परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। यद्यपि सकट आने पर हम लोग सगठित हो जाते हैं, परतु इतने मात्र से काम नहीं चलेगा। आसेतुहिमाचल एकरस राष्ट्रजीवन की अनुभूति होने पर ही अपना राष्ट्र सब सकटों का निराकरण कर सकता है और शातिकाल में प्रगति तथा युद्धकाल में शत्रुओं के दॉत खट्टे कर सकता है। इसके लिए जाति, पथ आदि के क्षुद्र स्वार्थो की भेदमूलक प्रवृत्तियों को समूल नष्ट करते हुए हमें एक महान परिवार के नाते अपना जीवन प्रकट करना होगा। सकटकाल में क्षणिक एकता का दर्शन होना ही पर्याप्त नहीं है।

१० नागरिको के साथ वार्तालाप

(कोलकाता २ जनवरी १९७२)

पूर्व बगाल से आए हुए सभी हिदू वापस जाएँ तथा वहाँ अच्छी प्रकार से स्थायी हो सकें, इस प्रकार का हमें प्रयत्न करना चाहिए। वहाँ हमें सगठित होकर रहना है। हम सब एक हैं, हमारे पूर्वज एक हैं, हम सबके शरीर में एक ही रक्त है। आखिर बगाली, माने हिदू ही होता है– यह भाव उनमें जगाना चाहिए। सारे धार्मिक स्थानों की पुनर्प्रतिष्ठा करनी चाहिए।

कई लोग ऐसा कहने लगे हैं कि अब पूर्व की ओर से हमें कोई खतरा नहीं रहा। अब पश्चिमी पाकिस्तान के भी चार टुकडे हो जाएँगे। पख्तूनिस्तान, बलुचिस्तान, पजाब, सिध– इन चार टुकडों में पाकिस्तान के बँट जाने से उसका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। परतु ऐसा समझकर पाकिस्तान की ओर से निश्चित होकर बैठना बडी भूल होगी। अपना इतिहास बताता है कि दक्षिण में बहामनी राज्य के पाँच टुकडे हुए थे, परतु विजयनगर के हिदू-राज्य को समाप्त करने के लिए, ये पाँचों एक हो गए। आज भी वैसा हो सकता है। अत पूर्ण सतर्कता की नितात आवश्यकता है।

११ जनसभा

(आगरा ३१ जनवरी १९७२)

युद्ध के बाद पाकिस्तान के साथ जो भी सधि हो, उसमें हमें अपनी सपूर्ण युद्ध-क्षति लेने का आग्रहपूर्वक प्रयत्न करना चाहिए। विजित क्षेत्रों को कदापि पाकिस्तान को नहीं लोटाया जाना चाहिए। देश के नेतागण इसके लिए वचनबद्ध भी हैं। हमारे बडे नेताओं ने अभी तक दृढता का परिचय दिया है। आगे उनकी परीक्षा की घडी है।

पाकिस्तानी शासकों की युद्ध-पिपासा एव अत्याचारों के परिणामस्वरूप युद्ध हुआ था। अत युद्ध-क्षति का हिसाब लगाते समय उसकी सपूर्ण पृष्ठभूमि पर ध्यान दिया जाना चाहिए। इसमें पूर्वी बगाल से भारत में आकर रहनेवाले एक करोड शरणार्थियों पर हुआ साढे तीन करोड रुपए प्रतिदिन का व्यय भी शामिल है। क्षतिपूर्ति वसूल किया जाना अतर्राष्ट्रीय

कानून एव व्यवहार में मान्यताप्राप्त बात है।

कुछ लोग कह सकते हैं कि इतनी विपुल राशि पाकिस्तान कहाँ से देगा? इसकी अदायगी से तो उसका अस्तित्व ही मिट जाएगा। भले ही इससे उसका अस्तित्व मिटता हो, उसके लिए हमें रोने की आवश्यकता नहीं है। पाकिस्तान का अस्तित्व मिटने पर वहाँ के लोग हमारे साथ सानद रह सकते हैं। आखिर वे हमारे भाई ही हैं। हम सब एक ही सभ्यता में पले हैं। उन्हें तो केवल उनमें पैदा हुई अलगाव की भावना से छुटकारा पाना होगा।

वास्तविक रूप से समाज के इस हिस्से (मुसलमान) को विचार करना चाहिए कि जिस प्रकार राजनैतिक परतत्रता को तोडना योग्य है, उसी प्रकार स्वातत्र्यप्रेमी और स्वाभिमानी लोगों को किसी दूसरी सस्कृति की गुलामी भी नहीं करनी चाहिए। कोई कहेगा अगर वे ऐसा करते हैं, तो क्या हिदू-समाज उनको मान्यता देगा? मैं विश्वासपूर्वक कहता हूँ कि हिदू-समाज उनको प्रेम ओर आदर के साथ अपने मध्य स्थान देगा। उनको अगीकार करेगा।

卐卐卐

१२ प्रातीय शिविर, तमिलनाडु

(चेन्नै ११ फरवरी १९७२)

अनेक बार हम कोई विशिष्ट कार्य करना चाहते हैं, किंतु मार्ग में अनेक बाधाएँ उपस्थित हो जाती हैं। युद्ध की बात को ही लें। यद्यपि अपना देश ओर अपना समाज युद्धप्रिय नहीं है, फिर भी हाल ही में हम पर एक बहुत बडा विदेशी आक्रमण थोप दिया गया। अपनी पराक्रमी सेना ने इस आक्रमण का वीरतापूर्वक सामना किया ओर महान विजय प्राप्त की। जो लोग युद्धशास्त्र व उसकी कला से अवगत हैं, रणनीति ओर प्रत्याक्रमण-नीति को भली-भाँति जानते हैं, ऐसे सपूर्ण जगत् के सभी लोगों ने हमारे सेनापतियों द्वारा किए गए युद्धसचालन की मुक्तकठ से प्रशसा की। पूर्व-बगाल में हमने जिस तेजी से शत्रु को दबोचा, उससे सारा विश्व स्तभित है। वहाँ प्रथम दो दिनों तक तो हमारे विमान ही आकाश पर छाए रहे। सेना ने असामान्य तेजी से आगे बढकर वहाँ की पीडित जनता को

नष्ट कर दिया। जो अभूतपूर्व विजय हुई, इसका कारण हमारी सेना और उसके सेनाधारियों का पौरुष, पराक्रम, युद्ध-नीति की कुशलता तो है ही, साथ ही महत्त्व का एक अन्य कारण यह भी है कि वे एक उदात्त उद्देश्य लेकर युद्धक्षेत्र में उतरे थे। अतःकरण में उदात्त भावना होने से सामर्थ्य प्राप्त हुआ। इसके विपरीत जो शत्रु-पक्ष था, वह अपने ही अत्याचारों के बोझ से दबा था। जहाँ अनीति और पापाचरण होता है, वहाँ साहस नहीं रहता। इसीलिए न्याय की अन्याय पर विजय स्वाभाविक थी।

परिस्थिति का योग्य आकलन आवश्यक

गौरव, आनद और विजयोल्लास का यह प्रसग होने पर भी हमें परिस्थितियों का ठीकठाक आकलन करना जरूरी है। प्रसन्नता होना ठीक है। परतु ऐसा नहीं सोचना चाहिए कि अब आगे किसी प्रकार का सकट आएगा ही नहीं। क्योंकि यह युद्ध पूण निर्णायक नहीं है, अभी अधूरा हुआ है। शत्रुता करनेवाली शक्ति अभी भी विद्यमान है। आक्रमणकारी हार खाने के बाद भी अपनी शक्ति बटोरने में पुन लग गया है। कोई भी समझदार आदमी यह नहीं कह सकेगा कि उसकी हम पर आघात करने की इच्छा अब नहीं रही। इसलिए हमें नित्य सतर्क और शक्तिसपन्न बने रहने की आवश्यकता है।

युद्ध में हमें जो अनुभव प्राप्त हुए हैं, वे महत्त्वपूर्ण हैं। अपने देश में कुछ लोग ऐसा सोचते थे कि विश्व में जनतात्रिक आस्थाओं की घोषणा करनेवाले जो देश हैं, उनका समर्थन हमें केवल इसीलिए मिलता रहेगा कि हम भी जनतत्र में विश्वास रखते हैं। किंतु इस युद्ध में अनुभव ठीक इसके विपरीत आया। स्वय को जनतात्रिक कहलानेवाले अमरीका ने हमारे जैसे जनतात्रिक देश के खिलाफ एक ऐसी सैनिक तानाशाही की सहायता की, जिसने अनेक घृणित नृशस कार्य किए हैं। इतना ही नहीं, उसे युद्ध में प्रोत्साहन देने के लिए अपना सैनिकी समुद्री बेडा भेजकर भारत को भयभीत करने का भी प्रयत्न किया। यह अनुभव हमें शिक्षा देता है कि विश्व में कोई किसी का स्थायी मित्र नहीं होता। ऐसे देशों के लिए सैद्धातिकता तो लोगों को भ्रम में डालकर वश में करने का साधन मात्र है। जो लोग अमरीका को मित्र समझते रहे उनकी आँखें इस घटना से खुल गई होंगी।

इसी प्रकार कुछ दूसरे लोग हैं, जिनका आजकल अपने देश में कुछ

अधिक बोलवाला है। वे रूस से मित्रता रखनेवाले हैं। उन्हें भी शिक्षा देने के लिए इस युद्ध में एक अनुभव हमारे सामने उपस्थित हुआ है। हमें विदित है कि अपने देश ने रूस के साथ संधि की। उसका कुछ लाभ भी हुआ। परंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि उसकी इस कार्यवाही के पीछे एक कारण यह भी था कि युद्ध के समय अमरीका को बहुत आगे बढ़ने से वे रोकना चाहते थे। इसी दृष्टि से रूस ने मित्रता का यह हाथ बढ़ाया। फिर भी यह बात ध्यान देने योग्य है कि यह युद्ध अकस्मात बंद हो गया। अपनी सेना के अधिकारी नहीं चाहते थे कि युद्ध इतने शीघ्र बंद हो। यह अकस्मात बंद होने का कारण है रूस का स्वार्थ। उसने इस क्षेत्र में शक्ति संतुलन को बनाए रखने के लिए, अपना प्रभुत्व बढ़ाने के लिए ही यह कदम उठाया। मेरा अनुमान है कि युद्ध को निर्णायक स्थिति में पहुँचने के पहले ही युद्धविराम करने के लिए उसने ही अपने देश के नेताओं को बाध्य किया। वह भारत की शक्ति बढ़ने देना नहीं चाहता।

अमरीका की निंदनीय उकसाहट

पूर्वी बंगाल का पाकिस्तान के विरुद्ध जब स्वतंत्रता-युद्ध प्रारंभ हुआ, तब अपने देश में कुछ लोग यह माँग करने के लिए खड़े हुए कि पश्चिम बंगाल प्रदेश को अधिकाधिक स्वायत्तता मिलनी चाहिए। पूर्वी बंगाल के समान ही पश्चिमी बंगाल को भी पृथक अस्तित्व मिलना चाहिए। मेरा अमरीका पर यह आरोप है कि उसने भारत की शक्ति को विभाजित करने के लिए इस प्रकार की माँग के प्रयत्नों को प्रेरणा दी और उकसाया। हमारे देश में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप कर, विघटन उत्पन्न कर, हमें कमजोर करने का उसका यह दाँव है। अगर यह गलत सिद्ध हो, तो बहुत अच्छा होगा, परंतु अभी तक अमरीका की जो कार्यवाहियाँ रही हैं, उनसे ऐसा नहीं लगता कि यह आरोप गलत है।

इस प्रकार क्या हम अपने अनुभवों से यह नहीं समझते, कि जगत् में सच्चे अर्थ में अपना कोई मित्र नहीं है। जहाँ तक उनका स्वार्थ सिद्ध होता है वहीं तक वे मित्रता का आभास उत्पन्न करेंगे और इस अवसर की खोज में रहेंगे कि यहाँ विघटन उत्पन्न कर राष्ट्रीय शक्ति को कमजोर किया जाए।

सारांश यह है कि अपने देश को किसी अन्य की कृपा पर निर्भर बनाए रखने की अवस्था नहीं रहनी चाहिए। देश को सभी दृष्टि से

स्वावलंबी बनाने का काम अपना है। संकटों से टक्कर लेने की क्षमता निर्माण करने का दायित्व उन लोगों पर ही आता है, जो इस देश के राष्ट्रीय हैं। इस बात को हम लोग समझें और उसे पूर्ण करने का प्रयास करें।

राष्ट्रभक्त समाज का निर्माण

परंतु आज अपना दुर्भाग्य ऐसा है कि अपना नेतृत्व भी स्वार्थशून्य राष्ट्रभक्ति नहीं सिखाता। इसका एक उदाहरण देता हूँ। सन् १९६५ में जो युद्ध हुआ था, उस समय पंजाब के कुछ क्षेत्रों में पाकिस्तान के कुछ छाताधारी सैनिक उतरे। वे शस्त्रास्त्रों से लैस थे। तोड़-फोड़ और विच्छेदक कार्यवाही करने में वे संलग्न थे। सरकार को जब यह समाचार मिला तो घोषणा की गई कि जो उन छाताधारी सैनिकों को पकड़ेगा, उसे नकद पुरस्कार दिया जाएगा। उस समय मैंने नेताओं से कहा– 'भाई, इस समय जनता में देशभक्ति की भावना जागृत है। इसलिए ऐसा आह्वान क्यों नहीं करते कि शत्रु के इन घुसपैठियों को पकड़ने का कर्तव्य प्रत्येक नागरिक का है। राष्ट्र की सुरक्षा के लिए संकट उपस्थित करनेवाले इन पाकिस्तानी छाताधारी सैनिकों को पकड़ना तो अपनी राष्ट्रभक्ति का स्वयंस्फूर्त द्योतक है। अपने नागरिक बंधुओं को पैसे का प्रलोभन देने से क्या लाभ होगा? पैसे के लालच से उन्हें कोई पकड़ने जाए तब क्या यह संभव नहीं कि पैसे के लालच से वह उन्हें छोड़ भी दे? ये छाताधारी सैनिक खाली जेब तो यहाँ आते नहीं। अधिक बड़ा लोभ दुश्मन की ओर से मिलने पर हमारा नागरिक कर्तव्यच्युत हो सकता है।

लोभ के द्वारा कार्य कराना प्रारंभ करने पर किस प्रकार की अनिष्ट बातें होती हैं इसका अनुभव हाल ही में पूर्व बंगाल की सीमा पर मिला। वहाँ जब अत्याचारों के कारण संकट की परिस्थिति निर्माण हुई, तब कई लोग भारत में आने का प्रयत्न करने लगे। वहाँ से आनेवालों से घूस लेकर उनकी सहायता करनेवाले कुछ लोग हमारे यहाँ भी मिले। इस प्रकार के समाचार प्रकाशित हो चुके हैं। कहने का मतलब यह है कि स्वार्थ को जगाकर कार्य कराने का प्रयत्न सफल नहीं होता।

इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हे कि समाज की निःस्वार्थ-राष्ट्रभक्तियुक्त शक्ति ही राष्ट्र की वास्तविक शक्ति है।

❧ ❧ ❧

१४ क्रांति का आह्वान

(कानपुर १ सितंबर १९७२)

अभी कुछ ही दिन पूर्व हमें एक युद्ध लडना पडा है। उस युद्ध ने निश्चित ही भारतीय इतिहास में विजय का एक नया गौरवपूर्ण अध्याय जोड दिया है। विदेशी युद्ध समीक्षकों की धारणा थी कि पूर्व बगाल में भारतीय सेना को भारी कठिनाइयों का सामना करना पडेगा। वे ऐसा मानते थे कि भारतीय सेना यदि ढाका के पास पहुँच जाए तो भी उसे ढाका में प्रविष्ट होने में तीन माह का समय लगेगा। किंतु हमारी सेनाएँ ढाका में तीन दिन के अदर ही प्रवेश कर गई। वे सोचते थे कि भारतीय सेनाओं को जेसोर के निकट ही रोक दिया जाएगा, किंतु हमारी सेना जेसोर की छावनी को एक ओर छोडते हुए आगे बढ गई। सेना की सफलता, उसकी कुशलता, शौर्य एव वीरता से राष्ट्र में गौरव की भावना जागृत हुई है। सेना का यह पराक्रम राष्ट्र के लिए अभिमान की बात है।

लोग पूछते हैं कि हमारे लोग क्या विचारवान नहीं थे? तो इसके लिए मुझे एक छोटी घटना का स्मरण होता है। 'इटरनेशनल लॉ' के जानकार एक विद्वान वकील से कुछ लोगों ने कहा कि 'इटरनेशनल लॉ' आप जानते हैं, उसके बारे में हमें कुछ बताइए। उन्होंने कहा कि मेरे पास समय थोडा है, किंतु मैं आपको दो वाक्यों में बताए देता हूँ। 'इटरनेशनल लॉ' के दो प्रमुख सिद्धात हैं, शेष सब गौण हैं। पहला सिद्धात 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' है और दूसरा सिद्धात कोई भी बात चाहे कितनी ही झूठ हो, बार-बार बोलो। सौ बार, हजार बार बोलो। फिर दुनिया उसको सच मानने लगेगी, याने किसी बात को यदि बार-बार दुहराया जाए तो वह सत्य को भी असत्य मान लेती है। उसी प्रकार हम लोग समझ सकते हैं कि बार-बार प्रचार होने के कारण अपने यहाँ के बडे-बडे लोगों में अहिंदुता का फैल जाना कोई अस्वाभाविक नहीं था। वह अभी भी फैली हुई है। इसका हमें पद-पद पर परिचय मिलता है। यह कोई अस्वाभाविक परिणाम नहीं, परतु अपने लिए यह अत्यत भयावह परिणाम अवश्य है।

इस सबध में मुझे एक प्रसग याद आता है। अमरीका में एक धनवान पुरुष थे। पृथ्वी का सबसे धनी मानव उन्हें कहा जाता था। उनके पास एक साम्यवादी नेता पहुँचे। उनको काफी कटु बातें सुनाईं और कहा

कि तुम बडे दुष्ट हो, बडे राक्षस हो, गरीबों का रक्त चूस कर तुमने सब सपत्ति इकट्ठा की है। ऐश आराम में तुम लोट-पोट रहते हो, तुम्हारी यह दुष्टता हम नहीं चलने देंगे। हमने निश्चय किया है कि हम तुम्हारी सब सपत्ति छीन लेंगे ओर उसका सब लोगों में वितरण कर देंगे। जब उनका बोलना पूरा हो गया तब धनवान पुरुष ने अपना बक्सा खोलकर एक नया पैसा, जिसको अमरीका में 'सेन्ट' बोलते हैं, निकाला और उनको दिया। नेता ने झुंझलाकर कहा कि यह मुझे क्या दे रहे हो? धनवान ने कहा– 'भाई नाराज क्यों होते हो? तुम जब बोल रहे थे तब मैं हिसाब लगा रहा था कि मेरी सपत्ति कितनी है और ससार की जनसख्या कितनी है। उन सबमें समान रूप से वितरण किया तो हरेक के हिस्से में एक सेन्ट से कम ही आया। परतु तुम नेता हो, इसलिए तुमको पूरा सेन्ट दे रहा हूँ।'

❀ ❀ ❀

१५ स्वयसेवकों के बीच भाषण

(जयपुर ६ अक्तूबर १९७२)

बार-बार ऐसा होता है कि हमारे बहादुर जवान रणक्षेत्र में शत्रु को परास्त कर जो विजय अर्जित करते हैं, उसे हमारे राजनीतिज्ञ वार्ता की मेज (टेबल) पर गँवा बैठते हैं। यह बडी ही पीडा पहुँचानेवाली बात है। मैं नहीं कह सकता कि यह बात कब तक चलती रहेगी। शिमला-समझोता भी उसी भूल की पुनरावृत्ति मात्र है। यह समझौता निष्फल सिद्ध हुआ है। यद्यपि बॉग्लादेश स्वतत्र होने से पाकिस्तान की ताकत टूटी है, परतु यह नहीं कहा जा सकता कि कब पाकिस्तान फिर भारत पर आक्रमण कर दे।

आज विश्व में केवल रूस हमारा दोस्त माना जाता है। मैं नहीं कह सकता कि यह दोस्ती कब तक चलेगी। मेरा मत है कि यदि भारत बराबरी के आधार पर विश्व में मित्रता करे, तो भारत को बहुत-से मित्र मिलेंगे। परतु बराबरी करने के लिए अपने देश को पूर्णत आत्मनिर्भर और शक्तिशाली बनना होगा। इसके सिवाय एक स्वाभिमानी और आत्मनिर्भर राष्ट्र बनने के लिए अन्य कोई रास्ता नहीं।

❀ ❀ ❀



वक्तव्य

समय समय पर विशिष्ट परिस्थितियाँ निर्मित हुईं। सघ-स्वयसेवको तथा समाज को दायित्व बोध हो तथा वे स्वकर्तव्य-पूर्ति हेतु अपेक्षित योगदान कर सके, इस दृष्टि से श्री गुरुजी ने समय समय पर जो वक्तव्य दिए, उनको यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

---

१ पूर्व पाकिस्तान के हिंदुओ के विषय मे

(सन् १६५० में पूर्व पाकिस्तान में हिंदू-नागरिकों पर अमानवीय अत्याचार हुए। उनका सब कुछ छीनकर उन्हें अपने घरों से निष्कासित कर दिया गया। इस समस्या पर मौलिक चितन कर उसमें से रचनात्मक कार्य हो, इस उद्देश्य से श्री गुरुजी द्वारा दिया गया वक्तव्य)

मैं अभी-अभी वगाल से आया हूँ। वहाँ के प्रवास में मैंने पूर्व-बगाल की स्थिति का कई माध्यमों से अध्ययन किया। उसपर से मेरा ऐसा निश्चित मत वना हे कि वहाँ के हिंदू-भाइयों की अपने देशबधुओं द्वारा शीघ्रता से सहायता की जानी चाहिए। उनकी अवस्था इतनी दु खदायी है कि उसका शब्दों में वर्णन करना सभव नहीं हैं। पूर्वी बगाल के चारों ओर फौलादी आवरण है, जिससे सही खबरें बाहर नहीं आतीं। फिर भी उसे भेदकर नृशस हत्या, लूटमार, आगजनी बलात्कार, जबरन धर्मांतरण जैसी नित्य होनेवाली घटनाओं की वार्ताएँ हम लोगों तक पहुँचने लगी हैं।

हम यह नहीं भूल सकते हैं कि अपने वर्तमान नेतृत्व द्वारा धर्म-भेद के आधार पर देश का विभाजन स्वीकार कर लिया जाना उनकी दुरवस्था

का प्रत्यक्ष कारण है। विभाजन धर्म-भेदमूलक न होकर भौगोलिक है, इस भ्रम से नेता स्वय को और जनता को मुक्त करे। वस्तुस्थिति बिल्कुल साफ है। उसका सही स्वरूप हम समझे और उससे नित्य निपटने का निश्चय करें। जिनके हाथों राजसत्ता है, वे खुली ऑखो से सत्य को देखें तथा उसे स्वीकार करें। इसके लिए आवश्यक प्रयत्न करने में कोई कसर नहीं छोडनी चाहिए।

आज भी विभाजन के सबध में भ्रात धारणा और असाप्रदायिक राज्य के सबध में विपरीत धारणा भारतीयों के सामने बार-बार रखी जाती है। फलस्वरूप इस समस्या के समाधान करने के मार्ग मे गभीर बाधाएँ पैदा हो रही हैं। हम अपने इन अभागे डेढ करोड बधुओं के प्रति क्या भाव रखें? उन्हें अपने देशवासी माने या विदेशी? पुनर्वास मत्री और शासन के जिम्मेदार अधिकारी उन्हें विदेशी नागरिक कहते है। यह कहाँ तक उचित है? अपनी जिम्मेदारी टालने के लिए ऐसा कहना और अपने ही बधुओ को सिरदर्द मानना क्या न्यायोचित है? क्या यह सारा विचार शुद्ध है? साफ-साफ कहना हो, तो इसे अमानवीय व्यवहार ही कहा जाएगा। इतना ही नहीं, वह सबका अपमान है, जले पर नमक छिडकना है। वास्तव में वे भारतीय नागरिक हैं, परतु अचानक उनके मन के विरुद्ध उनकी भारतीय राष्ट्रीयता जबरन छीन ली गई और उन्हें नि शस्त्र एव असहाय अवस्था में निर्दयी तथा हिसक पाकिस्तानियों के सामने छोड दिया गया।

इसके लिए सर्वप्रथम आवश्यक है कि हमे स्वप्निल मिथ्यावाद से दूर रहकर उस प्रदेश की भीषण परिस्थिति का सत्य स्वरूप देखना पडेगा, याने हम सत्य को ऑखों से ओझल न करे। हम यह भी ध्यान रखें कि व्यक्ति या दल की अपनी कल्पना से निर्मित मिथ्याचारो का अनुसरण करने की अपेक्षा डेढ करोड भाई-बहनों के प्राण और वित्त की सुरक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह विषय इतना गभीर, जटिल और व्यापक है कि इसे शासनकर्ता ही नियत्रण में रख सकते हैं।

वर्तमान नाजुक परिस्थिति मे हमारा शासन राजनीतिज्ञता, व्यवहारकुशलता और दृढता के सहारे शीघ्र निर्णय कर सकता है या नहीं और लिए गए निर्णय शीघ्रता से कार्यान्वित कर सकता है या नहीं, इस कसौटी पर उसकी परख होनेवाली है।

मैं अपने देश के शासन और विशेष रूप से अपने प्रधानमत्री को आग्रहपूर्वक यह बतलाना चाहूँगा कि सीमा पर रहनेवाले हमारे भाई-बहनों की मुक्ति के लिए और पाकिस्तान के दुष्कर्मों के निवारण के लिए वे दृढतापूर्वक योजना बनाएं तथा उसे कार्यान्वित करें। अनिश्चय, द्विधा मनोवृत्ति और दुर्बलता बढती रही, तो डेढ करोड निरपराध भारतीयों के विनाश का पाप भारत सरकार के माथे पर लगेगा और उसकी प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल जाएगी। असाप्रदायिकता के गर्त में गिरने का भय छोडकर पुलिस-कार्यवाही हो या पाकिस्तान के हिंदुओं की भारत के मुसलमानों के साथ अदला-बदली हो, इस तरह के कुछ ठोस कदम शीघ्र और दृढता से उठाए जाने चाहिए। जिससे हमारे आत्मीय, हमारे रक्त-मास के डेढ करोड बधु बच सकेंगे और भविष्य में सुखमय जीवन बिता सकेंगे। इसके साथ ही मैं अपने देशवासियों से कहूँगा कि वे अपना क्षोभ सयम से प्रकट करें। शाति भग हो या हमारी सरकार के मार्ग में कुछ बाधाएँ खडी हों, ऐसा वे कुछ भी न करें।

अपने दु खी और आपत्तिग्रस्त बधुओं की सहायता के लिए दौड पडना और उनकी तन-मन-धनपूर्वक सेवा करना हम सबका कर्तव्य है। जो दूर रहनेवाले बधु हैं, उनके लिए प्रत्यक्ष तन से सेवा करना सभव नहीं है, परतु वे यथाशक्ति यथेच्छ धन के रूप में सहायता कर सकते हैं। इस प्रकार अपने हृदयकपाट अपने दु खी भाई-बहनों के लिए खोलकर, अपने हृदय में उन्हें सहानुभूतिपूर्वक स्थान देकर, उनके लिए जो-जो सभव हो, वह करें। उसी प्रकार हम एकजुट होकर अपनी सरकार से मॉग करें कि वह इन हिंदुओं को हलाहल विष से बचाने के लिए प्रभावी कार्यवाही करे। सपूर्ण भारत से यह आवाज एकमुख से उठनी चाहिए, तभी हमारी सरकार शीघ्रता और दृढता से सही और प्रभावी उपाय करेगी। जनता की आवाज दबाने से कोई अच्छा परिणाम नहीं निकलेगा, इसलिए इस जीवन-मरण के प्रश्न पर जनता को अपनी भावनाएँ प्रकट करने का अवसर मिलना चाहिए। सरकार से भी यह कहना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ कि वह गणराज्य के नागरिको की पुकार सुनकर, उनपर विश्वास रखकर, जनता और शासन का सयुक्त कार्यक्रम बनाकर, राजनैतिक पक्षोपपक्ष से ऊपर उठकर ऐसी शक्तिशाली एकता पैदा करे, जिससे देश की स्वतत्रता और मानमर्यादा की रक्षा हो।

ि ि ि

२ पूर्वी-बगाल के पीडितो की सहायतार्थ

(नागपुर, १८ मार्च १९५०, पूर्वी-बगाल के पीडितों की सहायतार्थ जनता से अभ्यर्थना)

देश-विभाजन के पश्चात् से पूर्वी पाकिस्तान में रहनेवाले लक्षावधि हिदू बाधव घोर सकट का सामना कर रहे हैं। गत कुछ महीनों से वहाँ के अत्याचार-काड ने अत्यत उग्र रूप धारण किया है। पूर्वी बगाल के सभी भागों में प्रचलित लूट, अग्निकाड, नारी-अपहरण, बलात् धर्म-परिवर्तन, हत्याकाड आदि प्रकार के आक्रमणों के कारण तत्रस्थ हिदुओं के लिए सम्मान के साथ जीवनयापन करना असभव हो गया है। इतना ही नहीं, पाकिस्तान की सीमा पारकर अपनी सरकार के आश्रय में आना भी यातायात की असुरक्षितता के कारण कठिन हो गया है। फिर भी वहाँ की नारकीय यातनाओं से छुटकारा पाने के लिए नाना प्रकार के सकटों का सामना करते हुए सहस्रों हिदू भारत आ रहे हैं।

पाकिस्तान स्थित हिदुओं को सब प्रकार का सरक्षण देने के अपने दायित्व को पूर्ण करने के लिए भारत सरकार से परिणामकारक अनुरोध करना एव सरकार द्वारा अपेक्षित अविलब कार्यवाही में सपूर्ण सहयोग देना तो हमारा कर्तव्य है ही, परतु वहाँ से आनेवाले लक्ष-लक्ष व्यथित व निरापराध भाई-बहनों का आत्मीयता से स्वागत कर उन्हें सब प्रकार की सहायता पहुँचाने हेतु तुरत अग्रसर होना परमावश्यक है।

'राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ' ऐसे सेवाकार्य में सदा ही अग्रसर रहा है। पजाब, सिध, सीमाप्रात आदि प्रातों के निर्वासित बधुओं की सहायता करने में अपने सामर्थ्यानुरूप सघ हाथ बँटाता रहा है, यह सर्वश्रुत ही है। आज भी उपर्युक्त आवश्यकता का अनुभव करते हुए पूर्वी-बगाल के पीडित बाधवों की सहायतार्थ आवश्यक सामग्री व आर्थिक सहायता सग्रहित करने का कार्य राष्ट्रीय स्वयसवेक सघ ने उठाया है।

गत कुछ महीनों से चले हुए योजनाबद्ध आक्रमणों से सचेत होने के फलस्वरूप अब पाकिस्तान सरकार पर यत्किचित भी विश्वास न रहने के कारण वहाँ की लगभग डेढ करोड हिदू जनता भारत आने के लिए अधीर हो उठी है। सहस्रों आ चुके हैं व लक्षावधि सीमा पार करने के अवसर की खोज में हैं। अविरत रूप से आनेवाले इन लक्षावधि बधुओं की

सहायता व उनका पुनर्वास एक विराट कार्य है। यह सरकार का ही दायित्व है, ऐसा सोचकर निष्क्रिय बैठना देशवासियों के लिए कदापि योग्य नहीं होगा। अत इस राष्ट्रीय विपत्ति के समय जनसाधारण को अपना सामान्य कर्तव्य समझकर सपूर्ण शक्ति से देश की शाति और व्यवस्था को सुरक्षित रखते हुए सरकार के कार्यभार को हल्का करना चाहिए।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के स्वयसेवक जनता से सब प्रकार की सहायता सग्रह के कार्य में कटिबद्ध हो चुके हैं। समस्त भारतवासियों से मेरा सानुरोध निवेदन है कि वे सामाजिक आपत्ति की इस गभीर परिस्थिति में सहायता-कार्य में सलग्न इन स्वयसेवकों को मुक्तहस्त से आर्थिक सहाय्य एव वस्त्र, धान्य आदि आवश्यक सामग्री प्रदान कर अपना दायित्व पूर्ण करें। सग्रहित सामग्री एव द्रव्य पूर्वी-बगाल निर्वासित सहायता कार्य के हेतु योग्य स्थानों पर पहुँचाया जाएगा।

३ वीर सावरकर की मुक्ति तुरत हो

('हिंदुस्थान समाचार' के प्रतिनिधि को नागपुर में ६ जून १९५० को दिया गया वक्तव्य)

मैं अनुभव करता हूँ कि इस अस्वस्थता की अवस्था में स्वातत्र्य वीर श्री सावरकर की गिरफ्तारी अत्यत कष्टदायक है। प्रत्येक घटना पर विचार प्रकट करना मेरा स्वभाव नहीं है और साथ ही साथ मैं इस विषय में यह भी विचार कर रहा था, कि ज्योंहि सरकार को यह अनुभव होगा कि श्री सावरकर की गिरफ्तारी अकारण है, वह उन को छोड देगी।

स्वातत्र्य-सग्राम का श्री सावरकर जैसा अग्रणी नेता राष्ट्रीय सरकार के कारागार में सड रहा हे, यह ध्यान आते ही हृदय को अत्यत व्यथा होती है। ऐसा तथाकथित षड्यत्र ही काल्पनिक सिद्ध हो चुका है, जिसमें भाग लेने का आरोप श्री सावरकर पर था। मैं आशा करूँगा, कि सरकार उन्हें छोड देगी।

मैंने विदेशी पत्रों में भी ऐसी टिप्पणियाँ देखी हैं, जिनमें स्वतत्रता

युद्ध के श्री सावरकर जैसे अग्रसर नेता को बदी किए जाने पर आश्चर्य प्रकट किया गया है। ऐसे कृत्यों से सरकार की प्रतिष्ठा को आघात पहुँचता है।

卐 卐 卐

४ असम के भूकप राष्ट्रीय विपत्ति

(अक्तूबर १९५० मे असम के भूकप पीडितों की सहायता हेतु दिया गया वक्तव्य)

जिस दिन मैंने असम के भूकप तथा उसके फलस्वरूप विनाश का समाचार सुना, मेरी व्यक्तिगत रूप से वहाँ जाकर देखने तथा अपने देश के सीमात प्रातवासियों के दु ख में सहभागी होने की इच्छा थी। अत गत सप्ताह अपने मित्र तथा सहयोगी श्री वसत कृष्ण ओक के साथ मैं असम गया। हमने सबसे अधिक प्रभावित क्षेत्र को देखा, इस विपत्ति के शिकार हुए लोगों से मिले और सरकारी तथा गैर सरकारी सगठनों द्वारा चलने वाले सहायता कार्य का भी अध्ययन किया।

जीवन और सपत्ति की भयकर क्षति हुई है। यदि भूकप का केंद्र ब्रह्मपुत्र के उत्तर-पूर्व के कम बसे हुए पर्वतीय क्षेत्र में न होता तो यह हानि और अधिक हुई होती। भूमि का स्वरूप ही बिल्कुल बदल गया है। सैंकडों छोटे-छोटे गॉवो और फसल से भरे हुए खेतों का चिह्न भी शेष नहीं रहा। सबसे अधिक विनाश ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक सुहान्सिरी तथा दिहाग की बाढ से हुआ है। भूकप के द्वारा गिरी हुई चट्टानों से उनका मार्ग रुक गया और रुका हुआ पानी चारों ओर के क्षेत्र में भर गया, जिससे जीवन तथा सपत्ति की भारी हानि हुई।

ब्रह्मपुत्र के दक्षिण-पश्चिम में स्थित डिब्रूगढ क्षेत्र में तुलनात्मक कम क्षति हुई हैं। पर अधिकाश पक्के मकान या तो गिर गए हें या चटक गए है।'

सरकारी और गैर सरकारी सस्थाओं ने सहायता कार्य आरभ किया है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि सर्वप्रथम सगठित रूप से सहायता करने वाली राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ की असम शाखा थी। उसके द्वारा आरभ की गई 'असम भूकप पीडित सहायता समिति' भूकप पीडित

और बाढ पीडितों को अच्छी तरह सहायता पहुँचा रही है। संघ के स्वयंसेवकों की टोलियों ने प्राणों को संकट में डालकर भी गाँवों में सहायता पहुँचाने के लिए बाढग्रस्त ब्रह्मपुत्र को सर्वप्रथम पार किया। असम सरकार, मारवाडी सहायता समिति, काशी विश्वेश्वर नाथ सेवा समिति, सभी अपने देशवासियों के प्राण बचाने और सहायता पहुँचाने के इस उद्योग में पूरा सहयोग कर रही हैं।

समस्या की विशालता को देखते हुए जो कुछ भी हुआ है या हो रहा है, अत्यंत कम है। यह स्थानीय नहीं, अपितु एक राष्ट्रीय समस्या है। अतः स्थानीय सहायता समितियाँ तब तक कुछ अधिक नहीं कर सकतीं, जब तक कि देश के अन्य भागों में रहनेवाले भारतीयों द्वारा जन, धन और सामग्री द्वारा उनकी सहायता न की जाए। ऐसी आपदाएँ ही राष्ट्रीय एकता तथा लोगों के सेवा भाव की कसौटी होती हैं। मैं भारतवासियों से अभ्यर्थना करता हूँ कि वे चल रहे सहायता कार्य के निमित्त उदारतापूर्वक धन-वस्त्र आदि देकर असम की सहायता करें। सहयोग राशि 'असम भूकंप पीडित सहायता समिति,' डिब्रूगढ को सीधे भी भेज सकते हैं।

सरकार ने भी पीडितों की सहायता करना शुरू किया है, परंतु यह विपत्ति की तुलना में अत्यल्प है। मैं आशा करता हूँ कि सेना की सक्षम सेवाओं को प्रत्यक्ष कार्य में लगाते हुए सरकार शीघ्रता से और अधिक प्रभावी कदम उठाएगी। दलगत भाव से ऊपर उठकर सभी लोगों का यह कर्तव्य है कि वे अपने अत्यंत महत्त्वपूर्ण राज्यों में से एक के पुनर्निर्माण में सरकार का सभी प्रकार से सहयोग करें।

५ निर्वाचन और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

(सन् १९५२ में भारत में आयोजित प्रथम आम चुनाव के अवसर पर दिया गया वक्तव्य)

हम चुनाव-नाटक के दर्शक मात्र होंगे। लेकिन संघ के स्वयंसेवक व्यक्तिगत रूप से जिसे चाहे वोट देने के लिए स्वतंत्र हैं। आगामी साधारण निर्वाचन में संघ न तो हिंदू महासभा और न किसी अन्य दल का संगठन के रूप में समर्थन करेगा ओर न ही निर्वाचन में अपने उम्मीदवार खडे करेगा।

हमारे सारे प्रयत्न रचनात्मक धाराओं में ही प्रवाहित होंगे और जनता के आचरण का विकास कर उसमें निःस्वार्थ सेवा और सच्ची देशभक्ति की भावना भरते रहेंगे। हमारा उद्देश्य जनता को सगठित कर शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण करना है, क्योंकि गरीबी और निर्धनता से राष्ट्र को मुक्त करने का यही एकमेव मार्ग है।

६ गोवध-बदी की मॉंग को समर्थन

(नागपुर, १५ अक्तूबर १६५२ को सभी सस्थाओं और राजनैतिक पक्षों के प्रमुखों को निम्नलिखित पत्र भेजकर उन्हें गोवध बदी की मॉंग को समर्थन देने हेतु किया गया आह्वान)

यह तो आपको विदित ही है कि अपने राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने भारत के सपूर्ण गणतत्र में गोवध-बदी की मॉंग के पक्ष में सभी वयस्क नागरिकों के हस्ताक्षर कराने का बीडा उठाया है। यह बात हम सभी के मन को प्रिय है, इसीलिए हम इस पवित्र और पक्षातीत कार्य में सभी सस्थाओं और राजनैतिक पक्षों के सहयोग की याचना करते हैं, जिससे प्रभावशाली जनमत के द्वारा सरकार को इस दिशा में तत्काल ठोस कदम उठाने को बाध्य कर सकें।

वास्तव में विदेशी सत्ता की समाप्ति और अपना राज्य स्थापित होने के पश्चात् यह कदम तत्काल उठाना चाहिए था। लोग स्वातत्र्य के सच्चे गौरव की अनुभूति तभी कर सकेंगे, जब युगों से चले राष्ट्रीय सम्मान के बिदुओं व भावनाओं का लोगों के हृदयों में दीप्तिमान स्वरूप में पुन प्रतिष्ठापन और अर्चन हो सके।

यह तो सर्वमान्य बात है कि गोमाता, जिसमें गोवश के सभी प्राणी समाविष्ट हैं, के प्रति हम सभी के मन में अत्यत आदर और असीम सम्मान की भावना है, चाहे हम किसी भी धार्मिक मत के अनुयायी या राजनैतिक विचार के माननेवाले हों। अत यह अत्यावश्यक है कि समूचे देश में गोवध पर सपूर्ण रीति से बदी लगाई जाए और ऐसा कानून बनाया

जाए, जिससे कोई भी व्यक्ति, किसी भी बहाने, किसी भी तरह का गोवध करे तो उसे कठोर दड दिया जा सके।

गोवध रूपी इस राष्ट्रीय अन्याय का अत करने के लिए शासन को बाध्य करने और साथ ही इस कार्य में शासकों के हाथ सबल बनाने के लिए हमने यह कार्यक्रम अपनाया है, जिससे शासन पर इस विषय में वैधानिक, परतु शक्तिशाली प्रभाव पड सके और हस्ताक्षरों के रूप में जनमत की जागृति और अभिव्यक्ति प्रकट हो सके।

आपको जनता का स्नेह और सम्मान प्राप्त है और आपने जनहित के सत्कार्यो में सदैव जनता का सुयोग्य जागरण, मार्गदर्शन और नेतृत्व किया है। इसलिए मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप कृपया सघ द्वारा अगीकृत इस पवित्र और पक्षातीत कार्य में अवश्य सहयोग दें और इसे पूर्णतया सफल करने के लिए आपके बहुमूल्य वक्तव्यों और लेखों द्वारा तथा अन्य सभी ढगों से इस कार्य का प्रचार हो, जिससे सर्वसाधारण जनता में समुचित भावनाओं की जागृति हो ओर उसमें ऐसा उत्साह जागृत हो, ताकि वह तन-मन-धन से इस कार्य में सहयोग देकर इसे सफल बना सके।

७ गोवध-बदी आदोलन को आर्थिक सहायता दे

(नागपुर, १५ अक्तूबर १९५२
को जनता से किया गया निवेदन)

भारतीय परपरा और इस राष्ट्र के अतिश्रेष्ठ सम्मान बिदु 'गोमाता' का आज भी भारत में वध हो रहा है। इस गोहत्या को सपूर्ण देश में बद करवाने के लिए भारत भर में विधेयक हो, यह जनता की स्वाभाविक इच्छा है। जनता की पवित्र इच्छा का स्पष्ट और प्रभावशाली पता भारत सरकार को लगे। इसलिए राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने भारत भर में हस्ताक्षर-सग्रह, प्रदर्शन और सभाएँ करने का निश्चय किया है।

इस कार्य के लिए राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के स्वयसेवक तन-मन-धन से प्रचार कार्य करेंगे ही, किंतु सदा सघ से प्रेम करनेवाली भारत की गोभक्त जनता को भी खुले दिल से इस कार्य में सहायता करनी होगी।

यद्यपि सघ के लाखों स्वयसेवक नि स्वार्थ भाव से इस कार्य में जुट चुके हैं, फिर भी इस आदोलन के लिए विशाल धनराशि की आवश्यकता होगी। जनता ने सदैव सघ के सगठनात्मक ओर रचनात्मक कार्यो में खुले दिल से सहायता की है। इसी प्रेम के भरोसे मैं जनता से प्रार्थना करता हूँ कि वह अपनी शक्ति के अनुसार अधिकतम धन की सहायता इस पवित्र कार्य में करे।

सघ की ओर से इस कार्य में धन की सहायता लेने के लिए आपके परिचित ओर अधिकृत कार्यकर्ता आपके पास भी पहुँचेंगे। किंतु जिन्हें सभव हो वे कृपया शीघ्रातिशीघ्र राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ कार्यालय, डा हेडगेवार भवन, नागपुर– इस पते पर अपनी उदार सहायता की रकम भेजें।

आशा है भारत की जनता इस पवित्र, राष्ट्रीय और पक्षातीत कार्य में अपनी परपरागत उदारता से सहायता कर सघ को उपकृत करेगी।

८ तेजस्वी देशभक्त की बलि न चढे

(श्री रामचद्र शर्मा 'वीर' के विषय में चिता प्रकट करने के लिए दिया गया वक्तव्य, अप्रेल १९५३)

प रामचद्र शर्मा 'वीर' का गत ५५ दिनों से जो आमरण अनशन चल रहा है, उसके फलस्वरूप उनकी हालत चिताजनक बनी हुई है। कल ही तार द्वारा मुझे उनके मरणासन्न होने की सूचना मिली। यह अत्यत दु खदायी है कि ऐसी स्थिति होते हुए भी बिहार व केंद्रीय सरकार ने श्री 'वीर' की जीवन रक्षा हेतु अभी तक कोई भी कदम नहीं उठाया। एक पवित्र और तेजस्वी देशभक्त की चल रही इस प्रकार की उपेक्षा निदनीय है।

वस्तुत श्री 'वीर' ने गोहत्या-विरोध विधेयक हेतु दूसरी बार अनशन किया है। इस प्रकार का विधेयक निर्माण तत्त्वत बिहार व केंद्र सरकार को मान्य है। उसकी उपकारक आवश्यकता भी उन्होंने मानी है और वैसा आश्वासन भी जनता को दिया है। फिर अक्षम्य विलब कर इस श्रेष्ठ पुरुष के जीवन को नष्ट कर पाप के भागी बनने में कौन सा औचित्य है? ऐसा लग रहा है कि सरकार श्री 'वीर' के दिवगत होने की राह देख

रही है और उस दुर्भाग्यपूर्ण दुर्घटना के बाद ही 'गोहत्या-निरोध विषयक विचार' में वह परिवर्तन करेगी। इस कारण सर्वसाधारण जनता में सरकार के प्रति रोष भावना बढ रही है।

मेरी बिहार और केंद्रीय शासन से आग्रहपूर्वक प्रार्थना है कि अपनी अनुचित विलब की नीति त्याग कर श्री 'वीर' को आश्वस्त करते हुए उनके प्राणों की तुरत रक्षा की जाए तथा पूर्ण गोहत्या-निषेध का विधेयक सारे देश में त्वरित लागू किया जाए।

मैने तार भेजकर श्री 'वीर' को मरणव्रत समाप्त करने की प्रार्थना की है। मेरा दृढ विश्वास है कि शासन भी तुरत उचित कार्यवाही करेगा।

ॐ ॐ ॐ

६ गोवा मे पुलिस कार्रवाई की जाए

(मुबई, २० अगस्त १९५५ को गोवा की मुक्ति के सबध में दिया गया वक्तव्य)

गोवा में पुलिस कार्रवाई करने और गोवा को मुक्त कराने का इससे ज्यादा अच्छा अवसर कोई नहीं आएगा। इससे हमारी अतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा में वृद्धि होगी और आसपास के जो राष्ट्र सदा हमें धमकाते रहते हैं, उन्हें भी पाठ मिलेगा।

भारत सरकार ने गोवा-मुक्ति आदोलन का साथ न देने की घोषणा कर, मुक्ति-आदोलन की पीठ में छुरा मारा है। भारत सरकार को चाहिए कि भारतीय नागरिकों पर हुई इस अमानुषिक गोलीबारी का प्रत्युत्तर दे और मातृभूमि का जो भाग अभी तक विदेशियों की दासता में जकडा हुआ है, उसे अविलब मुक्त करने के उपाय करे। झूठी अतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा का विचार हृदय से निकालकर कदम आगे बढाना चाहिए। आज से अच्छा मौका फिर नहीं मिलेगा। यदि इस समय उचित कदम नहीं उठाया गया, तो वर्तमान शासकों के ध्येय, उनकी देशभक्ति और योग्यता के बारे में जनता का मन सशक हो जाएगा।

मुक्ति-आदोलन में वीरगति को प्राप्त हुए सत्याग्रहियों ने जिस उद्देश्य से अपने प्राणों की आहुति दी है, उसकी पूर्ति ही उन्हें सबसे बडी श्रद्धाजलि होगी। मातृभूमि के जरा से भी अश पर विदेशियों की सत्ता

भारतीयों को मान्य नहीं है।

मुंबई में पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर जो गोली चलाई, वह वीरता गोवा की सीमा पर दिखाई जाती, तो आठ दिनों में पुर्तगाली गोवा से भाग खड़े होते। घर के लोगों पर ही गोली चलाने में कोई वीरता नहीं है। प्रदर्शनकारियों को चाहिए कि वे हड़ताल और प्रदर्शन के समय किसी भी अवस्था में शांति भंग न होने दें।

१० केवल कानूनी उपायों का अवलंबन हो

(२३ जुलाई १९५६ को संयुक्त महाराष्ट्र आंदोलन को कुचलने के लिए मुंबई सरकार द्वारा अपनाए गए गर्हित उपायों के विरोध में नागपुर से दिया गया वक्तव्य)

गत सप्ताह मैं मुंबई में था। सभी लोगों के मस्तिष्क में एक ही बात बुरी तरह से छाई हुई है, अर्थात् संयुक्त महाराष्ट्र के नाम पर चल रहा सत्याग्रह। इस संबंध में बातचीत के बीच मुझे उस उपाय से भी अभिज्ञ कराया गया, जिसे सरकार ने आंदोलन को कुचलने के लिए अपनाया है। उपाय इस प्रकार है— सत्याग्रहियों को न तो जेल में ले जाया जाता है और न हवालात में बंद किया जाता है। उनको किसी दूर के निर्जन स्थान पर ले जाकर छोड़ दिया जाता है। वहाँ से वे भटकते-भटकते घर पहुँच पाते हैं। जैसे ही उनको इस प्रकार छोड़ा जाता है और पुलिस विदा होती है, पूर्व नियोजित लठैत गुंडे उन असूचित तथा नि:शस्त्र लोगों पर टूट पड़ते हैं और उन्हें बुरी तरह पीटने के साथ-साथ अपमानित भी करते हैं। यहाँ तक कि स्त्रियों को भी नहीं बख्शा जाता। मुझे यह भी बताया गया है कि यह गतिविधि कोई एकाध दिन न होकर अक्सर ही घटित होती है। इन सब बातों से प्रमाणित होता है कि गुंडों को गुंडागर्दी के लिए विशेष रूप से नियुक्त किया जाता है। अन्यथा यह समझ में आने लायक बात नहीं है कि उनको यह कैसे पता चलता है कि सत्याग्रही आज कहाँ और कब छोड़े जाएँगे। उनकी इस गुंडागर्दी को रोकने के लिए भी कोई उपाय नहीं किए गए हैं। स्थिति आज यह है कि सरकार और गुंडे एक ओर हैं तथा शांत सत्याग्रही दूसरी ओर।

यदि यह समाचार सत्य है तो मैं उसपर अविश्वास करने का कोई कारण अनुभव नहीं करता। यह इतना भीषण है कि शांति और व्यवस्था के प्रत्येक प्रेमी तथा सरकार को इसपर विचार करना चाहिए और इस प्रकार कानून तथा व्यवस्था का जानबूझकर उल्लंघन करनेवाले तत्त्वों का शांत नागरिकों के विरुद्ध प्रयोग किए जाने की वृत्ति को समाप्त करने का उपाय योजना चाहिए। क्योंकि इसके कारण उनकी अराजक वृत्तियों को प्रोत्साहन प्राप्त होता है तथा कानून के प्रति अनास्था उत्पन्न होती है, जिसके कारण सभ्य सरकार का आधार ही हिल जाता है।

राष्ट्रीय, सामाजिक, तथा सांस्कृतिक एकता का पक्षपाती होने के कारण मैं भाषा-वार तथा प्रांत-वार विभाजन का सदैव विरोधी रहा हूँ, क्योंकि उनके कारण विद्वेष की भावना का निर्माण होता है। जहाँ तक विभिन्न स्थानों पर चल रहे सत्याग्रह का संबंध है, उससे मेरा कोई सरोकार नहीं। यदि सरकार ने इन कार्यवाहियों को रोकने के लिए समुचित कानूनी तरीके अपनाए होते, तो मुझे कुछ नहीं कहना था। किंतु सरकार के द्वारा प्रोत्साहित यह गुंडागर्दी असहनीय है। मैं अनुभव करता हूँ कि यदि इसका मैं तीव्र विरोध नहीं करता, तो मैं अपने कर्तव्य से च्युत होता हूँ।

११ हिमालय से कन्याकुमारी तक भारत एक

(फरवरी १९५७ में दिया गया वक्तव्य)

कश्मीर के प्रश्न पर भारत सरकार को दृढ़ता से काम लेना चाहिए। सुरक्षा परिषद् ने कश्मीर में जनमत-संबंधी जो प्रस्ताव पारित किया है, वह असामयिक है। कश्मीर का भारत में विलय तो बहुत पहले ही हो गया है। वास्तव में तो अब इस प्रश्न के उठाने की आवश्यकता ही नहीं है। यह माँग निष्पक्ष एवं न्याययुक्त है कि सुरक्षा परिषद् सदैव के लिए यह निर्णय दे दे कि कश्मीर की समस्या का अंतिम रूप से समाधान हो गया है और भारत के साथ कश्मीर का विलय अंतिम एवं अपरिवर्तनीय है। साथ ही तथाकथित आजाद-कश्मीर से पाकिस्तानी

सेना हटा ली जाए और उस पर वैधानिक रूप से भारत का अधिकार हो।

यदि भारत सरकार ने इस प्रकार का निर्णय किया तो सारा देश उसके साथ होगा। इस प्रश्न पर किसी का मतभेद नहीं है। हमें यह जानकर गर्व अनुभव हो रहा है कि अततोगत्वा हमारी सरकार ने अपनी कमजोर नीति का परित्याग कर सार्वभौमिक राष्ट्र के समान दृढता की नीति अगीकार की है। काश! यह दृढता हमारी सरकार द्वारा उसी समय अपनाली गई होती, जब सन् १९४८ में हमारी सेनाएँ आक्राताओं को सफलतापूर्वक कश्मीर की भूमि से खदेड रही थी। यह बात पहले ही अनुभव कर ली गई होती कि राष्ट्र सघ में न्याय की आशा लेकर जाना व्यर्थ है। सरकार के कर्णधारों को भी अतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के मोह से पहले ही छुटकारा मिल गया होता और उन्होने 'विश्वशाति के प्रणेता' बनने के स्थान पर राष्ट्रीय चरित्र, राष्ट्रीय प्रतिष्ठा, राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रीय सुदृढता निर्माण करने का प्रयास किया होता।

कुछ भी हो, अपनी गलती सुधारने में सरकार ने समझ से काम किया है। मुझे आशा है कि सुरक्षा परिषद् के रुख से भारत सरकार की ऑखें खुल जाएँगी और अतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा को बनाने के लिए वह एक निश्चित तथा सुरक्षित नीति अपनाएगी।

इलाहाबाद में हुए प्रधानमत्री नेहरू के भाषण से कुछ गलतफहमी पैदा हो गई है। उन्होंने इलाहाबाद में कहा था कि कश्मीर का प्रश्न कश्मीरियों का अपना है, उसमें भारतीयों को दखल देने का कोई अधिकार नहीं है। यह भाषण मत्रिमडल के निर्णय की भावना के विपरीत है और इसके कारण यह सदेह उत्पन्न हो सकता है कि कश्मीर और भारत दोनों अलग है। इस गलती के कारण जनता का उत्साह भग होगा तथा भारतविरोधी शक्तियो को इस तर्क के आधार पर बल प्राप्त होगा। हमारे प्रधानमत्री को चाहिए कि वे ऐसा वक्तव्य दे कि कश्मीर से कन्याकुमारी तक भारत एक और अविभाज्य है तथा ऐसी भ्रात बातें करना छोड दें, जिसके कारण कश्मीर के प्रश्न को क्षति पहुँचे तथा राष्ट्रीय एकता को एक प्रकार का धक्का लगे।

ॐ ॐ ॐ

१२ बिहार, बगाल व असम के बाढ पीडितो की सहायता करे

(नागपुर, सितबर १९५७ में दिया गया वक्तव्य)

बाढ के कारण बिहार, बगाल व असम में उत्पन्न हुई भयावह स्थिति की प्रत्येक को जानकारी है। लाखों लोग बेघर हो गए हैं। गॉव जलमग्न हो गए हैं। फसलें नष्ट हो गई हैं। कल्पनातीत कष्टकारक सैलाब का दृश्य उपस्थित हुआ है। पीडितों की सहायता करना अपना दायित्व है। क्षतिपूर्ति तो अपने साधनों की पहुँच से बाहर है, परतु हर देशवासी को यथाशक्ति सहयोग करना ही चाहिए।

श्री रामकृष्ण मिशन और भारत सेवाश्रम सघ ने भी पीडितों की सहायता करने का निश्चय किया है। हमें उनके प्रयत्नों में सर्वप्रकारेण सहयोग करना चाहिए। बिहार में राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने एक समिति का गठन किया है, जिसने सहयोग के लिए सभी से प्रार्थना की है। पीडित मानव-जाति की सेवा हेतु इस समिति का सहकार करने के लिए, मैं अपने सभी देशवासियों से विनम्र निवेदन करता हूँ।

सरकार ने भी बाढपीडितों की पीडा के शमन के लिए बहुत कुछ करने का सकल्प किया है। जनता के सहयोग से ऐसा सेवाकार्य उत्तम रीति से सपन्न होता है। अत मैं सरकार से अनुरोध करना चाहूँगा कि वह राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ तथा अन्य सगठनों के कार्यकर्ताओं का (सेवा ही जिनका आदर्श है) सहायता कार्यों को प्रभावी बनाने में सहयोग प्राप्त करें।

सहयोग राशि आदि भेजने का पता है—

पडित भोलानाथ झा,
विजय निकेतन, पटना –३

इसी कडी में क्षेत्र सघचालक मा लाला हसराज जी गुप्त ने दिल्ली, पजाब, पैप्सू तथा हिमाचल प्रदेश की राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ की शाखाओं को १९ से २६ सितबर तक 'बिहार, बगाल, असम बाढ सहायता सप्ताह' मनाने का निर्देश दिया है। इस कालावधि में राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के गणवेशधारी स्वयसेवक घर-घर जाकर, बाढपीडितों के लिए खाद्यान्न कपडे और धन एकत्र करेंगे।

१२. नागा क्षेत्र समझौता एक खतरा

(वक्तव्य, अक्तूबर १९५७)

नागा क्षेत्र समझौते से समूचे राष्ट्र में तहलका मचना अवश्यभावी ही था। परराष्ट्र मत्रालय द्वारा प्रधानमत्री एव नागा प्रतिनिधियों द्वारा हुई चर्चा पर जो वक्तव्य प्रकाशित किया गया है, उसमें कई महत्त्वपूर्ण प्रश्न स्पष्ट नही हो पाए हैं।

प्रस्तावित क्षेत्र राष्ट्रपति के शासन में सीधा रखने की घोषणा का यही अर्थ निकलता है कि वह भी सविधान के अनुसार अन्य प्रदेशों की भाँति भारत का ही एक अग होगा, परतु इस प्रदेश का प्रशासन राष्ट्रपति की ओर से असम के राज्यपाल देखेंगे तथा उसका सबध गृह मत्रालय से होने की बजाय परराष्ट्र मत्रालय से होगा।

निस्सदेह यह व्यवस्था इस बात की द्योतक है कि भारत सरकार ने श्री फिजो और नागा नेशनल काउसिल का यह दावा मान्य कर लिया है कि नागा पहाडी का क्षेत्र इस देश का अग नहीं है। इस असगत स्थिति का स्पष्टीकरण किया जाना चाहिए। यह भी स्पष्ट नहीं हो पाया है कि क्या नागा प्रतिनिधिमडल के सदस्यों तथा नेता को वास्तविक रूप में उस क्षेत्र की जनता का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार था? क्योंकि सपूर्ण नागा पहाडी क्षेत्र का आश्वासन देने के बजाय उस नेता ने केवल यही आश्वासन दिया है कि उसका प्रतिनिधिमडल जिनका प्रतिनिधित्व करता है तथा वह स्वय अपनी ओर से पूर्णत प्रयत्न करेंगे। उनके इस आश्वासन में समझौता करनेवाले व्यक्ति पर दल में निश्चितता का अभाव स्पष्ट झलकता है। (वह निश्चितता, जो उसे राजनीतिक वार्ताओं में भाग लेने का अधिकार प्रदान करती है। वार्ता करनेवाला दल ऐसे मामलों में पूर्णतया सक्षम होना चाहिए।)

नागाओं का यह नौ-सदस्यीय प्रतिनिधिमडल इस पूर्व-आवश्यकता को पूर्ण करता प्रतीत नहीं होता। अत उनके अधिकार का औचित्य भी स्पष्ट होना चाहिए, अन्यथा यह ठोस रूप में वार्ता न होकर एक छाया मात्र ही सिद्ध होने का खतरा है। एक अन्य प्रश्न भी है, जिसपर गभीर विचार किया जाना चाहिए। प्रधानमत्री ने असतुष्ट व अराष्ट्रीय नागा नेताओं की प्रमुख माँगें बहुत हद तक मान ली हैं। इस प्रतिनिधिमडल के अधिकार

तथा समझौते की वैधता को उनकी ओर से चुनौती भी दी जा सकती हैं। वे इस समझौते का दुरुपयोग सौदेबाजी के रूप में भी कर सकते हैं और दुर्भाग्य तो यह है कि प्रधानमत्री ने इतनी अधिक स्वीकृति दे दी है कि वार्ता में अब अगला कोई भी कदम स्वतत्र सार्वभौम नागा राज्य को स्वीकार करना ही होगा। कथित राष्ट्रवादी मुसलमानों की मॉगों पर दी गई छूट, छूट के परिणाम का इतिहास, जो अततोगत्वा मुस्लिम लीग द्वारा देश का विभाजन करवाकर रहा, वर्तमान प्रश्नों पर हमें चेतावनी स्वरूप होना चाहिए।

शेष असम के भविष्य का प्रश्न भी विचारणीय है, क्योंकि पूर्वी पाकिस्तान से मुस्लिम वहॉ आते जा रहे हैं। नागा क्षेत्र के अलग होने से उसे हानि पहुँचने का भी डर है। हमारी राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए इस भॉति उत्पन्न होनेवाले खतरे पर ध्यान ही नहीं दिया गया। यह निर्णय पजाब के अकाली तथा तमिलनाडु के द्रविड कजगम (डी के) जैसे अराष्ट्रीय पृथकतावादी आदोलन के तत्वों को भी प्रोत्साहित ही करेगा।

१४ शिवाजी के राष्ट्रीय नेतृत्व को माना

(नवबर १९५७ को प नेहरू द्वारा शिवाजी की प्रतिमा का अनावरण किए जाने में सहयोग करने हेतु की गई अपील)

श्री छत्रपति शिवाजी महाराज की प्रतिमा के अनावरण के आगामी अवसर पर प्रतापगढ में प्रदर्शन करने के सयुक्त महाराष्ट्र समिति के प्रस्ताव को पढकर मुझे आश्चर्य ही नहीं, अपितु पीडा हुई। यह निर्णय पूर्णत समिति की प्रकृति के अनुरूप है, क्योंकि यह समिति सयुक्त महाराष्ट्र के लोकलुभावन नारे पर आश्रित, अतर्विरोधों से युक्त, काग्रेस के विरोध में अनेक दलों का गठबधन है। अत इसकी कोई मौलिक राजनीतिक विचारधारा नहीं हो सकती तथा उसके निर्णयों से किसी का भी भला होगा, कहा नहीं जा सकता। अत इस समिति को यह अनुभूति नहीं हुई कि प्रदर्शन करने के निर्णय से वह शिवाजी का अपमान कर रही है साथ ही सपूर्ण भारत के राष्ट्रीय वीर पुरुष के सम्मान को क्षति पहुँचा रही है।

'महाराष्ट्र के साथ अन्याय हो रहा है' तथा 'महाराष्ट्र का अपमान हो रहा है' इस रुदन में छत्रपति शिवाजी के वारे में असत्य एव द्वेषपूर्ण बयान देने का यही अर्थ निकलेगा कि वे (शिवाजी) केवल महाराष्ट्र के ही महापुरुष थे। वस्तुत मुझे स्मरण नहीं कि मैंने कभी सुना अथवा अनुभव किया हो कि जिन घटक दलों को मिलाकर समिति बनी है, उनमें से कम्युनिस्ट और प्रजा सोशलिस्ट पार्टी ने छत्रपति शिवाजी के बारे में, जिन्होंने हिंदूपदपादशाही की स्थापना की प्रतिज्ञा ली तथा उसकी पूर्ति के लिए आजीवन जूझते रहे, कभी भी सम्मान के भाव प्रकट किए हों। समिति के कुछ अन्य घटकों ने इन प्रदर्शनों के बारे में स्पष्ट अरुचि दर्शाई हे। इसलिए मैं नहीं सोचता कि यह कहना गलत होगा कि उन लोगों, जो छत्रपति शिवाजी के बारे में सम्मान का दिखावा मात्र करते हैं, के द्वारा अपने दलगत हितों की पूर्ति हेतु काग्रेस का विरोध करने के लिए शिवाजी के नाम का उपयोग करने का यह एक प्रयत्न है।

इसके साथ ही प नेहरू के हाथों इस अनावरण समारोह को सपन्न कराने के पीछे, उस काग्रेस को जिसकी जडें काग्रेस केंद्रीय नेतृत्व (हाई कमाड) की महाराष्ट्रविरोधी भावना के कारण हिल गई हैं, पुन स्थापित करने का राजनैतिक उद्देश्य भी है। इसको अनदेखा नहीं किया जा सकता। यहाँ तक कि प नेहरू के मन में भी शिवाजी के प्रति कोई सम्मान का भाव नहीं है। उन्होंने उनके बारे में कोई कम गलत एव द्वेषयुक्त वक्तव्य नहीं दिए हैं। श्री मोरारजी देसाई द्वारा की गई सम्मानहीन आलोचना की निदा करने तथा अत करण से खेद व्यक्त करने के स्थान पर उनका बचाव करने के तथ्य से इस बात की पुष्टि होती है कि प नेहरू के मन में छत्रपति शिवाजी के बारे में घोर अनादर का भाव हे तथा श्री मोरारजी देसाई को प्रसन्न करने की तुलना में शिवाजी के बारे में सम्मान के भाव प्रकट करना उनके लिए कम महत्त्व का है।

छत्रपति शिवाजी के बारे में सम्मान का भाव रखने के स्थान पर दोनों पक्ष अपनी रोटी सेंक रहे हैं। मेरा निश्चित मत है कि इन सभावित प्रदर्शनों में भागीदारी से बचते हुए इस समारोह को शानदार ढग से सपन्न होने देना चाहिए। इस कार्यक्रम के द्वारा एक महत्त्वपूर्ण तथ्य सिद्ध होगा कि छत्रपति शिवाजी का ऐसा उदात्त चरित्र एव महान व्यक्तित्व था, जिसके कारण प नेहरू, जिनको अभी तक शिवाजी महाराज को असम्मानित करने में प्रसन्नता की अनुभूति होती थी, को उनकी प्रतिमा का अनावरण

करने तथा उनके पवित्र जीवन को श्रद्धा सुमन अर्पित करने के लिए वाध्य होना पडा। जैसे प नेहरू, जो इस प्रशासनिक ढाँचे के मुख्य स्रोत हैं, ने चाहे देरी से क्यों न हों, इस राष्ट्रीय वीरपुरुष को सपूर्ण भारत के लिए असदिग्ध रूप से आदर्श स्वीकार कर लिया है। यह गलतफहमी जो पहले हो गई थी तथा आज भी जारी है कि शिवाजी महाराज एक प्रातीय व्यक्तित्व हैं, दूर हो जाएगी तथा सपूर्ण विश्व इस समारोह के माध्यम से उन्हें समृद्ध नवभारत के देवदूत के नाते ठीक रूप से जानने लगेगा।

ऐसे अनपेक्षित व अपूर्व अवसर का विरोध छत्रपति शिवाजी के बारे में असम्मान व अविश्वास का प्रकटीकरण ही होगा। इसलिए मैं सभी देशवासियों से और विशेष रूप से महाराष्ट्र के भाइयों और माता-बहनों से आग्रहपूर्वक निवेदन करता हूँ कि वे अपने विवेक को जागृत रखें। स्वय को किसी भी उग्र दुष्प्रचार का शिकार न होने दें तथा इस समारोह की सफलता के लिए ऐसा हार्दिक सहयोग दें ताकि इसकी एक अमिट छाप लोगों के हृदयों पर सदा-सर्वदा के लिए पड सके। श्री प्रभु इन सभी का पथप्रदर्शन करें।

१५ अब्राहम लिकन से सीखें

(१२ फरवरी १९५८ को मुजफ्फरपुर, विहार में अव्राहम लिकन को श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए दिया गया वक्तव्य)

आज अमरीका के लोग मानव-जाति को अगाध प्रेम करने वालों में से एक श्री अव्राहम लिकन का श्रद्धापूर्वक एव कृतज्ञता से स्मरण करेंगे। वे मात्र अमरीका के महापुरुष नहीं हैं। सपूर्ण मानव-जाति के बारे में व्यापक सहानुभूति तथा गरीव, अज्ञ व पददलितों के हितरक्षण के लिए प्रकटित साहस के कारण सारे जगत् में उनकी ख्याति है। उनका पावन स्मरण कर हम उन्हें अपने श्रद्धासुमन अर्पित करें।

काग्रेस के वृद्ध नेता श्री सी आर राजगोपालाचारी ने एक सदर्भ में अमरीका के इतिहास का उल्लेख किया है। अग्रेजों की साम्राज्यशाही के चगुल से मुक्ति के लिए अमरीका के लोगों द्वारा अपनाया गया सघर्ष का

मार्ग, अंग्रेजी को बनाए रखने तथा हिंदी को शासन की भाषा बनाने के विरोध में दक्षिण भारत के अपने बधुओं द्वारा चलाए जा रहे आदोलन में 'मार्गदर्शक' हो सकता है, ऐसा उन्होंने कहा है। यह आश्चर्यजनक है कि दोनों घटनाक्रमों के अतर एव परिस्थिति भिन्नता को अनदेखा किया गया है। (सभवत जान-बूझकर) झूठे घटना-साम्य का आभास निर्माण कर अत्यल्प निष्कर्षों को निकालने के अनुभवसिद्ध कला-कौशल्य के कारण ही ऐसा किया गया होगा।

अमरीका के इतिहास की महान घटना 'गृहयुद्ध', जिसके कारण अब्राहम लिकन प्रकाश में आए तथा उन्हें अनश्वर कीर्ति प्राप्त हुई, को सही सदर्भ में देखा जाना चाहिए। सशस्त्र सघर्ष के माध्यम से वहाँ के दक्षिणी राज्यों की अलग होने की धमकी को अदम्य साहस के द्वारा सफलतापूर्वक विफल करते हुए अमरीका की अखडता को बनाए रखा गया। इस महत्कार्य में लिकन को आत्माहुति देनी पडी, परतु वे अमर हो गए। यदि सम्माननीय राजाजी को इस घटना का स्मरण है, तो उन्हें सभी देशप्रेमियों को आह्वान करना चाहिए कि वे एकजुट होकर देश को पुन विभाजित करने हेतु भारत की सपूर्णता को विभक्त करनेवाली सभी प्रवृत्तियों और सकल्पनाओं को समूल नष्ट कर दें।

केवल स्वय को ही ज्ञात कारणों से यदि राजाजी इस प्रेरणास्पद उदाहरण की अनदेखी करना चाहते हों, तो जिनके हाथ में शासन के सूत्र हैं तथा जो देश के इष्ट-अनिष्ट, विपेशत अनिष्ट के लिए पूर्णतया उत्तरदायी हैं, उनको इस भूमिका के बारे में सावधान रहते हुए, देश व समाज की अखडता को अक्षुण्ण रखने के लिए यदि गृहयुद्ध भी झेलना पडे, तब भी सभी सभव उपाय करने चाहिए।

एक सदेहास्पद वृत्त के कारण अनेक लोग व्याकुल हुए हैं। प्रधानमत्री प नेहरू भी अंग्रेजी के पक्ष में हैं तथा हिंदी के प्रति उनका प्रेम नगण्य है। वृत्त के अनुसार राजाजी ने ऐसा कहा है 'विवेकी पुरुष' होने के कारण उनकी अपेक्षानुसार वे न्याय करेंगे तथा 'उनकी' (द्रविड कपगम तथा द्रविड मुनेत्र कपगम द्वारा रखी गई) माँगों को स्वीकार करेंगे, जब वे (प नेहरू) साइस काग्रेस (विज्ञान महासभा) के लिए चेन्नै गए तो उनका काले झडों से स्वागत किया गया। वहाँ पर उनका तथा राजाजी का एकात में गोपनीय विचार-विमर्श हुआ तथा इस बैठक के तुरत पश्चात् 'राजाजी'

के बाहर आने से ऐसा लगता है कि अंग्रेजी भाषा को लोगों पर लादने व राष्ट्रभाषाओं में से एक (हिंदी) को शासन की भाषा होने से वंचित करने की धूर्त योजना को प्रधानमंत्री का भी समर्थन, प्रोत्साहन व सहयोग प्राप्त है। दोनों की बैठक के पश्चात् दिया गया राजाजी का वक्तव्य संदेहास्पद वृत्त की संभावनाओं को अत्यधिक बढ़ा देता है। यदि इसमें कोई सच्चाई है, तो यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है, क्योंकि जिनपर राष्ट्रीय अखंडता व आत्मसम्मान बनाए रखने का दायित्व प्रमुख रूप से है, वे ही, चाहे असावधानी के कारण ही क्यों न हो इनपर आघात कर रहे हैं। अब्राहम लिंकन के उत्कृष्ट उदाहरण का हमारे आधारस्तंभ देशवासियों पर कोई प्रभाव नहीं होगा और ऐसा लगेगा कि अंग्रेज की यह दर्पयुक्त उक्ति कि उसके जाने के बाद इस देश के लोग एक-दूसरे पर आघात करेंगे, मुख्यतः सत्य में परिणत होती नजर आ रही है।

हम आशा रखें कि सद्भाव बना रहेगा। हमारे पूर्व साम्राज्यवादी शासकों के भाषा-प्रेम से पीछा छुड़ा लिया जाएगा तथा मातृभूमि व समाज की एकात्मता के प्रति प्रचंड प्रेम इन सारी मानसिक विकृतियों को पराजित करने में यशस्वी होगा ओर अपने चिर पुरातन अमर राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के लिए सभी का एकता से कार्य करने के लिए पथ प्रदर्शित करेगा।

प्रभु करे, लिंकन की स्मृति उन लोगों, जो आज इस देश के नेता होने का दावा करते हैं, को सच्ची भावना एवं साहस की प्रेरणा दे तथा मनसा, वाचा, काया सही दिशा में कार्य करने का उनका मार्ग प्रशस्त करे।

ॐ ॐ ॐ

१६ हिंदू महासभा का असमवायी दृष्टिकोण

(४ अप्रैल १९५८ से अंबाला, हरियाणा में होनेवाले भारतीय जनसंघ के अधिवेशन में स्वागत समिति का सभापतित्त्व स्वीकारने पर जब हिंदू महासभा के पुराने कार्यकर्ता को महासभा ने निष्कासित कर दिया, तब दिया गया वक्तव्य)

आदरणीय कैप्टन केशवचंद्र जी को हिंदू महासभा से निष्कासित करना लोगों की एकता को छिन्न-विछिन्न करनेवाले रोग राजनीतिक

निषेधता एव राजनीतिक अस्पृश्यता का एक और प्रसग है। जैसा मुझे विदित है, यह एक परिपाटी है कि जब कभी भी किसी सगठन के सदस्य सम्मेलन में एकत्र आते हैं, तब सबधित स्थान एव प्रात के सम्मानीय व्यक्ति स्वागत समिति के सदस्य बनकर, आगतुक प्रतिनिधियों का स्वागत करते हैं तथा उनके आवास व अन्य आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था करते हुए, वे शात वातावरण में विचारों का आदान-प्रदान कर सकें, इस दृष्टि से अच्छे यजमान होते हैं। किंतु वे उस सगठन के सदस्य नहीं माने जाते, जिसके प्रतिनिधियों का वे स्वागत करते हैं। उसके उद्देश्य व कार्यों से भी उनका सहमत होना आवश्यक नहीं है। यहाँ तक कि उनके विचार भिन्न एव विरोधी भी हो सकते हैं। स्वागत समिति में उनका सम्मिलित होना सदाचार एव सामान्य शिष्टाचार का प्रतीक मात्र है।

मैं मानता हूँ कि यह एक बहुत स्वस्थ परपरा है। इससे लोग मिलकर रहते हैं तथा एक स्वस्थ वातावरण बनता है, जहाँ सभी स्वय को एक राष्ट्रपुरुष का अग मानते हैं। विश्व में अपने देश का उच्च स्थान बने तथा वह समृद्धियुक्त हो, इस समान उद्देश्य हेतु कार्यरत रहते हैं, सभी स्वय की योग्यता क्षमता, समझ तथा प्रवृत्ति के अनुसार ईमानदारी से प्रयत्नशील होते है, जिससे अतत समान प्राप्तव्य की उपलब्धि होती है। वस्तुत यही प्रजातत्र की सच्ची भावना है। किसी एक के साथ सहमति न रखनेवाले पूर्णतया गलत हैं– ऐसा माना जा सकता है, परतु यह विश्वास रखना कि वे चिरस्थायी शत्रु भी हैं तथा उनको बहिष्कृत अथवा अधाधुध नष्ट कर देना चाहिए, यह कम से कम प्रशसनीय दृष्टिकोण नहीं है। यह अप्रजातात्रिक भी है। इसमें से राजतत्रीय निरकुशता अथवा हृदयविहीन दलीय तानाशाही की दुर्गंध आती है।

यह पूर्णत अहिंदू दृष्टिकोण है। स्वामी रामकृष्ण परमहस का कथन है– 'जितने व्यक्ति, उतने मार्ग।' सार रूप में यही शाश्वत सनातन हिंदू दृष्टिकोण है। हिंदू दूसरे व्यक्ति के दृष्टिकोण के प्रति केवल सहिष्णु ही नहीं होता, अपितु उसका सम्मान भी करता है। 'हमारे मार्ग भिन्न नजर आ सकते हैं, मतभेद भी हो सकता हैं, परतु हम सभी का अतिम लक्ष्य एक ही है'– इस भाव से हमें परस्पर एक-दूसरे को देखते हुए, दूसरे व्यक्ति के दृष्टिकोण का सम्मान करना सीखना चाहिए।

यह बहुत कष्टदायक है कि इस प्रकार की परस्पर निषेधता और राजनीतिक अस्पृश्यता इस समय अपने देश में कार्य कर रहे लगभग सभी

राजनीतिक दलों का चरित्र बन गया है। 'वहाँ मत जाओ, अमुक के साथ सामाजिक रूप से मत मिलो, भोजन मत करो, पारिवारिक अथवा धार्मिक कार्यक्रम में भागीदारी मत करो'– ऐसे बधन एव निषेध सभी तरफ ध्यान में आते हैं तथा इन अनादरयुक्त, अविनम्र, अशिष्ट व अभद्र आदेशों के उल्लघन करनेवालों के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही कर उसे निष्कासित कर दिया जाता है। समाजवादी स्वरूप के दुर्भाग्यशाली पक्षों में से यह एक है, जिसके फलस्वरूप जाने या अनजाने में, विभिन्न राजनीतिक समूह समाजवादी बहाव में बहे जा रहे हैं तथा इस राष्ट्र को जिसकी विराट, विशाल हृदयी, उदार चरित तथा सर्वग्राह्य सस्कृति है, अति महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय वैशिष्ट्य है, अविनम्र और असस्कृत लोगों की उदारताहीन कठोर सकुचितता की ओर घसीट रहे हैं।

ऐसे राजनीतिक दलों में, जिनका आधार समाजवाद अथवा इसी प्रकार की विदेशी अराष्ट्रीय जीवन पद्धति है, ऐसा पतन जो अवश्यभावी, परतु अक्षम्य है– समझ में आता है। परतु हिंदू महासभा द्वारा इस प्रकार का अहिंदू आचरण उद्वेगकारी है। यह निंदनीय है, ऐसा भी कह सकते हैं। हम सब आशान्वित रहें कि हमारे पुरातन राष्ट्र की सनातन पारिवारिक परपरा स्वय को पुन स्थापित करे तथा विचारों व मार्गों की आभासित विविधता होते हुए भी परस्पर स्नेह एव सम्मान करना सीखें।

अभी तो दुर्भाग्यवश हिंदू सभा ने एक तपोनिष्ठ कार्यकर्ता खो दिया है। यह तो भविष्य ही बताएगा कि क्या उनकी क्षति से जनसघ को असदिग्ध प्रतिभाशाली एक व्यक्ति उपलब्ध होता है? परतु ऐसे तुच्छ घटनाक्रमों में मेरी रुचि नहीं है।

१७ डा हेडगेवार स्मृति मदिर

(डा हेडगेवार स्मारक समिति, नागपुर के सभापति के नाते २१ अक्तूबर १९५९ को किया गया निवेदन)

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के सस्थापक आद्य सरसघचालक दिवगत डा केशवराव बलिरामपत हेडगेवार के नाम तथा कार्य के बारे में किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है। उनका समर्पित जीवन, प्रखर देशभक्ति

भाव, चारित्र्य की कमी व एकता तथा अनुशासन के अभाव जैसे राष्ट्रीय दोषों के योग्य निदान की पैनी दृष्टि एव उनकी विशिष्ट प्रतिभा तथा उच्च सगठन कौशल्य, जिसके कारण राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ जैसा राष्ट्रीय पुनरुत्थान का इतना सशक्त उपकरण अस्तित्व में आया, सारे देश में इतने सुविदित हैं कि उसकी पुनरुक्ति की आवश्यकता नहीं।

दिवगत डा हेडगेवार से प्रेरित असख्य बधुओं की यह दीर्घकालिक मनोकामना थी कि उनके अद्वितीय व्यक्तित्व की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए एक भौतिक स्मारक की निर्मिति हो। जनभावना को मूर्त रूप देने तथा उनके जीवनलक्ष्य के अनुरूप गतिविधियाँ चलाने के लिए सन् १९५७ में 'डा हेडगेवार स्मारक समिति' का गठन किया गया। उसका अपेक्षित पजीकरण भी हो चुका है।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ नागपुर का रेशमबाग सघस्थान प्रस्तावित स्मारक के निर्माण हेतु 'डा हेडगेवार स्मारक समिति' को अधिकृत किया गया है। हम सभी को स्मरण ही होगा कि सन् १९४० में इसी स्थान पर डा हेडगेवार जी का अतिम सस्कार किया गया था। एक छोटा प्रतीकात्मक चबूतरा दिवगत आत्मा की समाधि के रूप में यहाँ पर निर्मित किया गया था। अब समिति ने इस समाधि के ऊपर उपयुक्त शिल्प (भव्य रचना) के रूप में उनका 'स्मृति मदिर' बनाने का निर्णय किया है। समाधि के चारों ओर की भूमि अपर्याप्त है, ऐसा अनुभव होने पर परिसर से जुडा एक अतिरिक्त खुला भू-भाग नागपुर सुधार न्यास से खरीद लेने पर कुल भूमि चार एकड हो गई है। आसपास कुछ और जमीन भी खाली है। यदि वह प्राप्त हो जाती है तो इसका उपयोग अन्य निर्माण कार्यों में हो सकेगा। परतु यह विषय पूर्णत नागपुर सुधार न्यास के अधिकारियों पर निर्भर करता है। सद्य , समिति के पास उपलब्ध चार एकड भूमि पर एक 'स्मृति मदिर' एक आवास तथा एक छोटा उद्यान बनाने का प्रस्ताव है।

यह स्वाभाविक ही है कि दिवगत डा हेडगेवार के सारे देश में फैले हजारों श्रद्धालु इस स्मारक-निर्माण में अपना अशदान करना चाहेंगे। अत समिति अपने सभी सहयोगियों से अपना स्वैच्छिक योगदान, किसी के घर पर आकर स्मरण करवाने की बाट न जोहते हुए समिति कार्यालय में भेजने का हार्दिक अनुरोध करती है।

'स्मृति मदिर' का निर्माण-कार्य प्रारभ हो चुका है। नींव भरी जा चुकी है। शिल्प निर्माण का कार्य चल रहा है तथा आगामी विजयादशमी

तक इसके पूर्ण होने की संभावना है। अतः यह आवश्यक है कि सारी सहयोग राशि शीघ्रातिशीघ्र पहुँचे, ताकि निर्माण-कार्य तीव्र गति से संपन्न हो सके।

हृदयस्पर्शी निमित्त होने के कारण, अधिकतम संभव सहयोग हेतु अग्रसर होने के लिए हम प्रत्येक को अनुरोध करते हैं।

卐卐卐

१८ अमरीकी जनता के नाम संदेश

(श्री अटलबिहारी वाजपेयी १९६० में प्रथम बार तीन मास की अमरीका यात्रा पर गए। उनके निवेदन पर श्री गुरुजी ने अमरीका की जनता के लिए एक संदेश दिया। श्री वाजपेयी ने यह संदेश २८ सितंबर १९६० को वाशिंगटन की जनसभा में पढ़कर सुनाया था)

ऐसा प्रतीत होता है कि यह कोई योगायोग नहीं अपितु एक भगवद्विधान ही है कि स्वामी विवेकानंद जी ने अपने गुरु भगवान श्री रामकृष्ण के जीवन में प्रकट शाश्वत सत्य का उद्घोष सर्वप्रथम लोकतंत्र व मानव-प्रतिष्ठा के विश्वासी राष्ट्रों में नवीनतम व इसीलिए अत्यंत सबल राष्ट्र अमरीका में किया। जागतिक घटनाचक्रों के फलस्वरूप अमरीका स्वतंत्र विश्व के नेता के रूप में उभरा है और अपने इस महान उत्तरदायित्व का निर्वाह वह स्वामी जी के साधु-वचनों के स्मरण व तदनुरूप आचरण के प्रयत्नों के द्वारा ही कर सकता है।

विश्व दो गुटों में विभक्त हो गया है। संपूर्ण जगत् पर आधिपत्य स्थापित करने का उन्मत्त प्रयास हो रहा है। सतही रूप में देखनेवालों को जैसा दिखाई देता है, यह संघर्ष लोकतंत्र व साम्यवाद के मध्य नहीं है। निकृष्ट भौतिकवाद व धर्म के बीच युगों से चला आया संघर्ष है। साम्यवाद भौतिकवाद का पक्षधर है और स्वतः को जागतिक सिद्धांत के रूप में प्रकट करने के प्रयत्न में है। इसका विरोध, न तो कामचलाऊ भौतिक व्यवस्थाओं के द्वारा और न ही जातिगत सांप्रदायिक मतों के द्वारा किया जा सकता है, अपितु अद्वैत की अडिग शाश्वत नींव पर खड़े विश्वधर्म, जिसमें जातिगत धर्मों का सामंजस्य प्रस्थापित हो, उसमें एकतानता आए व अंतिम

लक्ष्य की प्राप्ति हो के द्वारा ही किया जा सकता है। यह व्यक्तिगत मान्यताओं को अमान्य करना नहीं, अपितु उनका उत्कृष्ट, यथार्थ व शाश्वत रूप में उदात्तीकरण है। यही एकमेव समान रूप से प्रिय वैश्विक विचारधारा है, जो सदाचरण, ठीक नीतियों व अपराजेय निश्चय के बल पर *विघटनकारी भौतिकतावादी शक्तियों का मुकाबला कर सकती है और* स्वतत्र जगत् को साम्यवाद के कहे जानेवाले बढते सकट से उबारकर अतिम सफलता की ओर ले जा सकती है।

कुछ अन्य देशों के समान वर्तमान भारत भौतिकता में भले ही समृद्ध न हो, परतु जीवन के अनेक विपर्यायों के बाद भी वह अद्वैत के शाश्वत सत्य पर अडिग है। एक बार पुन वह अपने पैरों पर खडा है और विश्व को ग्रस्त करनेवाले वर्तमान सकट में स्वतत्र राष्ट्रों को जागतिक विचारधारा प्रदानकर विजय में उन्हें सहायता प्रदान करने के अपने जीवनकार्य का साक्षात्कार कर रहा है।

मेरी कल्पना है कि अमरीका की जनता स्वामी विवेकानद जी के अमर सदेश का स्मरण करे, भारत के साथ अभेद्य मित्रता के सूत्र में वह बँधे, धर्म-शक्तियाँ विजयशाली हों, तो विश्व अनवरत युद्धों से मुक्त होगा तथा मानव को शाति व समृद्धि प्राप्त होगी।

१६ पजाबी सूबे की माँग

(पजाब प्रात का प्रवास समाप्त होने के पश्चात् १० नवबर १९६० को नई दिल्ली में पजाबी भाषा और अकाली दल की पजाबी सूबे की माँग के विषय में अपना मत स्पष्ट करने हेतु दिया गया वक्तव्य)

पजाब प्रात के मेरे प्रवास में स्थान-स्थान पर दिए गए मेरे भाषणों के और अनौपचारिक वार्तालाप में से बिना सदर्भ के कुछ अश वृत्त-पत्रों में प्रकाशित हुए। वैसे ही विभिन्न लोगों की प्रतिक्रियाएँ भी प्रकाशित हुई हैं। इसके कारण एक अनावश्यक और अवाछनीय विवाद-सा निर्माण हुआ दिखाई देता है। ऐसा लगता हे वृत्त-पत्रों में भाषणों एव वार्तालाप के जो अश प्रसिद्ध हुए हैं, वे ईमानदारी से उद्धृत नहीं किए गए हैं। राष्ट्रीय

स्वयसेवक सघ का व्यापक और सर्वस्पर्शी दृष्टिकोण समझने का प्रयत्न करने के स्थान पर प्रदेश की वर्तमान राजनीतिक स्थिति में उन्होंने अपनी सकुचित और पूर्वाग्रह दूषित दृष्टि से इस समस्या को देखा। इसलिए पजाव के विषय में राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का विचार सुस्पष्ट रूप से रखना आवश्यक हो गया है।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ एकात्म और अखड हिंदू राष्ट्र का समर्थक है। इसलिए जाति, पथोपपथ, भाषा और प्रातभेद उसको अमान्य हैं। पजाव की वर्तमान दुर्भाग्यपूर्ण तनाव की स्थिति 'सब हिंदू हैं'— यह पूर्णतया भूलकर जाति तथा सप्रदायों के आधार पर विचार करने के कारण ही, निर्माण हुई है। इसी कारण अकाली दल, सिख सप्रदाय के अपने मूल जीवनोद्देश्य के विपरीत सिखों की एक अलग राजनीतिक इकाई गठन करने का प्रयास कर रहा है। यह कदम सिख सप्रदाय के सच्चे धार्मिक स्वरूप को नष्ट करनेवाला है और वह अपने राष्ट्र की एकता और अखडता के लिए घातक सिद्ध होगा। उसके द्वारा प्रस्तुत पजाबी सूबे की माँग, इस घातक मनोवृत्ति की अभिव्यक्ति होने के कारण असमथनीय है।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ केंद्रीय एकात्म शासन का प्रतिपादन करता है, जिसमें केवल प्रशासन की सुविधा के कारण ही प्रदेशों का अस्तित्व रहता है, परतु भाषा के आधार पर बनी आज की राजनीतिक अवस्था में प्रचलित पजाब के विभाजन का कोई कारण नहीं। सपूर्ण पजाव में सब लोगों का सर्वसामान्य व्यवहार पजाबी भाषा में होता है। यहाँ हिंदी को मातृभाषा मानकर उसका उपयोग करनेवाले भी पर्याप्त मात्रा में हैं। इसलिए पजाबी के साथ-साथ हिंदी का भी प्रदेश के शासकीय व्यवहार में उपयोग होना चाहिए।

विभिन्न राजकीय कारणों से पजाब में पजाबी अपने उचित एव न्याय्य स्थान से वचित रही। अकाली दल पजाब का जिस प्रकार समर्थन कर रहा है और इस बारे में शासन ने जो नीति अपनाई है, उससे पजाबी के हित की अपेक्षा पजाबी भाषा-भाषी लोगों में विपरीत आशकाएँ निर्माण हो गई हैं।

भाषा को किसी सप्रदाय के साथ नहीं जोडा जा सकता। पजाबी भाषा बोलनेवाले सभी का यह पवित्र कर्तव्य है कि अपनी मातृभाषा को वे राजनीति और पृथकतावाद की दासी न होने दें। आज पजाबी भाषा और

सिखों का समीकरण अवास्तविक और अनावश्यक है। किसी भाषा की लिपि कौन-सी हो, इसका निर्णय वह भाषा बोलनेवाले करें। यदि पजाबी बोलनेवाले नागरी लिपि का उपयोग करना चाहें तो उसमें किसी को क्यों आपत्ति हो? आज तो सभी प्रातीय भाषाओं के लिए नागरी लिपि का उपयोग हो, ऐसा सूचित किया गया है।

हिदुओं के विभिन्न सप्रदायों में परस्पर सद्‌भावना और विश्वास रहने की आज आवश्यकता है। हम सब हिंदू हैं, इसकी अनुभूति और उसमें गौरव की भावना रहने से ही यह सभव होगा। एक-दूसरे की पृथकता दिखानेवाले 'हिदू और सिख' जैसे वाक्यों का उपयोग नहीं करना चाहिए। सिख हिदू ही है। उन्हें गुरुओं की पुनीत परपरा का यथोचित आदर करते हुए, अपने को सदैव सपूर्ण व्यवहार में इस विशाल हिदू समाज के एक अग के रूप में सिख हैं, ऐसा ही मानना चाहिए।

इसलिए पजाब में रहनेवाले सब बधु राजनीतिक उद्देश्यों को इससे अलग रखकर, निर्भयता और नि सकोच भाव से अपनी मातृभाषा को अपनायें। वास्तविक सत्य के ऐसे आग्रही प्रतिपादन से ही पजाबी की जटिल समस्या सुलझ सकेगी।

卐卐卐

२० हिदुओ का वास्तविक प्रतिनिधि

(फरवरी १९६२ में राष्ट्र को किया गया आह्वान)

आगामी निर्वाचन में मैं किसी भी व्यक्ति विशेष अथवा पक्ष-विशेष का समर्थन नहीं करना चाहता, क्योंकि मैं किसी भी राजनीतिक दल से सबधित नहीं हूँ और न कोई विशेष राजनीतिक दल मुझ पर अपने अधिकार का दावा कर सकता है। फिर भी हिदू समाज के एक घटक के नाते मैंने अपना सर्वस्व उसके प्रति समर्पित कर रखा है। मैं अपने कुछ व्यक्तिगत मत और सुझाव प्रस्तुत करना चाहता हूँ। यह समाज के व्यक्तियों पर निर्भर करता है कि वे उसे अपनी बुद्धि और विवेक की कसोटी पर कस कर चाहे स्वीकार करें अथवा पूर्वाग्रहों ओर पूर्वमतों के अनुसार उसे अस्वीकृत कर दें।

बडे कहे जानेवाले राजनीतिक दलों में से काग्रेस और प्रजा समाजवादी दल ने समाज के सम्मुख समाजवाद का आदर्श प्रस्तुत किया है। किंतु समाजवाद के परिणामस्वरूप जर्मनी में नाजीवाद और इटली में फासीवाद का उदय होकर जिस रीति से इन दोनों राज्यों का अभ्युदय और पतन हुआ तथा उनकी निरकुश तानाशाही ने ससार की कितनी वडी हानि की, इसे सभी जानते हैं। इसलिए कोई भी व्यक्ति इस बात की गारटी नहीं दे सकता कि समाजवाद को अपनाने से उक्त दु खद गाथा इस देश में दोहराई नहीं जाएगी।

समाजवाद स्पष्ट रीति से आधुनिक यूरोपियन राजदर्शन है, जिसका अत औसत नागरिक को गुलाम बनाने और तानाशाही शासन प्रस्थापित करने में होता है। अत प्रत्येक नागरिक को सतर्क एव जागरूक रहते हुए अपनी अमूल्य स्वतत्रता का रक्षण करना चाहिए और उसे निरकुश तानाशाही का शिकार होने से बचाने का प्रयत्न करना चाहिए। इसी भाँति क्षणिक भौतिक सुखों की प्राप्ति के लिए चाँदी के कुछ सिक्कों के बदले सपूर्ण समाज को गुलामों के एक समूह में परिणत होने से रोकना चाहिए। अत प्रत्येक व्यक्ति को इन तथाकथित समाजवादी आदर्शों का तिरस्कार करते हुए उन तत्त्वों का समुचित प्रतिरोध करना चाहिए, जो इस प्रकार के बर्बर दर्शनों में उसे जकड देना चाहते हों।

कम्युनिस्टों ने रूसी गुट से अपना पल्ला बाँध रखा है और वे इस देश में रूसी रीति-नीति की प्रतिष्ठापना करना चाहते हैं। विगत ४० वर्षों के इतिहास में उन्होंने इस प्रकार रक्त की नदियाँ बहाई हैं और सामूहिक जनहत्याओं के दृश्य उपस्थित किए हैं, जिसकी तुलना मानव-जाति के असभ्यकालीन इतिहास के किसी भी पृष्ठ से नहीं की जा सकती। सक्षेप में उनकी इस विलक्षण रीति-नीति और विचारधारा ने मनुष्य के विचारों, आदर्शों और भावनाओं में बलात् परिवर्तन करते हुए साधारण नागरिक को गुलाम बनाकर उसे राज्य का एक निर्जीव पुर्जा मात्र बना दिया है।

वास्तव में समाजवाद और साम्यवाद– दोनों में कोई विशेष अतर नहीं है, क्योंकि दोनों ही मनुष्य की उस प्रतिक्रियावादी विचारधारा के प्रतिफल हैं, जिसके अनुसार राज्य की सपूर्ण शक्ति, धन-सपत्ति और उत्पादन के सभी साधन कुछ व्यक्तियों के हाथों में केंद्रित होकर मानवजीवन एक कठोर शिकजे में कस दिया जाता है और व्यक्ति का व्यक्तित्व समाप्त

होकर वह एक निर्जीव यत्र मात्र रह जाता है।

इसके अतिरिक्त ये सभी अहिंदू सस्थाएँ हैं। यद्यपि यह भी सभव है कि इन दलों का लेवल लगाकर कुछ श्रेष्ठ व्यक्ति भी चुनाव में खडे हुए हों, परतु यदि मतदाता केवल उनके व्यक्तिगत चारित्र्य और श्रेष्ठता के आधार पर उन्हें अपना प्रतिनिधि वनाएगा तो उसे निराशा ही हाथ लगेगी, क्योंकि चुने जाने के वाद उक्त प्रतिनिधि को दल के कठोर नियमों एव अनुशासन का पालन करते हुए दल की मशीन का एक पुर्जा मात्र रह जाना पडेगा और उसके व्यक्तिगत चारित्र्य, श्रेष्ठता और हिंदू जीवनादर्शों के प्रति व्यक्त की जानेवाली श्रद्धा का कोई भी मूल्य नहीं रहेगा।

अत मतदाताओं को जागरूक रहते हुए अपने विवेक का परिचय देना चाहिए और ऐसे व्यक्तियों और दलों को ही अपना अमूल्य मत प्रदान करना चाहिए, जिनमें हिंदू समाज और हिंदू हितों के लिए सर्वस्वार्पण करने की सिद्धता हो। मतदाता ध्यान रखें कि उनके प्रतिनिधि ऐसे व्यक्ति होने चाहिए और ऐसे दल से सबधित होने चाहिए जो सकीर्णतावादी न होकर उदार दृष्टिकोण वाले एव प्रगतिवादी हों और देश की पुरातन सस्कृति के प्रति जिनकी अटूट श्रद्धा हो। उनका व्यक्तिगत ओर राष्ट्रीय चारित्र्य उच्चकोटि का हो तथा उनमें मतों की भिन्नता रखनेवालों के प्रति घृणा का भाव न होकर सहिष्णुता की वृत्ति हो। इसी भाँति मतदाता यह भी ध्यान रखे कि उनके प्रतिनिधि धन, पद यश की गरिमा से दूर रहकर सभी स्थितियों में सेवा की वृत्ति रखनेवाले अतर्बाह्य रूप से हिंदू जीवनादर्शों से युक्त हों और राष्ट्र की सेवा के लिए सर्वस्वार्पण की वृत्ति रखने के साथ सार्वजनिक जीवन में एक टीम के रूप में महान से महान उत्तरदायित्व उठाने की क्षमता रखनेवाले हों तथा समाज सेवा की तीव्रता में जिन्हें व्यक्तिगत सुख सुविधा और मानापमान का लेश मात्र भी विचार न हो। यदि मतदाताओं ने इस रीति से अपने मत का उपयोग कर सुयोग्य प्रतिनिधि चुना, तो यह कहा जा सकेगा कि उनका मत व्यर्थ नहीं गया है और उन्होंने योग्य प्रतिनिधि को चुनकर राष्ट्र-निर्माण की सुदृढ आधारशिला रख दी है, जिसे प्रवलतम झझावात भी हिला नहीं सकेंगे एव जिसके सहारे इस देश में, जिसे हम 'भारतमाता' कहकर सबोधित करते हैं, सम्मानपूर्ण राष्ट्रीय जीवन विकसित किया जा सकेगा।

ϖ ϖ ϖ

२१ नेपाल-नरेश महाराज महेंद्र का नागपुर के मकर संक्राति उत्सव पर आना निरस्त होने पर

(जनवरी १९६५ में श्री गुरुजी द्वारा दिया गया वक्तव्य)

लगभग दो वर्ष पूर्व भगवान श्री पशुपतिनाथ के दर्शन के लिए महाशिवरात्रि के पर्व पर काठमाडू गया था। उसी समय श्रीमत् महाराज नेपाल-नरेश के दर्शन करने का सुयोग प्राप्त हुआ। नेपाल भारत के अविभाज्य सबधों के विषय में धर्म-सस्कृति की एकता के आधार पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए हिंदू समाज के सगठन के ध्येय से चलनेवाले अपने राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के कार्य से उन्हें अवगत कराया ओर उसी समय सघ के माध्यम से अखिल हिंदू समाज को उनका प्रकट सत्कार करने के किसी आयोजन में उपस्थित होने का अनुग्रह करने की मैंने प्रार्थना की। योग्य अवसर पर ऐसा हो सकता है, ऐसा आश्वासन भी मुझे प्राप्त हुआ। नेपाल से आने पर मेरे मन पर हुए उस भेंट के परिणाम प जवाहरलाल नेहरू जी तथा श्री लालबहादुर शास्त्री जी को पत्र द्वारा अवगत कराए थे। मान्यवर स्व पडित जी की सहमति व्यक्त करनेवाला उन्हीं की स्वाक्षरी का उत्तर भी त्वरित मुझे मिला।

पश्चात् अपनी विदेश यात्रा से लोटते समय कुछ काल श्री महाराज श्री का वास्तव्य मुबई में होने की सभावनाओं का पता लगने पर मुबई में ही उस अवधि में ६ अक्तूबर १९६३ को ऐसा आयोजन करने की अनुमति माँगने पर, कुछ असुविधाओं के कारण अन्य कोई अधिक अच्छा अवसर देखने की मुझे सूचना मिली। अत उसके तीन मास पश्चात् जनवरी १९६४ के सघ के सक्रमणोत्सव पर उन्हें निमन्त्रण दिया। उन्हें वह स्वीकार था, किंतु ठीक उन्हीं दिनों में प्रधानमत्री प नेहरू (जो दुर्भाग्य से अब अपने बीच नहीं रहे हैं) का नेपाल जाने का कार्यक्रम भारत सरकार के द्वारा बनाया गया ओर उनके स्वागतार्थ श्रीमन्महाराजाधिराज को उपस्थित रहना आवश्यक प्रतीत हुआ। श्री महाराज का निर्णय औचित्यपूर्ण था। उसी कारण गत वर्ष के अपने सक्रमणोत्सव पर उनका उपस्थित होना सम्भव नहीं हो सका।

इस बार के मकर सक्रमणोत्सव पर फिर निमत्रण भेजने का मैंने प्रयत्न किया और साधारण सम्मति प्रदर्शक पत्र प्रत्यक्ष श्रीमन्महाराजाधिराज जी से प्राप्त कर अत्यत प्रसन्न हुआ। कार्यक्रम निश्चित करने की प्रार्थना

करनेवाला पत्र भेजकर इस सकल्पित समारोह से अपने प्रधानमत्री तथा राष्ट्रपति महोदय को अवगत कराने हेतु मैं ८ दिसबर १६६४ को दिल्ली गया था। उसके लगभग दो सप्ताह पूर्व ही पत्र भेजकर भेंट के लिए तीन दिनों में कोई समय देने की प्रार्थना की थी। दिनाक ६ को श्रद्धेय राष्ट्रपति जी के दर्शन कर श्रीमान् नेपाल-नरेश के नागपुर के अपने मकर सक्रमणोत्सव पर आने की सभावना तथा उनकी ओर से प्राथमिक स्वीकृति प्राप्त होने का समाचार मैंने दिया। प्रधानमत्री महोदय की ओर से समय की सूचना नहीं मिली। इन तीन दिनों में टेलीफोन पर से पूछने पर वहाँ के सचिव महाशय से यही उत्तर मिला कि परामर्श कर समय निश्चित कर सूचना दी जाएगी। किंतु सूचना नहीं मिली। परिणामस्वरूप प्रधानमत्री महोदय को प्रत्यक्ष में सर्व समाचार देकर उनसे परामर्श करने का अवसर मैं प्राप्त नहीं कर सका।

श्रीमन्महाराज को पत्र लिखना आवश्यक ही था। वैसे मेरा पत्र जा भी चुका था और दिसबर के उत्तरार्ध में श्रीमन्महाराज की स्वाक्षरी का सम्मति व्यक्त करने वाला तथा यहाँ आने-जाने के समय की सूचना देनेवाला उत्तर भी प्राप्त हुआ। मैं फिर २२ तथा २३ दिसबर को दिल्ली गया, किंतु प्रधानमत्री दिल्ली में उपस्थित नहीं हैं, ऐसा समाचार मिला। अत २४ दिसबर को उनके नाम पत्र लिखकर मैं नागपुर लौट आया। उसी दिन श्रद्धेय राष्ट्रपति जी के नाम भी पत्र लिखा था। प्रधानमत्री महोदय की ओर से मेरे पत्र की प्राप्ति की सूचना २६ दिसबर को भेजी गई।

२४ दिसबर को महाराष्ट्र के मुख्यमत्री श्री वसतराव नाईक महोदय से भेंट कर श्रीमन् महाराज का पत्र उन्हें दिखाकर श्री नेपाल नरेश के आगमन पर शासन की ओर से क्या करना पडेगा आदि पूछा। स्वाभाविक रूप से केंद्रीय शासन की ओर से जैसी सूचना प्राप्त होगी, वैसा सब प्रबध करने का आश्वासन उन्होंने दिया। फिर वृत्तपत्रों में श्री नेपाल नरेश जी के आगमन का शुभ समाचार प्रसारित करवाया गया। दूसरे दिन पता लगा कि काठमाडू से भी आकाशवाणी पर यह सवाद प्रसारित हो चुका है।

इतना होने पर इतने महत्त्व के पुरुष के योग्य स्वागत की सिद्धता में सब बधु जुट गए। मैं अपने पूर्वनियोजित प्रवास के लिए चला गया। २६ दिसबर से ५ जनवरी तक बिहार प्रात में था तब मुझे मेरे मित्रों ने बताया कि कुछ वृत्त-पत्रों में इस प्रस्तावित कार्यक्रम के विरोध में अग्रलेख, टिप्पणियाँ, कई राजनैतिक पुरुषों के वक्तव्य प्रकाशित हुए हैं। विशेषकर

अपने को प्रगतिशील कहने वाले साम्यवादी तथा उनके सहप्रवासी दलों के समर्थक पत्र तथा शासन के सकेत से चलने की चेष्टा करनेवाले पत्र ही इस प्रकार के प्रचार में सलग्न दिखाई दिए। उसी समय यह भी पढने को मिला कि प्रधानमत्री महोदय ने उन्हें इस वात की कुछ भी जानकारी न होने की वात कही। वाद में कुछ अन्य केंद्रीय मत्रियों ने भी इसी अज्ञान का प्रदर्शन किया। मुझे स्वाभाविक ही इससे दु ख हुआ, किंतु आश्चर्य नहीं। इससे मुझे आभास होने लगा कि अपने शासनकर्ता वधुओं के मन में कुछ ऐसे भाव आने लगे होंगे कि नागपुर के आयोजित कार्यक्रम में वाधा उत्पन्न की जाए।

७ जनवरी की सायकाल मेरे नागपुर पहुँचते समय तक ऐसे समाचार भी छप गए कि नेपाल-नरेश नागपुर नहीं आएँगे। ८ जनवरी को घोषित तथा ९ जनवरी के वृत्त-पत्रों में छपे समाचार के अनुसार भारत के विदेश मत्रालय के प्रवक्ता ने उनका आना रद्द होने का समाचार प्रकट किया। प्रवक्ता के वक्तव्य के अनुसार 'उन्होंने अपनी इच्छा से आने का निर्णय किया था और अव अपनी ही इच्छा से उन्होंने न आने का निर्णय किया है।' सव लोगों ने समझने का प्रयत्न किया कि नेपाल-नरेश का आगमन भारतीय शासन के ही कारण स्थगित हुआ है, इसमें किसी को संदेह नहीं रहेगा। यदि श्रीमन् महाराज जी ने अपनी इच्छा से यह परिवर्तन किया होता तो उनके आने की सम्मति जेसे सीधी हम लोगों के पास प्रथम पहुँची, उसी प्रकार यह परिवर्तन भी प्रथम हम लोगों को सूचित किया जाता। ध्यान में रखने योग्य वात है कि उक्त प्रवक्ता के निवेदन को चौबीस घटे हो चुकने पर भी नेपाल नरेश की ओर से अधिकृत सूचना हम लोगों को प्राप्त नहीं हुई थी। यहाँ से दूरध्वनि पर पूछताछ करने पर उक्त प्रवक्ता के दिए समाचार की पुष्टि काठमाडू से हो सकी।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ का इस वर्ष का मकर सक्रमणोत्सव पूर्व सकल्प के अनुसार न होकर प्रतिवर्ष के अनुसार होने से कुछ वनता विगडता नहीं। सभी प्रकार की सुख-दु ख की अनुकूलता-प्रतिकूलता की, स्नेह-विरोध की परिस्थितियों में कार्य करते रहने का, वढते रहने का स्वयसेवक वधुओं को अभ्यास है। आशा-निराशा के हिडोले पर झोंके खाने की दुर्वलता यहाँ नहीं है। हिंदू तत्त्वज्ञान की इस श्रेष्ठ शिक्षा को हृदय में धारण कर सोत्साह स्वकर्मरत रहना, यही स्वयसेवकों का स्वभाव वनाने का सफल प्रयास रहता है। इस प्रसग का सच्चा महत्त्व, अपने देश के आज

के नेतृत्व का हिंदू-विरोधी स्वरूप असदिग्ध रूप से सब देशवासियों के सामने उपस्थित करने में प्रकट हो रहा है। जनसाधारण को चेतावनी देनेवाला, सावधान करनेवाला, द्रुतगति से आ रहे सकटों का स्पष्ट सकेत देनेवाला यह प्रसग अनन्य साधारण महत्त्व का है।

यह एक सयोग की ही बात है कि राष्ट्रीय जीवन के लिए प्रसग का निमित्त, हिंदू समाज के जागरण में रत राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ बन गया है।

२२. जगद्गुरु शकराचार्य जी को मुक्त करने पर

(नागपुर से २८ नवबर १९६९ को श्री गुरुजी द्वारा दिया गया वक्तव्य)

अत्यत समाधानपूर्वक गोवर्धन पीठ के जगद्गुरु शकराचार्य को पाडिचेरी से पुरी ले जाकर मुक्त करने का समाचार प्राप्त हुआ। इस प्रकार का निणय भूल-सुधार एव सही दिशा मे सही कदम है। इसी प्रकार का निर्णय, श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी के प्रति भी लेना उचित कदम होगा। जो कि सरकार एव जनमानस की साप्रत विवचना से मुक्ति दिलाएगा। इस प्रकार का निर्णय गोवश हत्या बदी कानून बनाने की दिशा में जनता एव सरकार के बीच सौहार्दपूर्ण वातावरण बनाने में सहायक होगा।

सरकार की यह पहल सराहनीय है। मैं उन्हें इस प्रश्न को सम्यक् रूप से एव विचारणीय दृष्टि से देखने का आग्रह करता हूँ, जिससे जनता का शासन के प्रति विश्वास तथा महत्ता का भाव अक्षुण्ण रह सके।

२३ प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी का अनशन

(दिसवर १९६९ को दिया गया वक्तव्य)

श्रद्धेय श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी के स्वास्थ्य में गभीर गिरावट आने का समाचार मिलने के कारण आज मैं उनके दर्शन करने गया था। स्वास्थ्य के सवध में जो वृत्त आया था, उससे भी अधिक चिताजनक स्थिति है।

शरीर अति दुर्बल हो गया है, बोलने की शक्ति भी बहुत कम हुई है। उनसे कम से कम आगामी सप्ताह पूर्ण मौन रहने की प्रार्थना की है। उन्होंने यह माना भी है। परतु बहुत काल तक इस प्रकार वे चल सकेंगे, इसका भरोसा नहीं। ऐसा प्रतीत हुआ, मानो वे जीवन की सीमा-रेखा पर खडे हों। मेरे मन में इससे अत्यत व्यथा हुई है। परतु वे अपने निश्चय पर अटल हैं।

राष्ट्र के लिए अत्यत हितकारी परपरा को अक्षुण्ण बनाकर, जनसाधारण के आत्मविश्वास तथा श्रद्धा को बल देनेवाले पवित्र सकल्प 'सपूर्ण गोवश की रक्षा' को लेकर सत प्रभुदत्त ब्रह्मचारी, श्रद्धेय जगद्गुरु पुरी पीठाधीश्वर जैसे परमोच्च कोटि के महात्माओं को, धर्मधुरीणों को अपने प्राणों की बाजी लगानी पडे, यह देश का दुर्भाग्य है। शासन के लिए यह अशोभनीय है। इनमें से किसी के भी जीवन की इस पुनीत लक्ष्य को पूरा करने के लिए समाप्ति हुई, तो सद्य कालीन शासन चलानेवाले नेताओं के माथे पर कलक का अमिट टीका लग जाएगा।

मेरी गृहमत्री महोदय से प्रार्थना है कि सतुलित हृदय से इस प्रश्न का विचार करें और इन महात्माओं के प्राण-रक्षण करने का श्रेय प्राप्त करें। इस हेतु उचित अध्यादेश द्वारा देश भर में सपूर्ण गोवश हत्या पर प्रतिबध घोषित करें। इसमें शासन, दल व व्यक्ति की प्रतिष्ठा का प्रश्न लाना ठीक नहीं। ऐसा अध्यादेश घोषित कर इन महात्माओं के प्राण-रक्षण से सपूर्ण देश की कृतज्ञता तथा उत्तम प्रतिष्ठा का ही अर्जन होगा।

श्री भगवान से मेरी प्रार्थना है कि शासनारूढ महानुभावों की सद्बुद्धि से सर्वमगल ही निष्पन्न हो।

२४ गाय और चुनाव

(सन् १९६७ में दिया गया वक्तव्य)

आजकल गोवर्धन पीठ पुरी के स्वामी श्री शकराचार्य महाराज, श्री रामभिक्षुजी महाराज तथा अन्य पूजनीय साधु सत उपोषण कर रहे हैं। किसी भी सहृदय व्यक्ति के लिए यह एक चिता का विषय बन गया है। इन महानुभावों के उपोषण का आज पचासवॉं दिन है। स्वाभाविक्तया उपोषणकर्ता शरीर से अत्यधिक दुर्बल हो गए हैं। किसी भी समय भयानक घटना हो सकती है। ये पुण्यवान महात्मा केवल हास-परिहास के लिए यह अग्निदिव्य

नहीं कर रहे हैं। गाय, बछडे, साड, बैल, अर्थात् सपूर्ण गो-जाति का वध बद हो, उसके लिए सार्वदेशिक विधान बने, उसके लिए शासन को अनुकूल बनाने के हेतु ये महात्मा लोग दड झेल रहे हैं। शासन अपनी बात पर अडा हुआ है। कदाचित शासन को यह दिखाना है कि हम बडे दृढ हैं, सबल हैं और किन्हीं आदोलनों से झुकाए नहीं जा सकते, परतु शासन ने तो अनेकों ही बार गुडों के सामने घुटने टेके हैं। यहाँ तक कि आततायियों की देशहानिकर एव अपमानास्पद माँगें भी शासन ने मान्य की हैं। मान भी लिया कि इस प्रसग पर शासन अपनी दृढता का प्रदर्शन करना चाहता है, तो भी इसके सबध में केवल यही कहा जाएगा कि शासन ही विमलबुद्धि, विधिपालक, शातवृत्ति सज्जनों के साथ अकारण कठोर एव निर्दय बन रहा है। सतों का हेतु पवित्र है। वे केवल अपने राष्ट्रीय आत्मसम्मान की पुनर्स्थापना करना चाहते हैं। उन महात्माओं की गोवश-हत्या-निरोध विषयक माँगों को समझने के लिए अपने राष्ट्रीय सम्मान के इस पहलू का ठीक से आकलन होना आवश्यक है। शासन ने विचित्र रूप अपनाया है। दिखाई देता है कि राष्ट्रीय सम्मान की बलि चढाकर शासन या सत्ताधारी पक्ष अपनी प्रतिष्ठा का रक्षण करना चाहता है।

इस पवित्र भूमि में हम हिदू लोग हजारों वर्षो से इस भूमि की सतान के नाते रहते आए हैं। यहाँ पर हमारी सास्कृतिक परपराओं का गठन हुआ है। यहीं पर हमने अपना महान शुद्ध नीतिमान एव पवित्र जीवन विकसित किया है। जब हमें पारतत्र्य प्राप्त हुआ और हमारी राजकीय इकाई नष्ट हुई, तभी यह प्रक्रिया बद हुई। जब से हमारा देश परदेशी, परधर्मी परसास्कृतिक लोगों के हाथों में चला गया, तब से हमारी प्रगति रुक गई, अपितु यह कहना ठीक होगा कि तब से हमारी प्रगति अवरुद्ध होने लगी। गो-माता की देह में सब देवतागणों के एक साथ रहने की कल्पना हमारे यहाँ अतिप्राचीन काल से सर्वमान्य है। अत उसकी पूजा हमारे यहाँ पुरातन काल से राष्ट्रीय कर्तव्य माना गया है। गाय और गोवश हमारे राष्ट्र के स्वातत्र्य एव सम्मान का प्रतीक बन गया था। उसका स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि पूजाप्रवण तथा कृतज्ञ स्वभावी भारतीयों के द्वारा इस पवित्र वश का सरक्षण हुआ। गोहत्या यहाँ अकल्पनीय थी। वह एक जघन्य पाप था और उसके लिए कठोर दड दिया जाता था।

हमारी राष्ट्रीय एव सास्कृतिक परपराओं से शत्रुभाव रखने वाले परकीय जब यहाँ शासक के रूप में प्रस्थापित हुए, तब सब बातें बदल

गई। विजित जनता का चैतन्य नष्ट करने के लिए और तद्वारा उसे सदा के लिए अपने अधीन बनाए रखने के लिए आक्रामकों ने हिदुओं की प्रत्येक आदरणीय वात के विरुद्ध जिहाद छेड दिया। इस प्रकार उन्होंने हिदुओं की भावनाओं एव स्वातत्र्य की पुनर्प्राप्ति की लालसा को नष्ट करने का प्रयास किया। उन्होंने कलाकृतियों का प्रमत्त विनाश किया। उन्होंने पवित्र पूजास्थान एव तीर्थक्षेत्र नष्ट किए। उन्होंने स्त्रियों को भ्रष्ट किया और गोवश का अधाधुध कत्ल किया। यह सव उन्होंने हिदुओं का दमन करने के लिए किया। यह दिखाने के लिए किया कि हिदू तो क्रीतदास मात्र हैं, उन्हें न कोई अधिकार हैं न सुविधाएँ। दूसरों के द्वारा विचार किए जाने योग्य उनकी कोई भावनाएँ नहीं हैं। स्वय को इस्लाम के पुरस्कर्ता कहनेवाले अरव, तुर्क, मुगल इत्यादि के भयानक प्रारभिक आक्रमणों से लेकर उत्तरकालीन यूरोप के आक्रमणकारियों तक ऐसा प्रतीत होता है कि गोहत्या उनके वर्चस्व एव प्रभुत्व का लक्षण वन गई थी। स्वाभाविक रूप में हिदू के लिए वह एक अधम दास्य का घृणित चिह्न वन गया।

अत स्वातत्र्य के लिए लडनेवाले सव वीरों ने गोरक्षा को अपना ध्येय घोषित किया था। उसका अर्थ यह था कि वे अपने राष्ट्रीय जीवन के हर कलक को मिटाने पर तथा अपनी पूज्य सस्कृति को पुनरपि वर्धमान करनेवाले यहाँ के जनजीवन को उच्चतर एव पवित्रतर वनानेवाले स्वातत्र्य को पुनरपि प्रस्थापित करने पर तुले हुए थे। छत्रपति शिवाजी महाराज गोब्राह्मण प्रतिपालक कहलाते थे। श्री गुरु गोविदसिह जी महाराज ने अपनी आर्त प्रार्थना में तुर्कों का नाश करने के लिए तथा गाय को पीडा से बचाने के लिए तथा धर्म सरक्षण के लिए ही सामर्थ्य माँगा है। सन् १८५७ के स्वातत्र्य युद्ध का विस्फोट गो विषयक स्फुलिग से ही हुआ। कूकाओं के शस्त्रोद्यत होने के लिए गोभक्ति की ही प्रेरणा थी। उत्तर काल में लोकमान्य तिलक तथा महात्मा गाँधी जेसे स्वातत्र्य युद्ध के महान नेताओं ने यही घोषित किया था कि यहाँ से जब हम अग्रेजों को भगा देंगे ओर परदास्य समाप्त करेंगे, तव स्वतत्र भारत का पहला कानून गाय एव गोवश की हत्या का सपूर्ण विरोध करनेवाला होगा। महात्मा गाँधी जी ने तो यहाँ तक कह दिया था कि मेरे मतानुसार गाय की समस्या का महत्त्व प्रत्यक्ष स्वराज्य से भी वढकर हे। अत गो-विषयक विविध कार्य चलने चाहिए। गोशालाएँ प्रस्थापित होनी चाहिए पिजरापोल आदि चलाने चाहिए। शासन को प्रार्थना-पत्र देना और अपना राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त करने के लिए विविध

आंदोलन चलाना आदि कार्य पिछले अनेक वर्षों से चल रहे हैं।

परंतु आश्चर्य की बात है कि परदेशी शासक जाने के बाद बने हुए हमारे शासन ने आज तक यह नहीं पहचाना है कि यह विषय राष्ट्रीयता की दृष्टि से प्रथम श्रेणी का महत्त्व रखता है। आयुस्थितिनिरपेक्ष गोवशहत्या जब तक हम पूर्णतः बंद नहीं करते, तब तक हमारा स्वराज्य अपूर्ण है और उसके रूप में पारतंत्र्य के अत्यंत पीड़ादायक चिह्न बने रहते हैं और वे हमारी राष्ट्रीय अस्मिता को बुझाने का काम करते हैं। इस बात को आज के हमारे शासकों ने कभी समझा ही नहीं।

गलत धारणा के कारण वे उसका गठबंधन आर्थिक प्रश्नों के साथ कर रहे हैं। वे यह तथ्य भूल जाते हैं कि राष्ट्र का सम्मान केवल रुपए-पैसों में नहीं नापा जा सकता। उन्हें इस बात का आकलन नहीं हुआ है कि गोहत्या चालू रखने में वे दास्यभाव को प्रोत्साहित करते हैं और उसे बनाए रखते हैं।

इसीलिए कुछ लोगों के मन में यह विश्वास उत्पन्न होता है कि हमारे तथाकथित नेताओं की देशभक्ति का स्वरूप वास्तव में अंग्रेजों के विरोध तक ही सीमित था। अंग्रेजों के राज्य में उनके अधिकार समाप्त हो गए थे और संपत्ति छिन गई थी, वे केवल इसीलिए अंग्रेजों का विरोध करते थे। हमारी राष्ट्रीय धरोहर के संबंध में उनकी जो भावनाएँ, आवेश, विचार तथा कृति है, उन पर विचार करें तो ये लोग तुर्क या अंग्रेज जैसे ही पराए प्रतीत होते हैं।

भारतीय जनता के नाते हमारे राष्ट्रीय जीवन का यह सत्य हमें समझना होगा और निर्णय लेना होगा कि हमें कैसा रहना है। परदेशी लोग ही हमारे लोगों के द्वारा शासन चला रहे हैं, ऐसी स्थिति हम पसंद करते हैं या पारतंत्र्य के सब चिह्नों को मिटाकर हमें स्वतंत्र आत्मनिर्भर, आत्मसम्मानित और इसीलिए विश्वसम्मानित बनकर, तन कर खड़े होना है? वह कहाँ तक सच है, मैं नहीं कह सकता, परंतु ऐसा वृत्त आया है कि आज के हमारे शासन पर अमरीका तथा अन्य परदेशी सत्ताओं ने दबाव डाला है कि गोहत्या बंद मत करो, अन्यथा हम जो विविध प्रकार की सहायता देते हैं, उसे बंद कर देंगे। हम किस प्रकार परदेशियों के अधीन हैं और उनके इशारों पर चलते हैं, इसका यह स्पष्ट प्रमाण है। तात्पर्य यह है कि जिसे हम 'स्वातंत्र्य' कहते हैं, वह देदीप्यमान स्थिति अभी हमें प्राप्त

ही नहीं हुई है। इससे प्रत्येक देशभक्त नागरिक की आँखें खुलनी चाहिए और उसे जरा खुली आँखों से इस दु खमय परिस्थिति को देखना चाहिए।

अपने राष्ट्र की आत्मा जागृत करने तथा अपने जीवन को दासता के पाशों से मुक्त करने हेतु ही हमारे पुण्यात्मा साधुओं ने गाय तथा गोवश की हत्या पर देशव्यापी प्रतिबंध लगाने के लिए और एतदर्थ केंद्र की ओर से समुचित धारा बनाई जाए, इसलिए प्रचलित ढग का अविरत आदोलन चलाया है। हम सब इस आदोलन के क्या केवल प्रेक्षक ही बने रहेंगे अपना कर्तव्य निभाने के लिए सामने आएँगे? यही प्रश्न आज हमारे सम्मुख खडा हुआ है। शासन ने जो नीति अपनाई है, उसके अनुसार तो यही दिखता है कि हमारे पुण्यात्मा साधुओं को उनके मूल्यवान प्राण गँवाने पड़ेंगे। और हमारे शासक हिंदुओं की भावनाओं को नगण्य मानने के तथा उमडती हुई राष्ट्रभावना को कुचलने के महत्कृत्य के पारितोषिक के रूप में अपनी टोपी पर एक और तुर्रा लगा सकेंगे।

यह सब केंद्र के अधिकार में नहीं है और प्रातीय शासन को इस विषय में योग्य धाराएँ पारित करनी चाहिए। ये तर्क इतनी बार रखे गए हैं कि उन्हें सुनते-सुनते कान भरने लगे हैं। ये सब टालने के तरीके हैं। ऐसा लगता है कि हमारे नेताओं के मन में कोई स्पष्ट धारणा विद्यमान नहीं हैं।

एक तरफ तो वे कहेंगे कि इसके लिए धारा पारित करने के लिए हम प्रातीय शासन को समझाने मनाने का प्रयत्न करेंगे और दूसरी तरफ पुराने मैसूर में जहाँ गोवश वध का पूर्ण निषेध था, वहाँ का वह निषेध सेना की सुविधा के लिए हटाया जाए– ऐसा वे मैसूर राज्य से अनुरोध करते हैं। सन् १८५७ के उद्रेक के बाद अग्रेजों ने सशस्त्र सेनातर्गत हिंदू तथा मुसलमानों की भावनाओं का मान रखने के लिए सेना में गोमास या शूकर-मास का उपयोग बद कर दिया था। ऐसा दिखता है कि सेना को गोमास खाने की छूट देकर प्रतिगामी पग उठाने का सरकार ने निश्चय कर लिया है। शायद शूकर-मास अभी शुरू नहीं किया गया। कम से कम लदन स्थित भारतीय दूतावास के बारे में यह बताया जाता है कि वहाँ गोमास तो परोसा जाता है, परतु शूकर-मास पूर्णत निषिद्ध है।

इस परिस्थिति में हम सामान्यजनों को क्या करना चाहिए? हम तो सर्वसाधारण व्यक्ति हैं। अत अपने आदरणीय सतों का सोत्साह अनुकरण कर अनिश्चित काल के लिए उपवास करते रहना तो हमारी क्षमता से परे

है। दुर्दैव से हमारी सरकार को गुडागर्दी और हिसा की एक ही भाषा समझ में आती है। उसी के उपयोग से वह झुकती है, परतु देशभक्त एव सभ्य नागरिक होने के नाते हम उन बातों को नहीं कर सकते। सरकार को आतकित करते हुए उसे झुकने के लिए बाध्य करने के निचले स्तर पर हम नहीं जा सकते, क्योंकि हम मानते हैं कि इसमें सरकार की कुप्रतिष्ठा होगी और यह सरकार हमारी निजी है। फिर हम क्या कर सकते हैं?

आज की विद्यमान रचना के अनुसार अपनी माँगें मनवाने के लिए, सरकार पर दबाव डालने के लिए तथा सरकार के लोगों में परिवर्तन लाने के लिए प्रदर्शन और आदोलन सर्वमान्य उपाय दिख पडते हैं। परतु और भी एक बडा सभ्य मार्ग है। वह जगन्मान्य है। वह है मतदान मजूषा। उसके द्वारा नीति-निर्धारक सरकार के प्रति अपना अनुकूल या प्रतिकूल मत बताना। शीघ्र ही निर्वाचन होनेवाला है। उसके द्वारा जनता को पुनरपि यह एक सुअवसर प्राप्त हो रहा है। यद्यपि अप्रैल १९६६ में जब साधुओं के और अन्य पुण्यवान महात्माओं के नेतृत्व में गोवश हत्या बदी के लिए देशव्यापी विधान बने, इसलिए प्रारभ किए गए इस आदोलन के सन्मुख कोई भी निर्वाचन का लक्ष्य नहीं था। यद्यपि मुझे स्वय के नाते और राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ के प्रतिनिधि के नाते राजनीति में रस नहीं है और आने वाले निर्वाचनों से मेरा कोई भी रिश्ता नहीं है, फिर भी मैं अपने सुयोग्य देशबधुओं का आह्वान करूँगा कि वे अपने मताधिकार का उपयोग बुद्धिमानी तथा सारासार विवेक के साथ करें और अपनी पवित्र भूमि के मस्तक पर प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष रीति से जिन्होंने यह कलक लगाया है, उन्हे अपना मत न दें।

परतु आप किसी के भी बहकावे में न आएँ, क्योंकि सामान्यत चुनावों के समय वचन पूरे करने के लिए नहीं दिए जाते। प्रत्येक मतदाता को चाहिए कि वह हर व्यक्ति और पक्ष का पूर्वकालीन कार्य और वर्तमानकालीन आश्वासनों का शात चित्त से और समझदारी के साथ विश्लेषण कर अपने अधिकार का न्यायोचित उपयोग करे। गोवश को पूर्ण सरक्षण प्राप्त हो और हमें सुखकारी स्वतत्रता प्राप्त हो जाए। गत कुछ शतकों से पडी हुई दास्यशृखलाएँ टूट जाएँ और अपना पूज्य राष्ट्र निष्कलक प्रभा व वैभव से चमकने लगे, यह हमें देखना चाहिए।

ॐॐॐ

२५ बगाल के बाढ पीडित

(२३ अक्तूबर १९६८ को दिया गया वक्तव्य)

उत्तर बगाल में आई अभूतपूर्व बाढ व भूस्खलन से हुए विनाश से सारा देश परिचित है। इसके परिणामस्वरूप जीवन और सपति की विशालस्तर पर हानि हुई है। सभी देशवासियों को पीडित लोगों की हर सभव सहायता करने की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय स्वयसेवक सघ ने सहायता कार्य प्रारभ भी कर दिया है तथा इस हेतु 'उत्तर वग बन्यर्ता सेवा समिति' (Uttar Banga Banyarta Seva Samiti) की स्थापना की है। इस दायित्व की पूर्ति में हाथ बँटाने के लिए अच्छी सख्या में सज्जनवृद भी आगे आए हैं। प्रभावित लोगों में बॉटने के लिए भोजन, वस्त्र, दवाइयॉ तथा अन्य आवश्यक सामग्री की समिति को आवश्यकता है।

विशाल हृदयी देशवासियों से मेरा विनम्र निवेदन है कि बगाल के अपने भाइयों को इस आपदा से मुक्त करने के लिए समिति का बढ चढ कर सहयोग करें।

ॐ ॐ ॐ

२६ प्रकृति का प्रकोप अपना दायित्व

(अक्तूबर १९६८ को दिया गया वक्तव्य)

इस वर्ष प्रिय भारत पर प्रकृति का प्रकोप अनेक क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार से हुआ अनुभव में आता है। उत्तर बगाल में बिहार में भीषण बाढ से हाहाकार मच गया है, तो इधर अपने राजस्थान में अवर्षण के कारण अकाल ने अत्युग्र रूप धारण कर लिया हे। मनुष्यों को अन्न-जल की समस्या का सामना करना पड रहा है ओर मनुष्य के साथ ही मूक पशु, अपने देश के अत्यत महत्त्व और गौरव के गोधन का चारे-पानी के अभाव में समाप्त होने का भय उपस्थित हो गया हे। मनुष्य तो कहीं न कहीं जाकर उदार लोगों की तथा शासन की सहायता से अपने प्राण जेसे-तैसे बचा लेगा, परतु इस मूक गोवश का प्रश्न वे स्वय सुलझा नहीं सकेंगे। इनके पालक भी कुछ नहीं कर सकेंगे।

इस स्थिति में प्रात के सब व्यक्तियों, सस्थाओं और शासन को एक दूसरे पर व्यग करने की दुर्नीति छोडकर हिल-मिलकर इस समस्या का सामना करने की आवश्यकता हे। अभी तक देश के गो भक्तों ने गौशालाओं में, अन्यान्य गोभक्त सस्थाओं ने इस दिशा में अभिनदनीय काम किया हे और कर रहे हैं।

किंतु समस्या इतनी वडी है कि इससे भी अधिक विशाल प्रयास की आवश्यकता है। शासकीय स्तर पर, देशभर के वनों में सुरक्षित घास मँगाकर अत्यल्प मूल्य पर या अधिक अच्छा हो तो विना मूल्य उसका पशुओं के पोषण के लिए विनियोग करना। शासन तथा उदार हृदय श्रेष्ठों ने सूखाग्रस्त क्षेत्रों में अतिशीघ्र नलकूप खुदवाने के लिए पर्याप्त धन राशि अर्पित करना। जनसाधारण को अपने ऊपर भी भार हे– इसका बोध जागृत रखकर सब प्रकार से धन, अनाज, वस्त्र, औषधि तथा प्रत्यक्ष शारीरिक श्रम के द्वारा सहयोग देना त्वरित प्रारभ करना चाहिए। मेरी अपने प्रात के तथा देशभर के महानुभावों से, सामाजिक सस्थाओं से और शासन से साग्रह प्रार्थना है कि समस्या की गभीरता को ध्यान में रखकर तुरत इस दिशा में उचित पग उठाएँ। यह कभी न भूलें कि यह प्रश्न क्षेत्रीय नहीं, अपितु सपूर्ण राष्ट्र का हे।

अपने सव सहयोगी बधुओं से मेरी विशेष रूप से प्रार्थना हे कि पूरी शक्ति, समय लगाकर सहायता कार्य में नि स्वार्थ सेवा भाव से जुटें और अन्य सभी प्रयत्नों में सहयोग दें।

२७ लोकतत्र की हत्या सावधान

(१६ जुलाई १६७०)

(सविधान में सशोधन कर लोकतत्र की हत्या करने वाले अधिकार प्राप्त करने के प्रयासों से जनता तथा लोक प्रतिनिधियों को सचेत रहने हेतु श्री गुरुजी द्वारा दिया गया वक्तव्य)

वृत्त-पत्रों मे प्रकाशित समाचार एव प्रधानमत्री द्वारा श्रीनगर में दिए गए भाषण से यह स्पष्ट हो गया है कि इदिरा सरकार, अवैध गतिविधियों के विरुद्ध अधिनियम तथा भारतीय दडसहिता सशोधन विधेयक इसी

अधिवेशन में पारित करवाकर विरोधियों को नामशेष करने हेतु लोकतंत्र तथा नीति-विरोधी अपवित्र मनोरथ पूर्ण करने हेतु अन्यायपूर्ण कानूनों के माध्यम से अनियंत्रित शक्ति संचय का प्रयास करनेवाली है।

भारत को खंडित कर अलग राज्यों के पुनर्गठन का प्रचार तथा तत्सम विघातक गतिविधियों को नियंत्रित करने के समस्त अधिकार सरकार को प्राप्त करा देना– यही प्रचलित स्वरूप है, तथापि संविधान के उल्लंघन तथा इस देश से पृथक हो स्वतंत्र राज्यनिर्माण के खुल्लमखुल्ला प्रचार करनेवालों के खिलाफ आज तक कोइ भी कारवाई नहीं की गई।

अब इसी कानून में संशोधन कर देशांतर्गत राष्ट्रवादी शक्तियों का हनन करने हेतु इस कानून का उपयोग करने की इंदिरा सरकार की मंशा है, जो स्पष्ट रूप से सामंतशाही स्थापित करने का प्रयत्न है। यह स्पष्ट है सत्तारूढ दल का यह कदम राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रहार करने की कुबुद्धि से उठाया जा रहा है। 'नव-कांग्रेस' के दिल्ली के अधिवेशन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को बदनाम कर उसपर प्रतिबंध लगाने की माँग से लेकर दिल्ली में सामुदायिक व्यायाम पर प्रतिबंध लगाने तक सारे कदम उठाए गए हैं एवं सरकार द्वारा संघ पर लांछनास्पद शब्द-प्रयोग एवं गालियों की बौछार करने का योजनाबद्ध दुष्कृत्य किया गया है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ जैसी देशभक्त शक्ति को नष्ट करने हेतु ही यह जाल बुना जा रहा है, यह स्पष्ट हो गया है।

जनता में चारित्र्य एवं देशभक्ति निर्माण करने का जो कार्य राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ विगत ४५ वर्षो से कर रहा है, वह सबको भली-भाँति विदित है। राष्ट्रोत्थान के कार्य में संघ हमेशा सहयोग देता आया है। राष्ट्रीय सुरक्षा एवं स्थैर्य हेतु एक अनुशासित शक्ति-निर्माण में संघ का योगदान उल्लेखनीय है। संघ विरोधी दुष्प्रचार के बावजूद, जब-जब देश पर संकट गहराया, तब-तब स्वयंसेवक सारी कटुता को भुलाकर, सरकार से सहयोग करते रहे। पाकिस्तान एवं चीनी आक्रमण, अकाल, बाढ, भूकंप– ऐसी अनेक विपत्तियों के समय तथा अराजकता एवं अशांति के समय संघ का स्वयंसेवक अग्रणी रहा है। ऐसे समाजसमर्पित राष्ट्रव्यापी संगठन पर प्रहार करने का सरकार का मनोदय अत्यंत दुष्टतापूर्ण एवं घातक है। इससे देश का वातावरण विषाक्त होगा तथा कटुता बढेगी, जो देशहित में बाधक होगी। देश के अधिकांश वरिष्ठ पत्रकार, राजनेता तथा समाजसेवकों ने

सघ-विरोधी इस दुष्ट अभियान पर खेद व्यक्त किया है, यह मेरे लिए समाधान का विषय है। जनतत्र एव राष्ट्रीय एकता के प्रति उन्होंने दिखाई जागरूकता तथा स्पष्टता से जनसामान्य का मनोबल ऊँचा उठा है। कानून-सशोधन के नाम पर सरकार जो दुष्ट दॉव खेल रही है, उसे समझकर वे जनता को उचित मार्गदर्शन करने आगे आएँगे, इसमें मेरा दृढ विश्वास है।

मैं जनता के समक्ष यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि इस सशोधित विधेयक से मिलनेवाले अनिर्बध अधिकार ग्रहण करना तानाशाही की राह पर अग्रसर होने के समान हैं। जनता का प्रतिनिधित्व करनेवाले सासदों से भी मेरा आग्रहपूर्वक नम्र निवेदन है कि उन्होंने पक्ष-अभिनिवेश का त्याग कर देश का दूरगामी हित ध्यान में रखते हुए इस प्रश्न का सम्यक विचार करना चाहिए। बढती तानाशाही प्रवृत्ति के परिप्रेक्ष्य में इस प्रकार के अनियत्रित अधिकार सरकार के हाथों सौंपना आग में घी डालने के समान है। सत्तारूढ पार्टी के साथ मतभिन्नता रखनेवाले किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध अथवा सस्था के विरुद्ध इसका उपयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार ऐसे जनविरोधी कानून को सहायता प्रदान करना, उनकी लोकप्रियता के लिए बाधक होगा तथा जनता में उनकी छवि धूमिल होगी।

राष्ट्रभक्त शक्ति को कमजोर तथा विरोधक शक्ति को प्रोत्साहित करने का यह दुष्ट प्रयत्न सघ कदापि सहन नहीं करेगा। अत देश के जागृत नागरिक की हैसियत से सघ के स्वयसेवकों पर इस परिस्थिति में विशेष दायित्व आता है। लोकतत्र में ऐसे प्रश्नों का समाधान प्रबल जनमत के माध्यम से ही किया जाता है। अत लोकतत्र पर आनेवाले इस सकट के सबध में सघ स्वयसेवकों को विभिन्न कार्यक्रमों एव उपक्रमों के माध्यम से जनमानस को जागृत करना चाहिए। इस कानून के पीछे छिपी दुष्ट बुद्धि एव कुटिल योजना जनता को समझाना चाहिए। अपने क्षेत्र के जन प्रतिनिधियों के सम्मुख जनमत प्रदर्शित करना चाहिए।

अपने क्षेत्र से चुने गए सासदों को भी जनता की व्यापक प्रतिक्रिया सगठित निदर्शनों के माध्यम से अवगत कराना चाहिए, जिससे जनता के दबाव के कारण जनमत का आदर करते हुए यथासमय वे सरकार को इस प्रकार के अनियत्रित अधिकार प्राप्त करानेवाले इस विधेयक का विरोधकर लोकतत्र की रक्षा करने में सफल हो सकें।

लोकतन्त्र में अभिप्रेत लोकस्वतन्त्रता अविभाज्य है। किसी भी व्यक्ति अथवा संस्था के न्याय्य अधिकार छीनने हेतु किए गए प्रयास कालांतर में सारी जनता के अधिकारों को छीन सकते हैं। अतः संसद के इस सत्र में अनियन्त्रित सत्ताधारी सरकार अपनी तानाशाही ताकत बढ़ाने हेतु जब यह विधेयक प्रस्तुत करेगी, तब इन जनप्रतिनिधियों की राष्ट्रनिष्ठा एवं लोकतन्त्र की कसौटी पर सच्ची परख होगी। उस समय जनता की स्वतन्त्रता के सच्चे समर्थक कौन तथा एकाधिकार दमनशाही एवं तानाशाही की ओर ले जानेवाले विदेशी षड्यन्त्र के समर्थक कौन– यह स्पष्ट हो जाएगा।

सब देशभक्त लोक-प्रतिनिधि एवं नागरिक, देश के लोकतन्त्र एवं राष्ट्रीय अस्तित्व के रक्षण हेतु सरकार की इस प्रकार की सारी तानाशाही कार्यवाहियों का विरोध करेंगे– ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।

ॐ ॐ ॐ

हम अधिक से अधिक भौतिक संपत्ति का अर्जन करें जिससे कि समाज के रूप में जो ईश्वर है उसकी सेवा यथासंभव श्रेष्ठ रीति से कर सकें। और उस सम्पूर्ण सम्पत्ति में से हमें केवल उतना ही अपने लिए उपभोग में लाना चाहिए जितने के बिना हमारी सेवा की क्षमता में रुकावट आती हो। इससे अधिक पर अधिकार जताना या अपने उपयोग में लाना निश्चय ही समाज की चोरी का कार्य है।

– श्री गुरुजी

ि ि ि

खड ७ पत्राचार

सतवृद, विदेशस्थ बधु, नेतागण, अन्य मतानुयायी, माता, भगिनि, प्रबुद्ध जन तथा सामाजिक सस्थाओ के कार्यकर्ताओ को लिखे पत्र।

खड ८ पत्र सवाद

स्वयसेवको व कार्यकर्ताओ को लिखे पत्र।

खड ९ भेटवार्ता

प्रश्नोत्तर, वार्तालाप, प्रमुख लोगो से वार्तालाप। पत्रकारो के सम्मुख भाषण। महत्त्वपूर्ण भेट तथा अनोपचारिक चर्चाएँ।

खड १० सघर्ष के प्रवाह मे

प्रतिबध के समय सरकार से हुआ पत्राचार। उस समय दिये गए वक्तव्य। आभार प्रदर्शन। बाद के अभिनदन समारोह। भारत–चीन व भारत–पाकिस्तान युद्ध के समय की जनसभाएँ, बैठके, शिविर, पत्रकार वार्ता तथा वक्तव्य।

खड ११ चितन सुधा

सपादित विचार नवनीत

खड १२ स्मरणाजलि

श्री गुरुजी के बारे मे महत्त्वपूर्ण व्यक्तियो, ससद व विधानसभा तथा समाचार–पत्रो द्वारा श्रद्धाजलि।